IMPACT FACTOR 7.012

Year 16 (02) Vol. XXXI
August 2025

ISSN : 0976-8149
UGC List No. 48216
I.S.O. 9001-2015

Manglam

Half Yearly Journal of Humanities & Social Sciences

मङ्गलम्

मानविकी एवं समाज विज्ञान की अर्द्धवार्षिक शोध-पत्रिका

A Peer Reviewed 'Refereed' Journal

Editor
Dr. Dinkar Tripathi

Manglam Sewa Samiti, Prayagraj (U.P.) India
(Regd. Under Society Registration Act 21, 1860)

सम्पादक :
डॉ० दिनकर त्रिपाठी
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, स्नातकोत्तर राजनीति विज्ञान विभाग
फीरोज़ गाँधी कॉलेज, रायबरेली, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ (उ.प्र.) भारत
1304/A आचार्य द्विवेदी नगर, जेल रोड, रायबरेली–229001 (उ.प्र.) भारत
मो० : 91-7398180008
Email : drdinkartripathi@gmail.com

सह सम्पादक :
डॉ० ऋतेश त्रिपाठी
असिस्टेंट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग
सी.एम.पी. कॉलेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज (उ.प्र.) भारत
शिवम् अपार्टमेन्ट, नया ममफोर्डगंज, प्रयागराज–211002 (उ.प्र.) भारत
मो० : 91-9532006658
Email : tripathiritesh82@gmail.com

प्रकाशक :
मङ्गलम् सेवा समिति
मो० : 91-9044666672
Website : www.manglamallahabad.com
Email : manglamjournal01@gmail.com

तकनीकि सहयोग :
डॉ० (श्रीमती) वंदना त्रिपाठी
मो० : 91-7007501125
Email : tripathivandana01@gmail.com

आवृत्ति : **अर्द्धवार्षिक**
प्रथम अंक : फरवरी
द्वितीय अंक : अगस्त

मूल्य :
विदेश में : **$13**
देश में : **₹1000**

मङ्गलम् (अर्द्धवार्षिक द्विभाषीय) शोध पत्रिका में प्रकाशित सामग्री में दृष्टि, विचार और अभिमत लेखकों के अपने हैं, सम्पादक के नहीं। इनमें सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। अतः पत्रिका के सम्पादक एवं प्रकाशक पर इसकी कोई जिम्मेदारी नहीं है। विवाद माननीय न्यायालय प्रयागराज में ही विचारणीय होंगे।

PATRONS

- **Prof. P.C. Trivedi**, Ex. Vice Chancellor, Jay Narayan Vyas University, Jodhpur (Rajasthan)
- **Prof. Manoj Dixit**, Vice Chancellor, Maharaja Ganga Singh University, Bikaner (Rajasthan)
- **Prof. D.P. Tiwari**, Vice Chancellor, Jai Minesh Adivasi University, Kota, (Rajasthan)
- **Prof. Sri Prakash Mani Tripathi**, Ex-Vice Chancellor, Indira Gandhi National Tribal University Amarkantak (M.P.)
- **Prof. Sanjeev Kumar Sharma**, Ex. Vice Chancellor, Mahatma Gandhi Central, University of Bihar, Motihari (Bihar)
- **Prof. Suresh Chandra Pandey**, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)
- **Prof. Ram Hit Tripathi**, Ex. Principal, Pt. Mahadev Shukla Krishak Post Graduate College Gaur, Basti (U.P.)
- **Prof. R.N. Tripathi**, Ex-Member, Uttar Pradesh Public Service, Commission, Prayagraj (U.P.)
- **Prof. Umesh Prasad Singh**, Banaras Hindu University, Varanasi (U.P.)
- **Prof. Ramjee Tiwari**, University of Mumbai, Mumbai (Maharashtra)
- **Prof. A.K. Kaul**, Banaras Hindu University, Varanasi (U.P.)
- **Prof. A.K. Srivastav**, University of Lucknow, Lucknow (U.P.)

EDITORIAL BOARD

- **Prof. Rama Shankar Mishra**, University of Lucknow, Lucknow (U.P.)
- **Prof. Rajendra Singh Chauhan**, Himachal Pradesh University Shimla (Himachal Pradesh)
- **Prof. Anand Kumar Srivastav**, Ex. Principal, CMP College, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)
- **Dr. Diwakar Tripathi**, Dr. Rammanohar Lohia Awadh University, Ayodhya (U.P.)
- **Dr. Ritesh Tripathi**, C.M.P. Degree College, University of Allahabad, Prayagraj (U.P.)
- **Prof. Noor Mohammad**, University of Delhi, Delhi

- **Prof. R.K. Mishra**, University of Lucknow. Lucknow (U.P.)
- **Prof. Arun Kumar Singh**, DAV College, Maharaja Suhel Dev University, Azamgarh (U.P.)
- **Dr. Bharti Sehta**, Babasaheb Bhimrao Ambedkar Bihar University, Bihar
- **Prof. Geeta Tripathi**, Ganpat Sahai P.G. College, Sultanpur, Dr. Rammanohar Lohia Awadh University, Ayodhya (U.P.)
- **Prof. Lokesh Tripathi**, Baba Raghav Das PG College Deoria, Deen Dayal Upadhyay Gorakhpur University, Gorakhpur (U.P.)
- **Dr. Bhasker Shukla**, Hemwati Nandan Bahuguna Government P.G. College Naini, PRS University, Prayagraj (U.P.)
- **Dr. Vandana Tripathi**, Basic Education Board, Raebareli (U.P.)

ADVISORY BOARD

- **Prof. Anand Prakash Tripathi,** Dr. Hari Singh Gour University, Sagar (Madhya Pradesh)
- **Prof. K.K. Pandey**, Ex. Principal, DAV College Lucknow (U.P.)
- **Prof. R.S. Aadha**, Jai Narayan Vyas University, Jodhpur, (Rajasthan)
- **Prof. Nagendra Pratap Chauhan**, B.R.A. Bihar University, Muzzaferpur, (Bihar)
- **Prof. Anupam Sharma**, Dr. Hari Singh Gaur University, Sagar, (M.P.)
- **Prof. Ravindra Kumar Sharma**, Kurukshetra University, Haryana
- **Prof. Mamta Mani Tripathi**, Udit Narayan P.G. College, Kushinagar, Deen Dayal Upadhyay Gorakhpur University, Gorakhpur (U.P.)
- **Dr. Meera Pal**, Uttar Pradesh Rajshree Tandon Open University, Prayagraj (U.P.)
- **Dr. Shyam Prasad Saidal**, Bal Kumari Mahavidyalaya, Narayangarh, Chitwan, (Nepal)
- **Dr. Digvijay Nath Rai**, Agra College, Dr. Bhimrao Ambedkar University, Agra (U.P.)
- **Dr. Joydeb Garal**, University of Chittagong (Bangladesh)
- **Dr. Sanjay M. Wagh**, S. Gholap Arts Science & G. Pawar Commerce College, Shivle, University of Mumbai, Mumbai (Maharashtra)
- **Dr. Mohd. Younes Bhat**, Government Degree College Kulgam, University of Jammu (J & K)
- **Dr. Sheelam Bharti**, Mata Sundari College for Women University of Delhi, Delhi

सम्पादकीय

वैदिक अवधारणा में सृष्टि की आदि अवस्था में जल अभावात्मक रूप में विद्यमान था। गहन अन्धकार का अस्तित्व भी रहा, किन्तु रात दिन का ज्ञापक सूर्यचन्द्रादि का कोई भी अस्तित्व नहीं था। जल ही सृष्टि क्रिया में सहायक बना। इसी जल की महिमा के कारण वर्तमान सृष्टि को जल सृष्टि के रूप में स्वीकारा जा सकता है। जल ही प्राणियों का जीवन है। जल अमर तत्त्व स्वरूप है। इसका रूपान्तर वाष्प, तुहिन एवं पानी के रूप में पृथ्वी पर सर्वत्र होता रहता है। इसमें न्यूनाधिक्य भाव का अभाव स्वीकारणीय है। जो सृष्टिक्रम में सातत्य प्राप्त है। आर्ष मनीषा के तपोनिष्ठ चिंतनों में जल देवता के रूप वन्दनीय रहा है। नदियों के जल को निरन्तर प्रवाहमान रहने के लिए देवता निरन्तर प्रयासशील रहे। वृत्तासुर और इन्द्र देवता का संग्राम नदियों के जल के सतत प्रवाहमय बने रहने के लिए हुआ था। वृत्तासुर ने जब सारी नदियों की जलधाराओं को पर्वत का रूप धारण कर रोक लिया गया था, तब जीव जगत जलाभाव से सन्तप्त हो गया। नदी के जीव मृत प्राय होने लगे थे। जल संकट से उबारने के लिए ऋषियों ने इन्द्र देवता को यज्ञानुष्ठानों में सोमाहुतियों से प्रसन्न किया। सात नाथों वाला वृषभ रूप धारण कर इन्द्र देव ने नदियों के रूकी हुई जलराशि को बहने के लिए पर्वतों का अपनी सींगो से भेदन कर प्रवर्तित किया था। तब से अब तक नदियों की जलधारायें अबाध गति से प्रवाहित हो रही हैं। अतिवृष्टि, अनावृष्टि, वज्रपात आदि आपदाओं का निरसन ऋषियों द्वारा की गई यजन क्रियाओं, पूजनों और देवत्वारोंपण पूर्वक अर्चनाओं से सम्भव होता रहा। इसी प्रक्रिया से अनेकशः कांक्षाओं की पूर्ति हेतु बहुशः देवताओं और देवियों का संकल्पन भलीभूत होता गया। परिणामतः ''एकं सद्विप्राः बहुधा वदन्ति'' की घोषणा द्वारा ऋग्वैदिक ऋषि ने एकेश्वरवाद पदार्थ देवता के रूप में पूज्य हुए हैं। जिसमें समुद्र नदी एवं कुएँ के जल को भी देवत्व प्राप्त हुआ है। ऋषि की प्रार्थना में समुद्र को अपनी मर्यादा (सीमा) में रहने, पर्वतों को स्थिर रहने, नदियों को निरन्तर मातृवत जल से जीवन प्रदान करते रहने की सतत कामनायें की गई हैं। सात नदियों (सप्त सिन्धून) की महिमा से भारत वर्ष मण्डित रहा है। सप्त सैन्धव प्रदेश आर्यों की स्थिति का संज्ञान देता है। समग्र पृथ्वी तल पर तीन भाग जल ही की अवस्थिति विद्यमान है। जलवायु के सन्तुलन और सन्धारण को मानवीय दुर्दोहनों ने दुष्प्रभावित

कर दिया है। परिणामतः वर्तमान में अतिवृष्टि, बादल फटना, वज्रपात होना, समुद्र से सुनामी जैसी अनेक आपदायें संसार को विह्वल कर दे रही हैं। समय की अब आवश्यकता है कि वैदिक अथवा सनातन परम्परा में विहित आनुष्ठानिक व्यवस्थाओं और अवधारणाओं को मानव समाज अपनाकर प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित कर आपदा से मुक्ति प्राप्ति का उपक्रम करे। जिससे विश्व कल्याण सम्भव बन सकता है।

मंगलम रिसर्च जर्नल का यह अंक वर्ष 16 (02) Vol- XXXI, Aug.-2025 सुधी अन्वेषकों की स्वोपज्ञता में अवधारित शोधलेखों को प्रस्तुत करता हुआ विद्वज्जनों से सुझाव हेतु सादर आग्रह करता है।

दिनांक : 30.08.2025

स्थान : प्रयागराज

(डॉ० दिनकर त्रिपाठी)
सम्पादक

विषयानुक्रम

क्र.सं.	शोधपत्र/शोधार्थी	पृष्ठ
1.	**Traditional Ecological Knowledge and Indigenous Communities: Lessons for Viksit Bharat 2047** *- Prof. (Dr.) R.N. Tripathi*	1-14
2.	**Gratitude and Gender: A Comparative Study** *- Dr. Vinay Kumar Singh*	15-21
3.	**The Concept of E-Governance and the Role of NITI Aayog: An Evaluative Study** *- Subhash Kumar Thakur, Dr. Bharti Sehta*	22-37
4.	**Hashtags and Hostilities: Twitter's Role in the India-Pakistan Conflict and the 2025 Pahalgam Attack** *- Simpal Tripathi, Prof. Mamta Mani Tripathi*	38-44
5.	**Bio-Physical Resource Base Assessment: The Case of Chitrakoot District In Uttar Pradesh** *- Birendra Kumar Yadav, Dr. Uttara Singh*	45-54
6.	**Bio Breaking Barriers: A Comprehensive Analysis of Gender Integration in India's National Cadet Corps and the United States' Junior Reserve Officers' Training Corps** *- Dr. Durgesh Kumar Singh, Rahul Yadav, Harshit Singh*	55-67
7.	वेद में वर्णित वानस्पतिक औषधियाँ *- प्रो० आशा गुप्ता*	68-73
8.	भारतीय शिक्षा प्रणाली में गुरुकुल परम्परा का योगदान और पुनर्पाठ *- प्रो० अरुण कुमार सिंह*	74-80
9.	डॉ० बी०आर० अंबेडकर के सामाजिक न्याय संबंधी विचारों की अवधारणा *- डॉ० अंशु पांडेय*	81-86
10.	प्राचीन भारतीय राज चिन्तकों दृष्टि में दण्डनीति *- डॉ० दिनकर त्रिपाठी*	87-91
11.	'बम' का सहारा : आधुनिक शिक्षा जगत की समस्याओं का चित्रण *- डॉ. नियति कल्प*	92-99

12. गहरे अपनत्व बोध की कविताएँ और चेतन कश्यप 100-111

- डॉ. किरण कुमारी

13. यज्ञ और पर्यावरण संरक्षण 112-116

- डॉ० नीतू सिंह

14. भक्तियोग का माहात्म्य 117-124

- डॉ० भास्कर प्रसाद द्विवेदी

15. जनवादी चेतना और आत्मान्वेषण की अभिव्यक्ति मुक्तिबोध की लंबी कविता "अंधेरे में" 125-132

- डॉ० संतोष कुमार पाण्डेय, जय राज पाण्डेय

16. ट्रावणकोर और कोचीन राज्य का भारत संघ में विलय 133-141

- डॉ० दिवाकर त्रिपाठी, विद्याधर मिश्र

17. जीवन की चुनौतियों के बीच डॉ० रघुवंश का समीक्षा–कर्म 142-152

- डॉ० अभिषेक कुमार मिश्र

18. परशुरामविक्रमम् महाकाव्य में मानवीय चेतना एवं दार्शनिक चिन्तन 153-160

- मोहन लाल

Manglam - Year 16(02) Vol. XXXI Aug. 2025
ISSN-0976-8149, PP. 01-14

Traditional Ecological Knowledge and Indigenous Communities: Lessons for Viksit Bharat 2047

Prof. (Dr.) R.N. Tripathi *

Abstract

The vision of Viksit Bharat 2047 envisions India as a developed nation that achieves not only economic growth but also social inclusion and environmental sustainability. In this journey, the traditional ecological knowledge (TEK) preserved by indigenous communities plays a crucial role. TEK consists of local practices, beliefs, and values that have evolved over generations through close interaction with the environment. Communities such as the Bishnoi of Rajasthan, the Apatani of Arunachal Pradesh, the Khasi and Garo of Meghalaya, and the Dongria Kondh of Odisha offer remarkable examples of how this knowledge is applied in everyday life. From conserving biodiversity and managing water resources to promoting sustainable agriculture, these communities demonstrate an understanding of ecological balance that modern development often overlooks. Yet, this knowledge is under threat. Globalization, industrialization, and cultural assimilation are eroding traditional practices, making it imperative to safeguard and integrate them into contemporary policymaking. Sociological perspectives like functionalism, conflict theory, and Berger and Luckmann's idea of the social construction of reality, help us understand both the value of TEK and the social dynamics affecting its survival. Ultimately, building a sustainable Viksit Bharat 2047 requires seeing indigenous communities not as barriers to development but as active partners in environmental governance. By learning from their wisdom, India can move towards a future that is both prosperous and ecologically resilient.

Keywords: *Viksit Bharat, Social Inclusion, Environmental Sustainability, Traditional ecological knowledge, Biodiversity.*

Introduction

As India approaches its centennial milestone of independence, the vision of Viksit Bharat 2047 aspires to make the nation developed, globally respected, and environmentally sustainable. Central to this vision is the understanding that economic growth must go hand in hand with social equity and ecological stewardship. While

* *Department of Sociology, Banaras Hindu University, Varanasi*

industrialization, urban expansion, and globalization have fueled rapid development, they have also intensified ecological challenges such as deforestation, biodiversity loss, pollution, and climate change. Addressing these challenges requires looking beyond conventional development models and embracing knowledge systems that prioritize long-term sustainability.

Traditional Ecological Knowledge (TEK) offers one such path. Developed over centuries through the close interaction of indigenous communities with their natural surroundings, TEK combines ecological practices with ethical, spiritual, and communal values (Berkes, 2012). It emphasizes a reciprocal relationship with nature, where cultural norms and rituals guide resource use and prevent overexploitation. Unlike modern scientific approaches, which often isolate ecological processes, TEK adopts a relational and holistic perspective, making it especially valuable for sustainable resource management.

In India, communities like the Bishnois of Rajasthan, the Apatani of Arunachal Pradesh, and the Khasi and Garo of Meghalaya provide inspiring examples of TEK in action. From protecting trees and wildlife to practicing integrated agriculture and conserving sacred groves, these communities have historically maintained ecological balance (Gadgil & Guha, 1995). Such practices are not merely ecological strategies; they are embedded in communal life, identity, and moral responsibility toward nature, showing that environmental sustainability is deeply rooted in India's indigenous heritage.

Yet, TEK has often been overlooked in mainstream development, which favors technocratic, market-driven solutions (Agrawal, 1995). Industrial projects, mining, and displacement have disrupted traditional lifestyles, weakening the transmission of ecological wisdom. This marginalization reflects broader power dynamics where modern science is privileged, while indigenous knowledge is frequently dismissed as "primitive" or "unscientific."

For Viksit Bharat 2047, integrating TEK into policy and governance frameworks offers an opportunity to create locally informed, community-driven, and sustainable development models. Recognizing indigenous knowledge challenges anthropocentric development approaches and promotes ecological citizenship, intergenerational justice, and cultural pluralism.

This paper explores the sociological significance of TEK in shaping sustainable futures for India. It asks: What lessons can indigenous communities provide for environmental preservation in Viksit Bharat 2047? Through case studies, sociological theory, and policy analysis, it argues that indigenous communities must be seen as active partners in environmental governance. Doing so ensures that India's journey toward development is inclusive, culturally grounded, and environmentally just.

Understanding Traditional Ecological Knowledge (TEK):

Traditional Ecological Knowledge (TEK) refers to the cumulative body of knowledge, practices, and beliefs that evolve by adaptive processes and are handed down through generations by cultural transmission (Berkes, 2012). It represents a holistic understanding of the interrelationships among living beings, their environments, and the spiritual dimensions of life. Unlike the modern scientific paradigm, which often emphasizes universal principles and reductionist analysis, TEK is highly contextual, rooted in specific ecosystems, and informed by long-term human–environment interactions (Gadgil, Berkes & Folke, 1993).

TEK is not simply a technical resource-management system; it integrates ecological knowledge with social organization, cultural values, and spiritual practices. For instance, rules concerning the sacredness of certain trees, taboos on hunting during breeding seasons, or rituals linked to planting cycles are not arbitrary customs but embedded ecological regulations that ensure the renewal of resources (Toledo, 2001). This intertwining of culture and ecology reflects what Gadgil and Guha (1995) describe as the "moral ecology" of indigenous communities, where the natural world is viewed as a shared community rather than a resource to be exploited.

Traditional Ecological Knowledge (TEK) is characterized by several key features that distinguish it from conventional scientific approaches. First, it is holistic, integrating environmental, social, and spiritual dimensions, and treating ecosystems as interconnected wholes rather than isolated components (Berkes, 2012). Second, TEK is inherently community-based, with knowledge collectively held and governed through customary laws, social norms, and shared responsibilities, rather than being imposed externally. Third, it embodies adaptive management, evolving over time through

observation, experimentation, and practical experience across generations, allowing communities to respond effectively to ecological changes (Folke, Hahn, Olsson & Norberg, 2005). Finally, TEK relies on intergenerational transmission, with knowledge passed down orally through myths, stories, songs, rituals, and daily practices, ensuring both continuity and social legitimacy within the community (Agrawal, 1995). Together, these features make TEK a dynamic, context-sensitive system that fosters sustainable interaction between humans and their environment.

Sociologically, TEK can be seen as a form of socially constructed knowledge. Berger and Luckmann's (1966) theory of the social construction of reality helps us understand how indigenous communities collectively define, transmit, and legitimate ecological knowledge. Rituals, myths, and communal practices reinforce not only ecological wisdom but also community solidarity and identity. Moreover, TEK challenges the dominant narrative of "scientific rationality" by asserting alternative epistemologies that are experiential, relational, and embedded in place-based worldviews.

Globally, scholars have recognized TEK as vital for biodiversity conservation and climate resilience (Berkes, Colding & Folke, 2000). The United Nations Convention on Biological Diversity (CBD, 1992) also acknowledges the importance of respecting and integrating indigenous knowledge systems into conservation strategies. In India, this recognition is reflected in legal frameworks such as the Biological Diversity Act (2002) and the Scheduled Tribes and Other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Act (2006), which emphasize the role of local communities in sustainable environmental governance.

In this sense, TEK not only represents ecological wisdom but also embodies alternative models of development that are community-centered, equitable, and sustainable. By engaging with TEK, India can redefine progress beyond material growth and towards an ecologically just society envisioned under Viksit Bharat 2047.

Indigenous Communities and Ecological Practices in India:

India is home to more than 705 officially recognized Scheduled Tribes, many of whom maintain unique ecological

practices rooted in Traditional Ecological Knowledge (TEK) (Xaxa, 2008). These communities often inhabit ecologically fragile regions such as forests, mountains, and river basins, where their survival depends on maintaining a symbiotic relationship with the environment. Their practices illustrate how TEK is not only a cultural legacy but also a vital resource for sustainable futures under Viksit Bharat 2047.

1. Bishnoi of Rajasthan

The Bishnoi community is one of the earliest recorded environmentalist groups in the world. Founded by Guru Jambheshwar in the 15th century, the Bishnois follow 29 principles (bish–29, noi–principles), many of which directly emphasize environmental preservation, including the protection of trees and wildlife (Kothari, 1993). Members of the community famously sacrificed their lives in the Khejarli massacre (1730) to prevent trees from being cut down for the king's palace, an event that symbolizes deep ecological ethics. Today, Bishnois continue to safeguard blackbucks, gazelles, and khejri trees, integrating religion with conservation (Pathak, 2014).

2. Apatani Tribe of Arunachal Pradesh

The Apatani, inhabiting the Ziro Valley, are known for their highly sustainable agricultural practices. They practice integrated wet-rice cultivation combined with fish farming, which allows optimal use of land and water resources without external chemical inputs (Nimachow, Rawat, Dai & Angami, 2010). Their system relies on community management of irrigation and soil fertility through organic methods, demonstrating a model of circular economy that modern policies can learn from. The Apatani also have sacred groves and taboos that regulate hunting and tree-felling, thereby ensuring biodiversity conservation.

3. Khasi and Garo of Meghalaya

The Khasi and Garo tribes of Meghalaya maintain sacred groves, patches of virgin forest preserved due to spiritual and religious beliefs. Entry into these groves is strictly regulated, and extraction of resources is either restricted or entirely prohibited (Tiwari, Barik, Tripathi & Pandey, 1998). These groves harbor rare and endemic species of flora and fauna, functioning as natural gene banks and micro-climate regulators. For the Khasi and Garo, sacred groves are

both spiritual spaces and ecological reserves, illustrating how religion and ecology intertwine in indigenous worldviews.

4. Dongria Kondh of Odisha

The Dongria Kondh tribe, residing in the Niyamgiri Hills of Odisha, consider the hills sacred and central to their cosmology. Their livelihoods are tied to shifting cultivation, horticulture, and forest collection, all of which are carried out within strict cultural codes that prevent ecological degradation (Padel & Das, 2010). Their successful resistance against mining projects in Niyamgiri (2013), which threatened to destroy forests and displace the community, highlights the role of indigenous resistance in protecting ecological heritage.

5. Maldharis of Gujarat

The Maldhari pastoralist community, residing in the Gir forest, practices traditional livestock grazing that coexists with wildlife, including the Asiatic lion. Their pastoral nomadism is based on ecological knowledge of grassland cycles, water availability, and livestock health (Rao, 2006). Despite facing pressures of modernization, Maldharis demonstrate how indigenous pastoral systems maintain ecological balance in semi-arid regions.

Sociological Significance of Case Studies:

These case studies highlight the rich diversity of ecological knowledge systems across India and illustrate the multifaceted role of Traditional Ecological Knowledge (TEK) within communities. In each instance, TEK regulates human–nature relationships through religious beliefs, rituals, and taboos that guide sustainable resource use. It actively sustains biodiversity by promoting the protection of forests, water sources, and wildlife, ensuring ecological balance. TEK also strengthens community cohesion, as shared ecological responsibilities foster collective identity and social solidarity. Moreover, it often serves as a form of resistance to dominant development models, challenging extractive industries and state policies that threaten environmental sustainability. Together, these examples show how TEK integrates ecological stewardship with social and cultural life, offering valuable lessons for sustainable development.

From a sociological lens, these practices embody Durkheim's concept of collective conscience, where shared beliefs regulate ecological conduct, and Weber's notion of value rationality, where actions are guided by values beyond economic calculation. They also resonate with eco-feminist perspectives, since women in many of these communities (such as Khasi matrilineal society) play a central role in resource management.

Sociological Perspectives on Traditional Ecological Knowledge (TEK):

Traditional Ecological Knowledge (TEK) is not merely a set of practices but also a social phenomenon shaped by values, norms, and collective meanings. A sociological approach helps to analyze how TEK sustains ecological balance, reflects power dynamics, and embodies alternative ways of knowing. Multiple sociological theories provide insights into the relevance of TEK in contemporary India.

1. Functionalism

From a functionalist perspective, TEK plays a crucial role in maintaining the social and ecological equilibrium of indigenous communities. Emile Durkheim's concept of the collective conscience suggests that shared beliefs and rituals guide community behavior and ensure cohesion (Durkheim, 1912/1995). In the case of the Khasi sacred groves or Bishnoi taboos against killing animals, collective norms regulate human interaction with nature and prevent ecological overexploitation. TEK, therefore, functions as a regulatory system that ensures sustainability while reinforcing social solidarity.

2. Conflict Theory

Karl Marx's conflict theory emphasizes the struggle between dominant and marginalized groups over resources and power (Marx, 1977). TEK, when analyzed through this lens, reveals how indigenous knowledge is often suppressed or devalued by capitalist and state-led models of development. For example, mining projects in the Niyamgiri Hills threatened to displace the Dongria Kondh and destroy their sacred forests (Padel & Das, 2010). The resistance of these communities reflects a conflict over ecological resources, where TEK represents an alternative, community-based mode of production opposed to extractive capitalism. Thus, TEK is both an ecological and political resource, symbolizing resistance to environmental injustice.

3. Social Construction of Reality (Berger and Luckmann)

Peter Berger and Thomas Luckmann's (1966) theory of the social construction of reality highlights how knowledge systems are created, maintained, and legitimized through social interaction. TEK can be seen as a socially constructed body of knowledge, transmitted orally through myths, rituals, and practices. For example, the Apatani's rice–fish farming system is sustained not only by technical know-how but also by stories, festivals, and taboos that give it cultural legitimacy. This demonstrates that TEK is not just practical knowledge but a worldview rooted in shared meanings and continuously reproduced across generations.

4. Ecofeminism

Ecofeminist perspectives argue that the domination of women and the domination of nature are interconnected under patriarchal and capitalist systems (Shiva, 1988). In many indigenous communities, women play a central role in resource collection, seed preservation, and ecological rituals. For example, Khasi women in Meghalaya, within a matrilineal society, manage sacred groves and agricultural practices. Ecofeminism thus interprets TEK as a domain where women act as custodians of ecological wisdom, resisting both gender oppression and ecological destruction. This perspective positions TEK as a site of empowerment and ecological care.

5. Deep Ecology

Although not strictly a sociological school, deep ecology emphasizes the intrinsic value of all living beings and advocates for an ecocentric worldview (Naess, 1989). Many aspects of TEK align with deep ecology, as indigenous communities perceive humans as part of nature rather than masters over it. For instance, Bishnoi beliefs about protecting even fallen wood from green trees reflect an ecocentric ethic, where nature is valued beyond human utility.

These sociological perspectives show the multifaceted significance of Traditional Ecological Knowledge (TEK). From a functionalist viewpoint, TEK acts as a mechanism of social cohesion, fostering shared norms and collective responsibility within communities. Conflict theory highlights how TEK can serve as a form of resistance against exploitation and marginalization, asserting local control over resources in the face of dominant development pressures.

Social constructionism emphasizes that TEK is a culturally constructed and transmitted worldview, shaped by historical, social, and ecological contexts. Ecofeminist perspectives reveal the gendered dimensions of ecological care embedded in TEK, while deep ecology underscores its promotion of an ecocentric value system that prioritizes the well-being of the natural world. Together, these interpretations reinforce the idea that TEK is not relic knowledge but a dynamic, living system with enduring relevance for achieving sustainability in Viksit Bharat 2047.

Challenges to Traditional Ecological Knowledge (TEK) in Contemporary India:

Despite its ecological and cultural significance, Traditional Ecological Knowledge (TEK) faces multiple challenges in contemporary India, threatening its continuity and effectiveness. These challenges stem from globalization, industrialization, policy neglect, and socio-cultural transformations, which undermine indigenous practices and the communities that sustain them.

1. Globalization and Modernization

Globalization has brought rapid technological advancement, industrial expansion, and increased market integration, which often conflict with localized, context-specific knowledge systems (Agrawal, 1995). Indigenous communities are increasingly exposed to external economic pressures that encourage cash-crop farming, mining, and deforestation. Such interventions disrupt traditional practices like rotational agriculture, sacred grove preservation, and community-managed water systems. For example, Apatani rice–fish systems are threatened by the introduction of chemical fertilizers and modern irrigation infrastructure that prioritize yield over ecological balance (Nimachow et al., 2010).

2. Industrialization and Environmental Degradation

Industrial projects, mining, and large-scale infrastructure development frequently lead to displacement of indigenous communities and destruction of ecosystems. The Dongria Kondh of Odisha faced a direct threat to their sacred Niyamgiri Hills from bauxite mining proposals, which would have destroyed forests, wildlife, and cultural heritage (Padel & Das, 2010). Such industrial pressures not only disrupt TEK practices but also marginalize

indigenous voices in environmental decision-making. This reflects a structural conflict between capitalist development models and community-based ecological stewardship.

3. Policy Neglect and Inadequate Recognition

While India has enacted legal frameworks like the Biological Diversity Act (2002) and the Forest Rights Act (2006) to acknowledge indigenous knowledge, implementation gaps persist (Rao & Pant, 2014). Many local communities lack awareness or access to these policies, and state interventions often favor commercial exploitation over ecological sustainability. TEK remains largely undervalued in mainstream environmental governance, which continues to prioritize scientific and technocratic solutions.

4. Loss of Intergenerational Transmission

TEK is primarily transmitted orally through stories, rituals, and community practice (Berkes, 2012). Migration, education, and cultural assimilation are eroding these knowledge pathways. Younger generations increasingly adopt urban lifestyles, abandoning traditional livelihoods and weakening the intergenerational continuity of ecological practices. Sacred groves, water-conservation rituals, and customary agricultural practices risk becoming symbolic relics rather than living practices.

5. Cultural and Social Marginalization

TEK is deeply embedded in the cultural, spiritual, and social fabric of communities. However, dominant discourses often label these practices as primitive or unscientific (Agrawal, 1995). Marginalization of tribal communities in policy, education, and media reinforces the perception that TEK is irrelevant in the modern world, further threatening its survival.

These challenges highlight the urgent need for policy interventions, awareness programs, and participatory governance that value TEK. Protecting TEK is not only about conserving ecological practices but also about safeguarding cultural diversity, social cohesion, and environmental justice. For India to realize the vision of Viksit Bharat 2047, it is essential to address these challenges and ensure that TEK remains a vibrant, living knowledge system rather than a fading relic.

Lessons from Traditional Ecological Knowledge (TEK) for Viksit Bharat 2047:

Traditional Ecological Knowledge (TEK) provides a wealth of insights that are highly relevant for achieving the vision of Viksit Bharat 2047, which emphasizes sustainable development, ecological balance, and inclusive growth. Indigenous communities have managed ecosystems for centuries, offering practical, culturally embedded solutions that modern development strategies often overlook.

1. Community-Based Resource Management

One of the key lessons from TEK is the importance of collective stewardship of natural resources. Communities like the Bishnoi and Apatani manage forests, water systems, and agricultural lands through shared rules and communal responsibilities (Berkes, 2012; Gadgil & Guha, 1995). Modern policies can adopt participatory governance models, where local communities are involved in decision-making, monitoring, and enforcement of conservation practices. Such approaches enhance ecological resilience and ensure sustainable use of resources.

2. Biodiversity Conservation and Sacred Practices

Sacred groves, taboos, and ritual practices are cultural mechanisms that protect biodiversity. The Khasi and Garo sacred groves preserve endemic species and maintain micro-climates, demonstrating that cultural values can align with ecological objectives (Tiwari et al., 1998). Policymakers can incorporate these culturally grounded methods into national conservation programs, linking spiritual values with biodiversity protection.

3. Sustainable Agricultural Practices

TEK emphasizes low-input, resource-efficient, and adaptive agricultural methods. The Apatani's rice–fish farming, and shifting cultivation practices of the Dongria Kondh, exemplify sustainable land and water use (Nimachow et al., 2010; Padel & Das, 2010). Integrating these practices with modern agricultural research can improve productivity while minimizing ecological harm, supporting a green and sustainable agricultural sector envisioned for Viksit Bharat 2047.

4. Climate Adaptation and Resilience

Indigenous communities often possess intricate knowledge of local climate patterns, seasonal variations, and soil conditions. This localized climate knowledge helps them adapt to environmental fluctuations and maintain food and water security (Berkes, Colding & Folke, 2000). In the context of climate change, TEK offers adaptive strategies that can inform national climate resilience planning.

5. Promoting Ecological Citizenship

TEK fosters a sense of moral responsibility and ethical engagement with nature. Bishnoi and Apatani communities, for example, regard the protection of trees and wildlife as a collective duty rather than a legal obligation (Pathak, 2014). Incorporating such ethical frameworks into environmental education and public awareness campaigns can cultivate ecological citizenship among citizens, aligning with India's sustainability goals.

6. Integrating TEK into Policy Frameworks

Traditional Ecological Knowledge (TEK) can be effectively incorporated into national policies to strengthen sustainable development in India. For instance, it can inform biodiversity conservation efforts such as the National Biodiversity Action Plan (2008), guide sustainable agriculture initiatives like the Paramparagat Krishi Vikas Yojana, and enhance water management through community-managed watershed programs. Recognizing indigenous knowledge as legitimate enables a meaningful connection between local practices and national sustainability objectives. By doing so, India can ensure that the journey toward Viksit Bharat 2047 is ecologically sound, culturally sensitive, and socially inclusive, integrating traditional wisdom with contemporary development strategies.

Conclusion

Traditional Ecological Knowledge (TEK) of India's indigenous communities offers profound lessons for achieving the vision of Viksit Bharat 2047. As this paper has demonstrated, TEK is not merely a collection of local practices but a holistic knowledge system that integrates ecological sustainability, social cohesion, cultural identity, and ethical responsibility toward nature.

Communities such as the Bishnoi, Apatani, Khasi, Garo, Dongria Kondh, and Maldharis exemplify how human societies can live in harmony with the environment, preserving biodiversity, managing resources sustainably, and adapting to ecological changes over centuries. However, TEK faces significant challenges, including globalization, industrialization, policy neglect, and the erosion of intergenerational transmission. Preserving and integrating TEK into modern policy frameworks requires recognition of indigenous communities as active partners in environmental governance, not merely as subjects of development or conservation. Policies that combine scientific innovation with TEK-based practices can foster sustainable agriculture, biodiversity conservation, climate resilience, and ecological citizenship, all of which are essential for realizing the goals of Viksit Bharat 2047.

References

- *Agrawal, A. (1995). Dismantling the divide between indigenous and scientific knowledge. Development and Change, 26(3), 413–439.*
- *Berkes, F. (2012). Sacred Ecology (3rd ed.). Routledge.*
- *Berkes, F., Colding, J., & Folke, C. (2000). Rediscovery of traditional ecological knowledge as adaptive management. Ecological Applications, 10(5), 1251–1262.*
- *Berger, P., & Luckmann, T. (1966). The Social Construction of Reality: A Treatise in the Sociology of Knowledge. Anchor Books.*
- *Durkheim, E. (1995 [1912]). The Elementary Forms of Religious Life. Free Press.*
- *Gadgil, M., Berkes, F., & Folke, C. (1993). Indigenous knowledge for biodiversity conservation. Ambio, 22(2/3), 151–156.*
- *Gadgil, M., & Guha, R. (1995). Ecology and Equity: The Use and Abuse of Nature in Contemporary India. Routledge.*
- *Kothari, A. (1993). Bishnois and Their Environmental Ethics. Indian Environmental Society.*
- *Marx, K. (1977). Selected Writings. Oxford University Press.*
- *Nimachow, G., Rawat, J. S., Dai, O., & Angami, A. (2010). Traditional knowledge of Apatani tribe of Arunachal Pradesh on rice–fish integrated farming system. Indian Journal of Traditional Knowledge, 9(1), 38–41.*
- *Padel, F., & Das, S. (2010). Out of This Earth: East India Adivasis and the Aluminium Cartel. Orient Blackswan.*
- *Pathak, N. (2014). Conservation with Communities: The Bishnoi Way. Economic and Political Weekly, 49(45), 21–23.*

- *Rao, A. (2006). Pastoral Nomadism in Gir Forest: The Maldharis and Conservation. Nomadic Peoples, 10(1), 43–65.*
- *Rao, K., & Pant, R. (2014). Policy frameworks for indigenous knowledge in India. Journal of Environmental Policy and Planning, 16(4), 471–488.*
- *Shiva, V. (1988). Staying Alive: Women, Ecology and Development. Zed Books.*
- *Tiwari, B. K., Barik, S. K., Tripathi, R. S., & Pandey, H. N. (1998). Sacred forests of Meghalaya: Biological and cultural diversity. Regional Development Dialogue, 19(1), 1–19.*
- *Xaxa, V. (2008). State, Society, and Tribes: Issues in Post-Colonial India. Pearson.*

Paper Received : 04 March., 2025 ***Paper Accepted : 15 May, 2025***

Manglam - Year 16(02) Vol. XXXI Aug. 2025
ISSN-0976-8149, PP. 15-21

Gratitude and Gender: A Comparative Study

Dr. Vinay Kumar Singh *

Abstract

This study aimed to explore the gender differences in the feeling and expressing of gratitude among undergraduate students. The sample included 40 first-year students (20 males and 20 females) from Feroze Gandhi College, Rae Bareli. The Gratitude Questionnaire-6 (GQ-6) of McCullough, Emmons and Tsang (2002) was used to measure the gratitude of the respondents. Descriptive statistics, including mean and standard deviation, along with the t-tests were computed for data analysis. Findings of t-tests suggest that both male and female students express their gratitude identically.

Keywords: *Gratitude, Gender, Undergraduate Students*

Introduction

Gratitude is a profound emotion that enables individuals to acknowledge and value the positive aspects of their lives. It encompasses the acknowledgment of assistance and kindness received from others as well as an appreciation for the experiences that contribute to personal growth. Gratitude can be viewed as both a trait, indicating a consistent tendency to feel thankful and as a state, capturing temporary moments of appreciation in response to specific situations (Jans-Beken et al., 2019). Emmons and McCullough (2003) described gratitude as a deep emotional response marked by wonder, thankfulness and a genuine appreciation for life. Similarly, Sansone and Sansone (2010) viewed gratitude as the act of recognizing and valuing positive experiences or outcomes which fosters a sense of appreciation. A research conducted by Jans-Beken et al. (2019) indicates that gratitude is positively linked to social, emotional and psychological well-being.

Gratitude is a key area of exploration within various philosophical branches including normative ethics, applied ethics,

* *Assistant Professor, Department of Psychology, Feroze Gandhi College, Rae-Bareli, University of Lucknow, Lucknow (U.P.)*

political philosophy and moral psychology (Manela, 2019). In a series of four studies McCullough, Emmons and Tsang (2002) explored the factors linked to a grateful disposition. In study 1, they found that self-reports and observer reports of gratitude were related to positive emotions, well-being, prosocial behaviors, traits and spirituality or religiousness. In study 2, they confirmed these results in a broader nonstudent group. In study 3, they mirrored these outcomes and added that gratitude is inversely related to envy and materialism. In study 4, they demonstrated that these links remain significant even when accounting for personality traits like Extraversion, Neuroticism and Agreeableness.

Perez, Peralta and Besa (2021) noted positive correlations between gratitude and life satisfaction, gratitude and spirituality, and spirituality and life satisfaction. Spirituality emerged as key factors that mediate the connection between gratitude and life satisfaction. In other words, gratitude enhances spirituality which subsequently boosts life satisfaction. The study also affirmed the transcendental perspective on gratitude. Individuals who frequently participate in religious services or activities tend to experience a deeper sense of gratitude across various aspects of their lives. Gratitude not only enhances positive emotions but also helps diminish negative ones (Sheldon, Kashdan & Steger, 2011).

Psychology seeks to understand the immediate experience of gratitude (state-gratitude), how often individuals tend to feel it (trait-gratitude), the connection between these two aspects and the potential therapeutic benefits gratitude can offer (McCullough, Tsang & Emmons, 2004; Wood, Maltby, Stewart, Linley & Joseph, 2008). Practicing gratitude can enhance our relationships, improve our mental well-being and help us maintain a positive perspective; even in challenging times (Cregg & Cheavens, 2020). By fostering a habit of gratitude, we can enhance a deeper sense of contentment and connection in our daily lives (Wood, Joseph & Maltby, 2008).

Gratitude as a universal human emotion is expressed and experienced differently across genders; shaped by cultural, societal and psychological factors. Khan and Singh (2013) identified significant gender differences among teachers. Male teachers exhibited higher levels of gratitude while female teachers scored higher on both spirituality and forgiveness. Singh, Khan and Osmany

(2014) also reported significant gender differences in gratitude among young adults with females exhibiting higher levels than males. In a nationwide survey Krause, Emmons, Ironson and Hill (2017) found that women are generally more likely than men to experience gratitude including gratitude toward God. The study also revealed that higher levels of overall gratitude were linked to lower HbA1c levels though this connection was consistent for both men and women. Moreover, gratitude directed specifically toward God was related with lower HbA1c levels in women but not in men.

But Kulkarni and Khasgiwale (2022) conducted a study on Indian population and reported no significant difference in gratitude between genders as both demonstrate equal levels of it. In a study Kausar (2018) found a strong positive relationship between gratitude and happiness with gratitude serving as a predictor of happiness among college students. No significant gender differences were found in terms of gratitude and happiness. However, a notable difference in gratitude and happiness levels was observed between first-year and final-year students.

The primary objective of the present study was to examine whether individuals' feeling and expression of gratitude differ according to their gender. It was hypothesized that male and female students will show significant differences in feeling and expressing gratitude.

Method

Sample:

The sample for the present study was randomly drawn from different departments of Feroze Gandhi College, Rae-Bareli. All participants were first-year undergraduate students. The sample consisted of 40 students, comprising 20 males and 20 females.

Measures:

The Gratitude Questionnaire-6 (GQ-6) developed by McCullough, Emmons and Tsang (2002) was employed to measure the tendency to experience gratitude in everyday life. This self-report questionnaire consists of six items. Each item is rated on a 7-point Likert scale ranging from Strongly Disagree (=1) to Strongly Agree (=7) with respondents indicating their level of agreement by selecting

a number 1 to 7 for each statement. The questionnaire typically takes ten to fifteen minutes to complete. Higher scores indicate a stronger disposition to feel and express gratitude in daily life.

Procedure:

Each participant in the sample was approached individually in their respective class. After establishing rapport, they were informed that the study was conducted solely for academic purposes and that their responses would remain confidential. Participants were asked to carefully read the instructions on their own and seek clarification, if needed. They were instructed to respond freely by selecting a number on the 7-point scale that best reflected their feelings for each statement. After collecting data, it was scored as per guidelines and then analyzed statistically by using SPSS version 25.

Results

In this study gratitude was taken as the dependent variable and students' gender was considered as the independent variable. Descriptive statistics (Mean & SD) and t-tests were computed to verify the significance of differences in the experience of gratitude between male and female students. The obtained results are given below:

Table-1: Mean and SD of Gender and Gratitude (N=40)

Variables	Mean	SD
Gender	1.50	.51
Gratitude	26.28	4.06

The minimum and maximum possible scores on the Gratitude Scale are 6 and 42, respectively. The obtained mean score 26.28 with a standard deviation of 4.06 (Table-1) indicates that the participants in this sample exhibit a slightly above-average tendency to feel and experience gratitude in their daily lives.

Table-2: Mean, SD and t-value of Gratitude as a Function of Gender (N=20)

Variable	Gender	Mean	SD	SEM	SED	t-value	Remark
Gratitude	Male	25.70	4.17	.93	1.29	-.89	NS
	Female	26.85	3.98	.89			

Table-2 clearly show that female students have the higher gratitude scores (M=26.85, SD=3.98) than male students (M=25.70, SD=4.17). But the computed t-value -0.89 is not statistically significant. This means that there is no significant gender difference so far experince of gratitude is concerned. Thus, the finding of this study do not support the proposed hypothesis which state that male and female students will show significant differences in feeling and expressing gratitude.

Discussion

The present study was undertaken to examine whether male and female students differ significantly in their experience of gratitude. The results imply that there is no significant gender difference in the experience of gratitude among the students in this sample. This finding is consistent with Kausar (2018) who found no significant gender differences in the terms of gratitude and happiness among college students. This suggests that in academic settings; gender do not play a significant role in the expression of gratitude. Kulkarni and Khasgiwale (2022) also did not find significant gender differences in gratitude among the Indian population. It is possible that broader factors like personality traits or cultural influences which McCullough, Emmons and Tsang (2002) accounted for; might explain individual variations in gratitude more effectively than gender alone.

In contrast, Khan and Singh (2013) reported that male teachers showed higher levels of gratitude while females scored higher in spirituality and forgiveness. Singh, Khan and Osmany (2014) also reported significant gender differences in gratitude among young adults with females displaying higher levels. These findings suggest that in specific populations like teachers; gender differences in gratitude might exist.

In the light of the present study finding; it can be inferred that both male and female students feel equally and express gratitude toward someone or something and are similarly able to appreciate the people, events and situations that have shaped their lives. This capacity for gratitude allows both male and female students to connect with their life experiences in meaningful ways; fostering a greater sense of emotional awareness and thankfulness for their personal history which enhance their resilience and well-being.

Conclusion

The finding of the present study made clear that both male and female students experience gratitude in a similar manner. Hence, we can say that the ability to appreciate people, events and situations that have shaped one's life is not determined by gender but rather by individual capacity for emotional reflection, socialization, and personal values. Since, this study was conducted on a very small sample, so the findings may not fully represent the broader population. Future research with a large and more diverse sample is required to validate the findings of the current study and to provide deeper insights.

References

- *Cregg, D.R. & Cheavens, J.S. (2020). Gratitude Interventions: Effective Self-help? A Meta-Analysis of the Impact on Symptoms of Depression and Anxiety. Journal of Happiness Studies, 22, 413-445.*
- *Emmons, R.A. & McCullough, M.F. (2003). Counting blessing versus burdens: An experimental Investigation of gratitude and subjective wellbeing in daily life. Journal of Personality and Social Psychology, 84 (2), 377-389.*
- *Jans-Beken, L., Jacobs, N., Janssens, M., Peetrs, S., Reijnders, J., Lechner, L., & Lataster, J. (2019). Gratitude and health: An updated review. The Journal of Positive Psychology, Vol. 15(6), 743-782.*
- *Kausar, R. (2018). Relationship between gratitude and Happiness in college students. Indian Journal of Positive Psychology, Vol. 9(1), pp. 109. ISSN: 2229-4937.*
- *Khan, I. & Singh, N. (2013). A Study on Gender Differences on Gratitude, Spirituality and Forgiveness Among School Teachers. International Journal of Applied Sciences and Engineering, Vol. 1(1), 9-14. Online ISSN: 2322-0465.*
- *Krause, N., Emmons, R.A., Ironson, G. & Hill, P.C. (2017). General feelings of gratitude, gratitude to god, and hemoglobin A1c: Exploring Variations by gender. The Journal of Positive Psychology, Vol. 12(6), 639-650.*
- *Kulkarni, A. A. & Khasgiwale, N. (2022). Females are Higher at Gratitude Than Males. International Journal of Indian Psychology, 10(2), 1573-1589.DIP: 18.01.157.20221002.*
- *Manela, T. (2019). Zalta, Edward N. (ed.). Gratitude. Stanford Encyclopedia of Philosophy, Retrieved 14 May 2024.*

- *McCullough, M.E., Emmons, R.A., & Tsang, J. (2002). The grateful disposition: A conceptual and empirical topography. Journal of Personality and Social Psychology, 82(1), 112-127.*
- *McCullough, M.E., Tsang, J., & Emmons, R.A. (2004). Gratitude in Affective Terrain: Links of Grateful Moods to Individual Differences and Daily Emotional Experience. Journal of Personality and Social Psychology, 86(2), 295-309.*
- *Perez, J.A., Peralta, C.O. & Besa, F.B. (2021). Gratitude and life satisfaction: the mediating role of spirituality among Filipinos. Journal of Beliefs & Values, Vol. 42(4), 511-522.*
- *Sansone, R.A., & Sansone, L.A. (2010). Gratitude and well-being: The benefits of appreciation. Psychiatry (Edgmont), 7(11), 18-22.*
- *Singh, M., Khan, W., & Osmany, M. (2014). Gratitude and health among young adults. Indian Journal of Positive Psychology, 5(4), 465-468. ISSN: 2229-4937.*
- *Sheldon, K.M., Kashdan, T.B. & Steger, M.F. (2011). Designing Positive Psychology: Taking Stock and Moving Forward. Oxford University Press, p.249. ISBN:978-0-19-045187-5.*
- *Wood. A.M., Maltby, J., Stewart, N., Linley, P.A., & Joseph, S. (2008). A social-cognitive Model of trait and state levels of gratitude. Emotion, 8(2), 281-290.*
- *Wood, A.M., Joseph, S. & Maltby, J. (2008). Gratitude uniquely predicts satisfaction with life: Incremental validity above the domains and facets of the Five-Factor Model. Personality and Individual Differences, 45, 49-54.*

Paper Received : 04 March., 2025 ***Paper Accepted : 15 May, 2025***

Manglam - Year 16(02) Vol. XXXI Aug. 2025
ISSN-0976-8149, PP. 22-37

The Concept of E-Governance and the Role of NITI Aayog: An Evaluative Study

Subhash Kumar Thakur *
Dr. Bharti Sehta **

Abstract

In India, the spread of e-governance marks a major change in how public services are provided, with the twin goals of increasing transparency and placing citizens at the centre of every decision. This study looks at what e-governance really means and examines how NITI Aayog has steered the country's digital policy journey. Using data from the 2024-25 NITI Aayog Annual Report, the 2023 National e-Governance Service Delivery Assessment (NeSDA) and other official releases, the study reviews key initiatives such as the National Data and Analytics Platform (NDAP), the Aspirational Districts Programme and various digital innovation missions. By offering tables and state-by-state comparisons, the analysis shows both the achievements and roadblocks faced as e-governance rolls out from the national level down to the states. Results indicate that overall scores are rising, budgets are larger, yet familiar hurdles remain—low digital literacy, uneven infrastructure and poor coordination between departments. Therefore, while NITI Aayog has emerged as an influential policy champion and catalyst of change the study urges a closer alignment with local priorities and support for bottom-up ideas.

Keyword: *E-Governance, NITI Aayog, Digital India, Public Policy Implementation, Service Delivery Assessment.*

1. Introduction

The twenty-first century has ushered in a sweeping digital revolution that is redefining how governments operate around the world. Within India, e-Governance has become a central strategy for making state machinery faster, clearer, and more accessible to all citizens (Anand et al., 2018). Broadly understood as employing information and communication technology to deliver public services,

* *Research Scholar, University Department of Political Science, Babasaheb Bhimrao Ambedkar Bihar University, Muzaffarpur, Bihar*
** *Assistant Professor, University Department of Political Science, Babasaheb Bhimrao Ambedkar Bihar University, Muzaffarpur, Bihar*

the Indian initiative seeks to cut bureaucratic knots, speed up service delivery, and deepen participatory democracy (Anchal, 2024). Programmes such as Digital India, Aadhaar, e-District, and the UMANG mobile app have collectively redrawn the contours of public administration in nearly every sector (Dandabathula et al., 2018). NITI Aayog-India's lead planning body, created in 2015 to take Planning Commission's place, has emerged as a crucial steward of this digital shift (Balkrishna et al., 2024). Acting as a promoter of cooperative federalism and evidence-based strategy, the think tank has launched the National Data and Analytics Platform, co-steered the Aspirational Districts Programme (Inampudi & Gaurav, 2024), and shaped blueprint for Digital Public Infrastructure, all in effort to embed data-driven decision making deep within central and state agencies (Das et al., 2023).

1.1 Definition of E-Governance

E-Governance refers to the use of Information and Communication Technology (ICT) for delivering government services, exchanging information, and integrating various administrative processes through digital platforms (Jain et al., 2023). It enhances the interaction between government and citizens (G2C), businesses (G2B), employees (G2E), and other government bodies (G2G) (Majumder, 2022). Therefore, the essence of e-governance is to be transparent, accountable (Pandey & Shukla, 2022), efficient and collaborative governance that incorporates citizens in providing services with ease and at a reasonable cost (Malhotra, 2018).

1.2 Evolution of E-Governance

The trend of e-governance in India has started since the 1970s where computers were used in performing simple administrative duties. In the 1980s, efforts expanded with the launch of the National Informatics Centre (NIC), which played a key role in connecting government offices (Pandey & Sen, 2022). Liberalization of economy and the development of the IT infrastructure were the fundamental change in the 1990s (Pareek et al., 2019). The launch of the National e-Governance Plan (NeGP) in 2006 was a turning point, aiming to

make all government services accessible to the common man. Later, initiatives like Digital India (2015) gave further momentum, emphasizing digital literacy, e-governance infrastructure, and service delivery mechanisms (Paul & Rena, 2024).

1.3 Types of E-Governance

E-Governance can be classified on the basis of various models of interactions:

- G2G (Government to Government)
- G2B (Government to Business)
- G2E (Government to Employees)
- G2C (Government to Citizens)

Therefore, e-Governance represents a transformative shift in contemporary administrative practice, fundamentally redefining the state's mode of engagement with its stakeholders.

1.4 Role of NITI Aayog

Assessing NITI Aayog's role is essential for seeing how well it helps build the systems needed for e-Governance and speeds up the delivery of services online. Because many Indians now rely on digital channels more than ever since Covid-19, this inquiry feels especially timely and shows how NITI Aayog's guidelines fit into broader efforts to reform governance (Soni et al., 2017). The research aims to unpack e-Governance as it appears in India today and to chart NITI Aayog's role in crafting and rolling out the country's digital policies (Srivastava & Srivastava, 2023). It then looks at concrete results from major programmes and checks whether those results serve the wider national goals set by other policy bodies (Suri & Sushil, 2016). To ground its findings, the study draws on existing reports, census data and official studys, with particular attention to the NITI Aayog Annual Report 2024-25, linking each piece of evidence to clear, actionable suggestions for a stronger digital future (Sushil, 2017).

E-governance in India emerged out of a strategic desire to make public administration more open, efficient, and centred on the

citizen. The framework began to crystallise in the early 2000s, but it gained formal expression with the National e-Governance Plan (NeGP), launched in 2006, which sought to digitise access to essential government services (Verma & Kumaran, 2021). Real momentum, however, was generated after 2014 under the Digital India Mission, an initiative that wove information technology into the daily operations of central, state, and local departments (Wadhwa, 2020). Early projects emphasized computerising internal workflows and streamlining services in domains such as land registration, tax collection, and transport licensing. Over time the agenda expanded to include interactive web portals, mobile governance platforms, cloud infrastructures, and artificial-intelligence-driven applications, thereby encouraging broader citizen involvement and enabling real-time performance tracking (Balkrishna et al., 2024). The Ministry of Electronics and Information Technology, along with the National e-Governance Division, has been instrumental in building foundational assets like Common Service Centres, DigiLocker, and the UMANG App. Rising rates of internet access and smartphone use have turned these digital tools into levers for inclusive growth, helping to narrow the urban-rural gap (Raj et al., 2018). Today, Indian e-governance extends beyond mere digitization; it aims to reshape the entire governance system into one that is more participatory, cost-effective, and transparent for every citizen (Samdub, 2022).

2. Objectives of the Study

- To examine the concept and evolution of e-governance in India, highlighting its importance in improving governance, transparency, and public service delivery.
- To analyze the role of NITI Aayog in promoting and implementing e-governance initiatives, including policy formulation, capacity building, and monitoring mechanisms.
- To evaluate the effectiveness and impact of key e-governance projects and schemes driven by NITI Aayog, using data from recent reports and state-wise performance assessments.

- To identify challenges and opportunities in the adoption and expansion of e-governance in India, and to provide recommendations for enhancing the role of NITI Aayog in achieving digital governance goals.

3. Research Questions

1. How has the conceptual framework of e-governance evolved in India, and what are its core principles and implementation challenges?
2. What has been the specific role of NITI Aayog in shaping, supporting, and monitoring e-governance initiatives across different sectors and states?
3. To what extent have NITI Aayog's digital interventions (e.g., NDAP, Aspirational District Dashboard) contributed to transparency, efficiency, and citizen engagement in governance?
4. What are the measurable outcomes and gaps in e-governance implementation as highlighted in NITI Aayog's Annual Report 2024–25 and related national assessments (e.g., NeSDA 2023)?

4. Significance of the study

This study is important because it looks closely at how India's e-Governance system is changing and at the central part NITI Aayog plays in speeding up that digital shift. Once seen mainly as a planning body, the organisation has moved toward a faster, team-driven, and results-focused model. The work reported here tests how well this new mindset has let NITI Aayog weave digital ideas into everyday public administration and policy rollout. E-Governance goes beyond putting services online; it aims to recast the bond between state and citizens by lifting transparency, accountability, and inclusiveness. By examining programmes such as the National Data and Analytics Platform, the Aspirational Districts Dashboard, and the Atal Innovation Mission, the study shows how such digital tools are signalling real change from the national level down to smaller regions.

Besides offering a current picture, the analysis helps close a research gap by using data released in the 2024-25 Annual Report, mapping NITI Aayogs policy moves and the governance structures it has pushed. The study then weighs the effect of these moves on service speed, citizen voice, and overall agency strength, giving practical clues to future policymakers, to scholars, and to designers of digital systems. In a fast-digitizing economy such as India, this study offers insights that can shape future digital strategies, steer governance reforms, and measure the countrys e-governance progress against top global standards. Its goal is to advance a citizen-focused, data-informed, and inclusive governance model, in line with both the Sustainable Development Goals and Indias Vision 2047.

5. Research Methodology

5.1 Research Design

The present research employs a descriptive-evaluative framework to explore the concept of e-governance while assessing the contribution of NITI Aayog to its advancement in India. Grounded primarily in qualitative analysis, the study draws supplementary quantitative evidence from official documents such as the NITI Aayog Annual Report for 2024-25 and the National E-Governance Service Delivery Assessment (NeSDA) 2023.

5.2 Data Collection Techniques

The study focuses primarily on primary data gathered from official government reports, public databases, and relevant policy documents. Primary sources include official publications such as NITI Aayog's Annual Reports, the National e-Governance Service Delivery Assessment (NeSDA), documents from the Ministry of Electronics and Information Technology (MeiTY), the Economic Survey, and data from relevant government websites. These are first hand and official information. Secondary sources are academic books, research journals and writings that have scholarly interpretations and perspectives of the analysis. Collectively the sources influence a well-comprehensive foundation to judge the initiatives and efficiency of e-governance in India.

5.3 Tools and Techniques for Analysis

The following analytical methods were used:

- Content Analysis: Applied to NITI Aayog reports, to interpret their policy approach and alignment with Digital India goals.
- Trend Analysis: To track the evolution of budget allocation and implementation performance over time.
- Comparative Analysis: Between states, based on NeSDA 2023 rankings, to contextualize NITI Aayog's impact on regional digital governance.
- Descriptive Statistics: To present budgetary and programmatic data in tabular and graphical forms.

6. Results and Analysis

This section examines what NITI Aayog has actually achieved through its push to strengthen e-governance across India, and how these achievements are shaping policy. The review relies on data drawn from the Agency's most recent Annual Report covering 2024-25, the 2023 NeSDAs performance overview, and other official digital governance dashboards maintained by the Government of India. Findings are organized around core indicators such as the status of initiatives, funds spent relative to the budget, and comparative results from different states.

6.1 Progress of E-Governance under NITI Aayog's Guidance

Since its inception, NITI Aayog has served as a forward-looking policy lab that steers e-governance across India, constantly fostering coordination between central and state governments. Between 2020 and 2025, its guidance has accelerated the digitization of public services, spurred innovative solutions, and strengthened data-informed decision-making. The table below summarises several signature initiatives led by NITI Aayog during this strategic five-year span.

Table 1: Key E-Governance Initiatives Promoted by NITI Aayog (2020–2025)

Initiative	Launch Year	Focus Area	Status (2025)	Key Outcomes
National Data & Analytics Platform (NDAP)	2022	Open government data	Operational	800+ datasets, 60 ministries onboard
Aspirational Districts Dashboard	2018 (scaled in 2021)	Data-driven governance	Active	Improved governance in 112 districts
Atal Innovation Mission (AIM)	2016 (ongoing)	Innovation & startups	Expanded	10,000+ Atal Tinkering Labs
Gig and Platform Economy Report	2022	Workforce digitization	Implemented	Frameworks for policy, social security
Digital Public Infrastructure (DPI) Advocacy	2023	Interoperability & APIs	Supported via DPI task force	Adoption in digital health & education

Source: *NITI Aayog Annual Report 2024–25 (niti.gov.in)*

Between 2020 and 2025, India's e-governance system underwent significant change, largely thanks to the strategic direction provided by NITI Aayog. According to the Annual Report for 2024-25, key projects like the National Data and Analytics Platform (NDAP) made public data more accessible by uniting over 800 datasets from more than sixty ministries under one roof. This pooling of information allows citizens, researchers, and policymakers to explore up-to-date data and use it for informed choices. Meanwhile, the Aspirational Districts Dashboard, introduced in 2018 but expanded after 2021, emerged as a leading example of real-time, results-driven governance. By focusing on 112 lagging districts, the dashboard let local officials monitor trends in health, education, infrastructure, and farming. Its impact stemmed from clear data visualizations and a gentle push to encourage states to compete in improving outcomes.

The Atal Innovation Mission, an initiative of NITI Aayog, has intensified digital experimentation at the grassroots. By 2025, over 10,000 Atal Tinkering Labs appeared in schools across the country, cultivating STEM skills and hands-on problem-solving. Such activity aligns with India's long-range vision of a digitally fluent and innovation-led economy. NITI Aayog's 2022 report on the gig economy took an important step by formally acknowledging platform-based work and the people who do it; its policy recommendations now shape new social protection programmes. Meanwhile, the push for Digital Public Infrastructure, seen in schemes like the Ayushman Bharat Digital Mission and the DIKSHA platform for education, eased technical linkages in health and learning. Together, these moves signal a shift in NITI Aayog's own identity-from a traditional policy advisor to an enabler of large-scale, citizen-first digital governance.

6.2 State-Wise E-Governance Performance (Based on NeSDA 2023 Rankings)

The National e-Governance Service Delivery Assessment, or NeSDA 2023, offers valuable evidence for judging how well e-governance is working in Indian states; the review was published by the Ministry of Electronics and Information Technology (MeitY). By measuring the effectiveness, accessibility, and overall quality of online services, NeSDA evaluates what State and Union-Territory governments deliver across major public-service areas.

Table 2: State Rankings in E-Governance Service Delivery – NeSDA 2023

Rank	State/UT	Overall Score (out of 1)	Key Strengths in E-Governance
1	Kerala	0.94	Real-time health services, e-office integration
2	Tamil Nadu	0.91	Unified mobile governance platform
3	Punjab	0.89	eSewa Kendra, digital land records

4	Karnataka	0.88	Aadhaar-linked digital identity services
5	Madhya Pradesh	0.86	Efficient e-District and Samagra Portal Integration
6	Andhra Pradesh	0.84	Real-time grievance redressal system
7	Gujarat	0.83	Citizen-centric service portals
8	Maharashtra	0.82	Digital dashboards and centralized public schemes info
9	Odisha	0.80	Integration of services through OdishaOne
10	Himachal Pradesh	0.78	Access to services in remote areas via eLokmitra

Source: *National e-Governance Service Delivery Assessment (NeSDA) 2023 Report, MeitY, Government of India Link: https://nesda.gov.in*

The 2023 NeSDA rankings reveal an impressive national advancement in digital governance, a shift driven by healthy competition and steady support from central agencies such as NITI Aayog. Kerala secures the top spot, scoring 0.94, largely due to its seamless digital health platform, robust public-service websites, and thorough back-office digitisation. That success stems from clear political commitment, widespread digital literacy, and reforms targeted at streamlining administration. Tamil Nadu, in second place, shines with its Mobile Governance Ecosystem, which lets citizens access multiple government services through a single smartphone app. Punjab and Karnataka trail closely, demonstrating effective integration of land records and identity services, and they illustrate how both rural and urban communities have gained from these digital upgrades.

Notably, Madhya Pradesh leads the NeSDA 2023 ranking with a score of 0.86, showcasing a functional model of e-governance in central India. Its achievement stems from the Samagra Portal, a single, welfare-oriented system that links social plans, e-district services, and evidence-based beneficiary records. Such a setup echoes NITI Aayog's broader push for digital inclusion and data-aligned administration. States ranked lower yet

steadily advancing-often poorer or distant, such as Odisha and Himachal Pradesh-show that modular portals like OdishaOne and eLok-mitra can still lift e-governance in harder contexts. Thus the 2023 data affirm that mature digital governance now extends well beyond India's richest cities. As central coordination, grassroots outreach, and de-concentrated roll-out grow, the country's e-governance map is becoming fairer, sturdier, and more open to all citizens. Overall, the analysis points to performance-driven rivalry, federal steering, and nimble policy as key levers for reimagining how Indians interact with their digital state.

6.3 NITI Aayog's Budget Allocation for Digital Governance Projects (2020–2025)

Table 3: Budget Allocation and Utilization by NITI Aayog for Digital Governance Projects (2020–2025)

Year	Allocated Budget (₹ Crores)	Utilization (%)	Key Focus Areas
2020–21	1,540	84%	NDAP, Atal Innovation Mission, Aspirational Districts
2021–22	1,620	88%	Digital Health Mission, e-Learning under NIPUN Bharat
2022–23	1,820	92%	NDAP Phase 2, Gig Economy Digital Tracking Tools
2023–24	1,980	87%	Tele-law Expansion, Digital India Stack Strengthening
2024–25	2,100	89%	State Digital Readiness Index, Open Access Digital Tools

Source: *NITI Aayog Annual Report 2024–25, Ministry of Finance Budget Documents*

The table above shows a steady rise in NITI Aayog's budget for digital governance projects between 2020 and 2025. Starting at ₹1,540 crore in 2020-21, the yearly allocation grew each period,

finally hitting ₹2,100 crore in 2024-25, or a 36 percent increase overall. Such growth confirms that officials now see digital governance as a core part of modernizing administration and improving service delivery nationwide. Spending of fifty-six districts. Utilization rates remained high throughout, peaking at 92 percent in 2022-23, which matches the push for the National Data and Analytics Platform Phase Two and gig economy tracking portals, suggesting that funds were deployed efficiently and execution matured alongside rising ambition.

During 2024-25, a substantial portion of the digital budget is directed toward the new State Digital Readiness Index, an effort designed to give each province a clear benchmark and guide future policy adjustments. Increased funding also reflects NITI Aayog's expanded mandate to catalyse cross-sectoral digital programmes, including health-through the Digital Health Mission, education-with e-learning for early literacy, and legal services-via tele-law initiatives. At the same time, emerging projects, such as strengthening the Digital India Stack and building Open Access Tools, signal a deliberate move toward platform-centered governance. Such shared, modular platforms are expected to empower state administrations, fuel private-sector creativity, and deepen citizen participation. Collectively, the evidence shows that NITI Aayog has transitioned from a traditional policy think tank to a hands-on enabler of digital change, making certain that every rupee earmarked for technology is spent wisely and strategically across major development areas.

7. Achievements in E-Governance:

1. **Real-Time monitoring empowerment through Dashboards:** NITI Aayog has been able to introduce tools like real-time monitoring of aspirational districts dashboard that monitor development indicators on the backward districts. Through this dashboard, the policymakers will be able to select the time of intervention and hold the authorities accountable by highlighting the gaps and streamlining resources to effectively ensure that the interventions take place within an appropriate timeline.

2. **Helpful Open-Data Distribution through Sites such as NDAP:** The National Data and Analytics Platform (NDAP) launched under NITI Aayog serves as a comprehensive, accessible repository of government data. This initiative of open data helps in transparency in which researchers, citizens, and policymakers can get access to trusted data and support evidence-based politics.

3. **Expansion of Atal Innovation Mission (AIM):** Atal Innovation Mission by NITI Aayog has now expanded the scope to promote technology enabled solutions to governance. AIM will encourage startups, incubators, and hubs of innovation by ensuring that the latest digital tools in service delivery and efficiency of governance are developed.

8. Conclusion

Recent research shows that e-governance in India is now a game-changer for delivering public services quickly, openly, and to all parts of society. By tying together digital initiatives like the National Digital AI Portal, the Aspirational Districts Dashboard, and many state websites, access to government services has grown noticeably. NITI Aayog has steered this push by sharing strategic ideas, encouraging new tech solutions, and helping the national and state offices work together better. Evidence from the latest NITI Aayog Annual Report shows clearer gains in the digital skill level of departments and states, though uneven progress in different areas, low digital know-how, and shaky infrastructure still hold things back.

NITI Aayog has become a driving force behind the formal adoption of e-governance across India. Through policy advice grounded in evidence, live data analytics tools, and a spirit of cross-agency collaboration, it has reinforced the Digital India initiative. By emphasizing results-oriented oversight, skill development, and seamless policy integration, the Aayog steers digital change so that it supports the country's broader development ambitions. Its ongoing

partnership with MeitY, state governments, and industry players has improved program rollout and accelerated the spread of new ideas.

9. Recommendations

Based on the above discussion, the following recommendations are proposed:

1. Strengthen Digital infrastructure: Investment should focus on connection to high speed internet and affordable digital tools to rural, tribal and underserved locations so that everyone has access to e-governance services.
2. Codify an Enhancement of Cybersecurity Policy: Codifying full-scale policies on cybersecurity, periodic checks, and standards of compliance will help to protect citizen's information and ensures the confidence in the government online space.
3. Promote Interoperability: Establishing standardized Application Programming Interfaces (APIs) and common data protocols across departments and states will enable smooth integration and real-time information sharing, improving coordination.
4. Train Government employees: Continuous digital training for bureaucrats and local administrators will equip them to effectively coordinate and implement e-governance at their respective levels, ensuring adaptability to evolving technologies.
5. Encourage Public-Private Partnerships (PPPs): It can fast-track building up user-friendly solutions by working together with tech start-ups, social enterprises, and other innovators in the private sector. It can improve the range of services available.
6. Citizen-Centric Design: Research and development by citizens in the design and test of digital platforms will increase accessibility and usability as well as having relevance and therefore e-governance tools will be aligned to the needs of different user groups.

Reference

1. *Anand, R., Medhavi, S., Soni, V., Malhotra, C., & Banwet, D. K. (2018). Transforming information security governance in India (A SAP-LAP based case study of security, IT policy and e-governance). Information & Computer Security, 26(1), 58–90.*
2. *Anchal, D. W. R. S. (2024). E-Governance in India: A comprehensive analysis of evolution, key initiatives, benefits, challenges, and strategic solutions. Idealistic Journal of Advanced Research in Progressive Spectrums (IJARPS), 3(5), 34–41.*
3. *Dandabathula, G., Sharma, A., Karma, P., Mohapatra, C., Reddy, C. S., Rao, S. S., & Rao, P. V. P. (2018). State of ICT enabled e-governance landscape of India for achieving Sustainable Development Goals. International Journal of Computer Science and Mobile Computing, 7(12), 59–78.*
4. *Balkrishna, A., Singh, S. K., Pathak, R., & Arya, V. (2024). E-governance paradigm in the Indian agricultural sector. Discover Agriculture, 2(1), 2.*
5. *Das, S., Garg, V., & Joseph, J. J. (2023, March). Advancements in e-governance initiatives: Digitalizing healthcare in India. In International Conference on Advances in IoT and Security with AI (pp. 287–296). Springer Nature Singapore.*
6. *Inampudi, S., & Gaurav, A. K. (2024). Transforming institutions for inclusive and sustainable governance: An empirical analysis of NITI Aayog's role in India. In Governance and Sustainable Development in South Asia: Bridging the Gap (pp. 177–195). Springer Nature Switzerland.*
7. *Jain, A., Anand, A., & Mahajan, I. (2023). Digital governance: A case of COVID management in India. In Technology, Policy, and Inclusion (pp. 15–42). Routledge India.*
8. *Majumder, C. S. (2022). Adoption and implementation of e-governance for smart education in West Bengal. Department of Basic Science & Humanities (English), Narula Institute of Technology.*
9. *Malhotra, C. (2018). Role of digital technologies in governance. Unpublished manuscript.*
10. *https://www.niti.gov.in/documents/reports.*
11. *Pandey, A., & Shukla, S. P. (2022). Functioning of NITI Aayog of India: A study. Unpublished manuscript.*
12. *Pandey, S., & Sen, C. (2022). Blockchain technology in real-time governance: An Indian scenario. Indian Journal of Public Administration, 68(3), 397–413.*

13. *Pareek, K. S., Kumar, P., Jain, V. K., & Pareek, K. S. (Eds.). (2019). The stances of e-government: Policies, processes and technologies (Vol. 13).*
14. *Paul, L., & Rena, R. (2024). Viksit Bharat 2047: Transforming governance for sustainability, innovation, and inclusive development. Researchers World, 15(2), 103–114.*
15. *Raj, B., Goel, P. S., & Behera, A. (2018). Sustaining excellence and relevance in an organization: A joint study between NIAS and NITI Aayog (NIAS Report No. R63-2018). National Institute of Advanced Studies.*
16. *Rituraj, V. (2018). Making of e-India through the "Digital India" e-Governance Plan: Impact and challenges. In The stances of e-Government (pp. 1–10). Chapman and Hall/CRC.*
17. *Sharma, A. (2022). Promoting greater efficiency and better governance through ICT application. Indian Journal of Public Administration, 68(3), 426–435.*
18. *Soni, V., Dey, P. K., Anand, R., Malhotra, C., & Banwet, D. K. (2017). Digitizing grey portions of e-governance. Transforming Government: People, Process and Policy, 11(3), 419–455.*
19. *Srivastava, M., & Sharma, N. (2025). E-governance and AI integration: A roadmap for smart governance practices. Samsad Journal संसद जर्नल, 2(1), 160–195.*
20. *Suri, P. K., & Sushil. (2016). Strategic planning: An enabler of e-governance. In Strategic Planning and Implementation of E-Governance (pp. 73–94). Springer Singapore.*
21. *Sushil, P. K. (2017). Strategic planning and implementation of e-governance. Springer.*
22. *Wadhwa, M. (2020). E-governance in healthcare sector in India. Center for Sustainable Development, Columbia University.*
23. *Wadhwa, M. (2020). E-governance in the health sector in India: A review of the current scenario. Unpublished manuscript.*
24. *https://www.worldbank.org/en/topic/digitaldevelopment*

Paper Received : 05 July, 2025 ***Paper Accepted : 18 Aug., 2025***

Manglam - Year 16(02) Vol. XXXI Aug. 2025
ISSN-0976-8149, PP. 38-44

Hashtags and Hostilities: Twitter's Role in the India-Pakistan Conflict and the 2025 Pahalgam Attack

Simpal Tripathi *
Prof. Mamta Mani Tripathi **

Abstract

The advent of social media platforms like Twitter (now X) has redefined the dynamics of modern conflicts. This paper explores the critical role Twitter plays in shaping the narratives, public opinion, and diplomatic engagements in the India-Pakistan conflict, particularly focusing on the 2025 Pahalgam attack. As both India and Pakistan leverage Twitter to control the narrative, spread disinformation, and engage in digital warfare, the platform becomes a central element in their ongoing rivalry. This paper also examines how Twitter is used to rally citizens, garner international support, and influence policy decisions. The 2025 Pahalgam attack and India's subsequent Operation Sindoor serve as key case studies to highlight how social media can escalate and impact real-world conflicts. The paper argues that Twitter is not just a communication tool but a powerful instrument in modern warfare that requires strategic management and understanding in conflict resolution.

Keywords*: India-Pakistan conflict, Pahalgam attack, Twitter, social media, information warfare, digital diplomacy, disinformation, soft power, national narratives, Operation Sindoor, modern warfare, psychological operations*

Introduction: The Digital Battlefield

The rise of social media platforms, particularly Twitter (now X), has altered the traditional understanding of warfare. No longer confined to physical battlefields, modern conflicts are increasingly fought in digital spaces where information, narratives, and public opinion are crucial elements. For countries like India and Pakistan, whose relationship is fraught with historical tension, territorial disputes, and military confrontations, the role of social media as an instrument of influence and warfare cannot be understated. In this

* *Research Scholar, Department of Political Science, Deen Dayal Upadhyaya University, Gorakhpur (U.P.)*

** *Principal, Udit Narayan Post Graduate College, Padrauna, Kushinagar (U.P.)*

context, Twitter has become a tool for states to project power, control narratives, and engage in psychological operations, making it a central element of modern conflict.

In addition to military strategies and traditional diplomacy, digital tools now shape public opinion, domestic policies, and international relations. This paper examines the role of Twitter in the India-Pakistan conflict, with a focus on the 2025 Pahalgam attack, which exemplifies how the platform has transformed the dynamics of modern warfare and diplomatic engagement.

Theoretical Framework

To fully understand Twitter's role in the India-Pakistan conflict, it is essential to ground this analysis in key political science theories. These theoretical frameworks provide the foundation for understanding how Twitter is used in modern warfare and its implications for international relations.

Constructivism and the Role of Narratives

Constructivism, a theory in international relations, suggests that state behavior is not simply shaped by material interests but by the ideas, norms, and identities that states construct and communicate. This theoretical perspective is crucial for understanding the role of Twitter in conflicts like that between India and Pakistan. On Twitter, both nations engage in the active construction of their identities, often through the lens of nationalism, while simultaneously undermining the identity of the other. Constructivism highlights that social media platforms like Twitter serve as battlegrounds for these constructed identities, where narratives about national pride, victimhood, and historical grievances are propagated.

Information Warfare and Psychological Operations

Another key theory is information warfare, which refers to the strategic use of information to gain an advantage over adversaries. In the digital age, information warfare is not confined to military operations; it extends into the realm of social media, where platforms like Twitter are used to manipulate public sentiment, spread disinformation, and influence international discourse.

During moments of crisis, both India and Pakistan have utilized Twitter as a tool for psychological warfare. Tweets, hashtags, and memes serve as vehicles for spreading official narratives, while false information and doctored images circulate to confuse, mislead, or agitate populations. In a conflict such as the India-Pakistan rivalry, where both states are highly sensitive to international opinion, the battle for information supremacy on Twitter often becomes as important as the battle on the ground.

Soft Power and the Strategic Use of Twitter

The concept of soft power, introduced by Joseph Nye, emphasizes the ability of states to shape global perceptions and influence outcomes through attraction rather than coercion. While military power and economic leverage remain important, soft power enables states to shape their image, communicate their values, and engage with the global community in non-coercive ways. Twitter is a significant tool for projecting soft power in modern conflicts, allowing states to influence foreign public opinion, justify military actions, and build coalitions through digital diplomacy.

For both India and Pakistan, Twitter has become a stage for projecting their respective visions of morality, justice, and sovereignty. Whether responding to accusations of human rights violations or rallying international support for their military actions, both nations use Twitter to frame their actions as justified and legitimate, often invoking global values like peace, democracy, and human rights.

The India-Pakistan Conflict and the Digital Front

Escalations and Narrative Warfare on Twitter

The India-Pakistan conflict has a long and bloody history, with the Kashmir issue remaining a flashpoint. In this ongoing rivalry, Twitter has become a primary battlefield for narrative control. During periods of heightened tension, such as after the 2019 Pulwama terror attack, both India and Pakistan utilized Twitter to not only inform their domestic audiences but also to shape international opinion.

India's narrative post-Pulwama, for example, was carefully constructed to highlight Pakistan's alleged role in harboring terrorist

groups, leading to the Balakot airstrikes. The Indian government and media outlets flooded Twitter with posts that emphasized the righteousness of their military action, using hashtags like #IndiaStrikesBack and #BalakotAirstrike to rally domestic support and justify their response. These hashtags went viral, quickly gaining traction not only among Indian users but also within international circles. Conversely, Pakistan utilized Twitter to deny its involvement in the attack and to frame India's response as a violation of international law and an act of aggression. In this information warfare, the battle for truth became secondary to the competition for control over the narrative.

Misinformation and Disinformation in Digital Warfare

A persistent issue in the India-Pakistan conflict on Twitter is the rampant spread of misinformation and disinformation. False claims and doctored images, often designed to inflame tensions, circulate widely during periods of escalation. This misinformation amplifies the emotional and psychological impact of conflicts, influencing public perception both domestically and globally.

For example, during the aftermath of the 2025 Pahalgam attack, social media users shared fabricated videos and misleading reports about the incident, creating confusion and further heightening the sense of urgency. These actions are part of a broader strategy by both states to manipulate public emotions and pressure governments into supporting their positions.

The Role of the Pahalgam Attack in the Digital Age

The Pahalgam attack of April 2025 marked a significant escalation in the India-Pakistan conflict, and Twitter played a central role in its aftermath. Gunmen dressed in military fatigues attacked a group of tourists in the Baisaran meadow of Kashmir, killing 26 people, mostly Hindu pilgrims. The immediacy with which images and videos of the attack were shared on Twitter highlighted the platform's role in shaping public sentiment and influencing political responses.

In India, Twitter exploded with outrage. Hashtags such as #JusticeForPahalgam and #NoMoreTerrorism trended as citizens demanded immediate action. Government officials, military leaders,

and influential public figures took to the platform to express their grief, anger, and resolve. Twitter became a rallying point for nationalist sentiment, with calls for stronger measures against Pakistan's alleged involvement in supporting terrorism.

India's response was swift. On May 7, 2025, India launched Operation Sindoor, targeting terrorist camps across the Line of Control in Pakistan-administered Kashmir. The operation was framed on Twitter as a direct retaliation against the attack, with the hashtag #OperationSindoor trending globally. The operation's messaging was carefully constructed to emphasize India's commitment to national security and to portray Pakistan as a sponsor of terrorism.

Pakistan's reaction was also reflected on Twitter. Officials denied any involvement in the attack and condemned India's military actions, calling them violations of international law. Hashtags like #StopIndianAggression and #PakistanIsNotTerrorist began to trend as Pakistan sought to control the narrative and deny its complicity.

The Role of Twitter in Shaping Public Opinion and International Perception

Twitter's influence extended beyond the borders of India and Pakistan. The conflict between the two nations, amplified by the digital narratives on Twitter, captured the attention of the international community. Hashtags like #KashmirBleeds and #StandWithIndia became global rallying points, driving discussions on platforms outside the immediate conflict zone. Global actors, international organizations, and activists all used Twitter to advocate for their positions, leading to widespread mobilization and even diplomatic pressure.

As both nations battled it out on Twitter, their respective global images were at stake. The ability to shape public opinion through strategic hashtag campaigns, viral content, and the narrative constructed around military operations made Twitter a critical tool in modern warfare. The question now is not just how wars are fought on the ground, but how they are fought in the court of public opinion.

Policy Implications and Recommendations

The rise of Twitter as a central tool in modern conflicts highlights several policy implications that need to be addressed. First and foremost, both India and Pakistan must recognize the power of social media in shaping the course of their conflict. Digital strategies must be integrated into foreign policy and national security frameworks, as control over digital narratives has become just as important as control over physical territory.

Furthermore, there is a need for increased cooperation between governments and social media platforms to combat the spread of misinformation. Real-time content moderation, fact-checking, and transparency in the algorithmic curation of content can help reduce the impact of disinformation during critical moments.

Public digital literacy is also essential. Both Indian and Pakistani citizens must be educated on the risks of misinformation and the importance of verifying information before sharing it. By promoting media literacy and critical thinking, the public can play a more constructive role in mitigating the emotional and psychological escalation fueled by social media.

Conclusion: The Hybrid Nature of Modern Warfare

In the India-Pakistan conflict, Twitter has proven to be an indispensable tool for both state and non-state actors. From the construction of national narratives to the spread of misinformation, Twitter serves as a modern battleground where both sides fight for control of global opinion. The 2025 Pahalgam attack is a poignant example of how digital warfare shapes the course of real-world conflict.

As conflicts become increasingly hybrid, involving both physical military actions and information warfare, understanding the role of social media platforms like Twitter is essential for policymakers. In the digital age, war is not just fought with bullets and bombs; it is fought in the minds of the people and the narratives they consume. In the case of India and Pakistan, it is clear that social media will continue to play a central role in shaping the future of conflict. Managing the digital front is no longer optional—it is a necessity for national security and international diplomacy.

References

1. *Air University. (2017). Commanding the Trend: Social Media as Information Warfare. Winter 2017.*
2. *AP News. (2025, April 22). "Gunmen kill 26 tourists in Kashmir meadow attack; India blames Pakistan."*
3. *Modern Diplomacy. (2024, September). The Power of Social Media to Influence Political Views and Geopolitical Issues.*
4. *Nye, J. S. (2004). Soft Power: The Means to Success in World Politics. PublicAffairs.*
5. *Oxford Research Encyclopedias. (2025). Social Media and Foreign Policy. Retrieved from Oxford University Press.*
6. *Stimson Center. (2022). Social Media Misinformation and the Prevention of Political Instability and Mass Atrocities.*
7. *The Guardian. (2025, May 7). "India launches Operation Sindoor in response to Pahalgam attack."*
8. *The Times. (2024, November). "The next big battlefield will be in our minds."*
9. *Time. (2025, May). "How to Address Misinformation—Without Censorship."*

Paper Received : 05 June, 2025 ***Paper Accepted : 15 July, 2025***

Manglam - Year 16(02) Vol. XXXI Aug. 2025
ISSN-0976-8149, PP. 45-54

Bio-Physical Resource Base Assessment: The Case of Chitrakoot District In Uttar Pradesh

Birendra Kumar Yadav *
Dr. Uttara Singh **

Abstract

The Chitrakoot district of Uttar Pradesh, located in the Bundelkhand region, is characterized by diverse bio-physical features including rugged hills, Vindhyan plateaus, fertile plains, and riverine systems. This study assesses the district's bio-physical resource base—focusing on different land uses including forests, crops, and classification of land uses —using field surveys, remote sensing, and geospatial analysis. However, groundwater resources are under severe stress; aquifer mapping reveals that Karwi block is in a critical state, while other blocks are semi-critical or safe. Climate data shows a significant decline in rainfall days and rising temperatures, which, combined with deforestation and land degradation, has impacted the Mandakini River and overall water availability. The forest cover has shrunk, reducing ecological stability and increasing soil erosion. The study highlights the urgent need for integrated watershed management, afforestation, and sustainable land use planning. Strengthening groundwater recharge, restoring degraded lands, and mitigating climate impacts are vital to preserve the district's natural resources and support livelihoods. This assessment provides a foundational base for policy interventions aimed at environmental conservation and rural resilience in Chitrakoot.

Keywords: *Bio-physical resource base, Land use classification, Land degradation, Waste Land.*

Introduction

Bio-Physical Resource Base assessment is an important aspect in order to understand the adjustment of man's pattern of activities in relation with availability of resource base in any region. The present

* *Research Scholar, Department of Geography, CMP Degree College, University of Allahabad, Prayagraj.*
** *Assistant Professor, Department of Geography, CMP Degree College, University of Allahabad, Prayagraj.*

chapter deals with assessment of natural resource base, land resource base, human resource base, water resource base and livestock resource base assessment in the study area.

The only natural resource necessary for a nation's economy and development is land. It assists with all primary operations as well as the secondary and tertiary economic sectors. It satisfies the requirements of the entire terrestrial environment.

"A specific area of the earth's surface, its characteristics embrace all stable, or predictably cyclic attributes of the biosphere, to the extent that these attributes exert a significant influence on present uses of land by man," is how land has historically been defined geographically (Brinkman and Smith, 1973).

According to the Food and Agriculture Organization (FAO) (1995)4, land is defined as "a physical entity with respect to its topography and spatial nature; this is often associated with an economic value, expressed in price per hectare at ownership transfer."

Land is a finite and non-renewable resource of nature for any country; it cannot be extended to higher desirable level. Land is crucial for all developmental activities including natural resources, ecosystem services and agriculture (Nibanupudi and Shaw 2014)

West Bengal's marginal land use variations between 2001 and 2011 were examined by Siddiqui, S.H. et al. (2013)26. Using the basic percentage method, they examined changes that were positive in non-agricultural areas, pastures, grazing land, and current fallow. On the other hand, negative changes were noted in forests, barren and uncultivated land, various trees and groves, cultivable waste land, other fallow land, and net sown area.

The meaning and scope of land use is explained in outline by Zimmermann in his World Resource and Industries. In fact, "land" is used by the economist in a broader sense to denote natural resources in general. The problem, in that case, becomes one of resource appraisal. But restricting the review to agricultural land, factors determining the limits of the agricultural uses of land are being reflected.

Classification of Land Use

For the land use mapping, L.D. Stamp employed the following classification.

1. Agriculturally unproductive land; structures; yards; mines; ponds.
2. Woodlands and forests.
3. Perennial grass meadows
4. Moorland, pastures, common areas, and heathlands;
5. Gardens.
6. Fertile, fallow terrain.

In 1976, the United States Geological Survey (USGS) created maps of the US showing land cover and usage at a scale of 1:250,000. Using level 1, level 2, and level 3 classifications, the USGS created a hierarchical system. Nine land use classifications at level 1 and 92 classifications at level 2 were adopted by the USGS. The USGS categorized the following nine items based on level 1:

Built-up land, Agricultural land, Rangeland, Forest land, Water, Wetland, Barren land, Tundra, Perennial snow or ice.

Study Area

The Chitrakoot district is located in the southern region of Uttar Pradesh. The total geographical area of 3388.97 sq. km. The geographical coordinates of Chitrakoot district are approximately 25.20° to 25.50° N latitude and 80.70° to 81.20° E longitude. Fatehpur and Prayagraj border the district on the north; the state of Madhya Pradesh borders it on the east, south-east, and south; and the tehsils of Naraini and Baberu of Banda (its parent district) border it on the west. The district's natural northern boundary is formed by the Yamuna River, while its western and northwestern boundaries are formed by the Baghain River.

Administratively the district of Chitrakoot was split off from Banda district, on May 13, 1997, which was split into two tehsils, Karwi and Mau. The district's headquarters was located in Karwi, and it was further divided into five blocks, which are Pahari, Karwi (Chitrakoot), Manikpur, Ramnagar, and Mau. The district consists of 650 settlements, of which 551 are inhabited. According to the 2011

census, there were 9,91,730 people live in the district, of which 527721 (53.25%) were men and 464009 (46.78%) were women. There are 210400 people in the scheduled caste overall (26.23%). There are 315 people per square kilometre. Population growth is decennial at 12.8%.

Geographically and topographically speaking, the district is made up of a high plateau known as "Patra." The district area mostly slopes from south-west to northeast. The three rivers that comprise the Chitrakoot district's drainage pattern are the Yamuna, Baghain, and Paisuni. Since shallow/deep tube wells and dug wells account for 89.72% of net sown area in the district (district statistical statistics, 2008–09), ground water is the primary source of irrigation in that area. 10.28% of the land is irrigated by surface water resources via canals.

The Pahari block has the highest percentage of land used for farming (66.68%), while Ram Nagar block has the lowest percentage (37.79%). The total gross sown area is 182237 ha, of which 11010 ha have been seeded more than once. Main crops include Rabi and Kharif. The most significant crops are wheat, paddy, gram, jawar, barley and arhar.

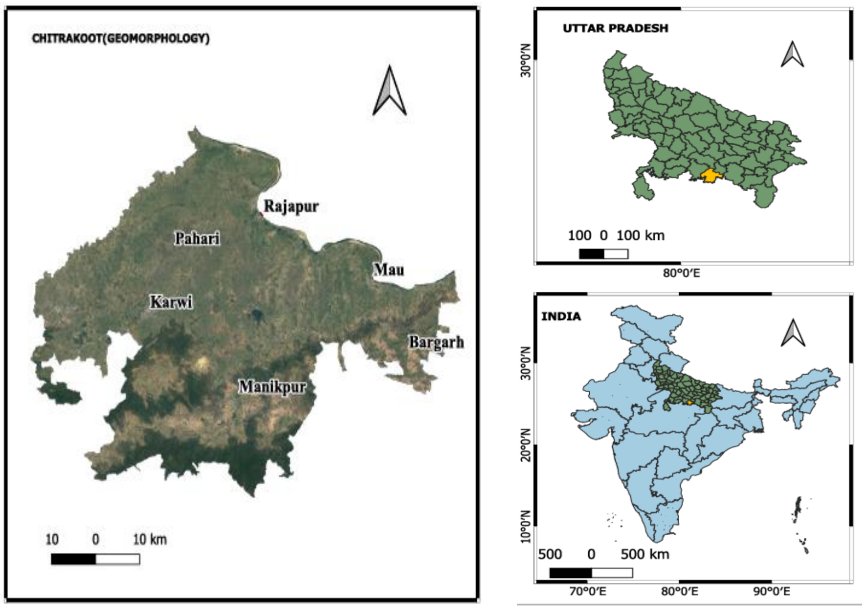

Figure No.1-Location Map of the study area

Objectives

The main objectives of the present study are as follows –

- To analyse the natural resource base of Chitrakoot Distrct.
- To analyse the forest cover and its degradation in last 20 years between 1997 and 2017.

Research Methodology

The present study is based on secondary data obtained from the department of forest, Chitrakoot district. The secondary data pertaining to the different blocks of Chitrakoot was gathered from topographic maps. information on the Chitrakoot district's various crops, vegetation, drainage, climate, soils, primary crops, and agricultural land usage was gathered from the district statistical handbook, District Census Handbook, Department of Agriculture, Socio-economic review of Chitrakoot district and various websites of the district and state.

NDVI calculation has been made using the satellite data obtained from the Bhuvan.

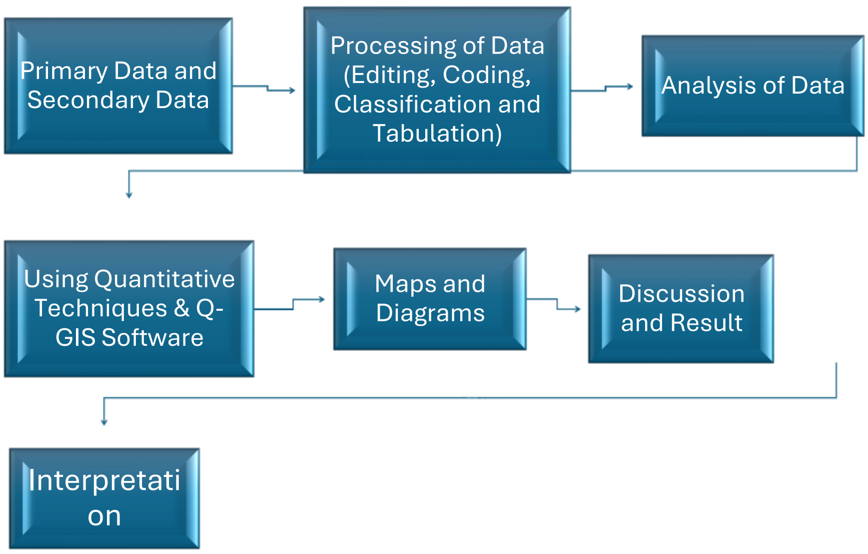

Evaluating the Base of Natural Resources

The percentage of distribution for both forest cover and vegetation fraction cover is included in the natural resource base. An evaluation of the research area's vegetative cover indicator's state has been attempted. Any area's vegetation coverings give insight into the amount of water present there. The amount and distribution of rainfall in the research region provides an explanation of the biomass potential.

Forest Cover Distribution

It has been noted that that Chitrakoot district's data on forest cover have drastically changed between 1997 and 2017. The Chitrakoot district's Pahari block had the largest area drop in forest cover, with a reported high decrease in percentage area from 28.53 to 0.00012 percent, or a decrease of (- 28.52%) in the distribution of plant cover. Ramnagar, karwi also noted a reduction in the area covered by low forest cover. There was an increase in the area under the forest recorded by the remaining blocks of Manikpur and Mau. Accordingly, to Manikpur, the district's maximum area increased from 30.6 to 37.31 percent.

The Chitrakoot district's southern border has been found to have the largest amount of forest.

Only one Chitrakoot block has been classified as having a very high percent of the total forest cover, with Manikpur following suit in the high category. While Pahari and Ramnagar are situated in the northern region of the Chitrakoot district, Manikpur is situated in the southern region. Pahari, Ramnagar were found to have extremely low percentages of forest cover.

Blocks	**Total Geographical Area (in Hectares)**		**Forest Area (in Hectares)**		**Forest cover in Chitrakoot District (%)**		**% of Hectarage Change (1997-2017)**
	1997	**2017**	**1997**	**2017**	**1997**	**2017**	
Pahari	72101	70134	20242	9	28.34	.00012	-28.33
Karwi	63240	85334	12457	15975	20.23	18.71	-1.52
Manikpur	114501	94199	34292	35188	30.37	37.35	+7.0
Ramnagar	35067	42514	2498	1896	7.17	4.4	-2.77
Mau	48003	46726	5906	6699	12.43	14.33	+1.9

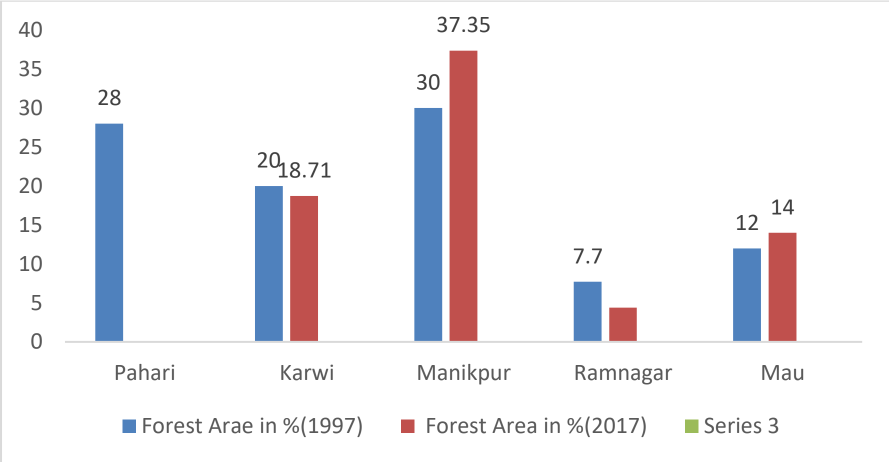

Percentage Change in Forest Area Between 1997 to 2017

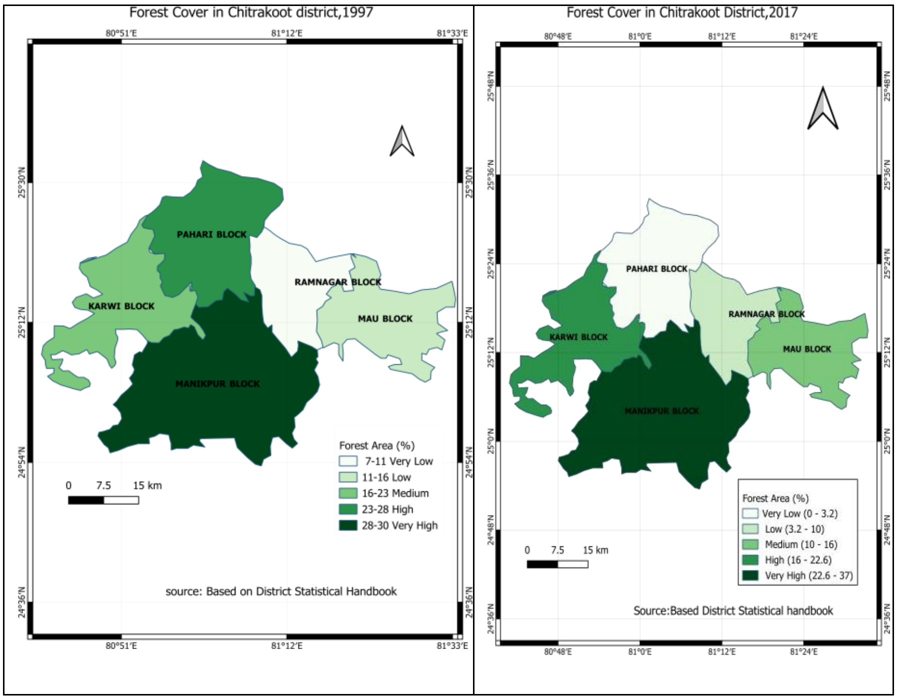

Chitrakoot District's Vegetation Fraction Cover:

Forests, bushes, and grasses are examples of vegetation. When analysing the geographical distribution of botanical prosperity or poverty, this is a crucial indication. This aids in determining whether the research area's pasturelands growth prospects are suitable. The

southern region of the Banda district, including the areas of Manikpur, and the eastern edge of Karwi have the highest vegetative cover. Additionally, Mau's southern region exhibits a strong concentration of vegetative cover. In the Chitrakoot district, the majority of the vegetative cover is found in the southern region. In contrast, the plant cover fraction in Pahari, Ramnagar blocks is notably low.

Normalized Differential Vegetation Index (NDVI):

NDVI Calculation Showing vegetation cover of Chitrakoot District

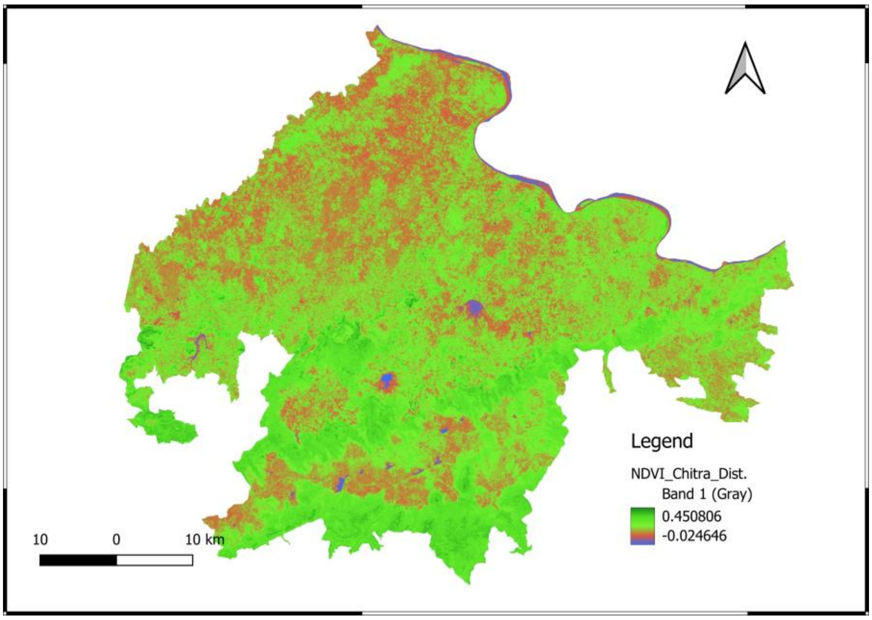

8100'E 81030'E

The NDVI is an index that calculates variations and gives a reading of the condition and density of the vegetation. The cover of vegetation has an impact on it. It displays the ability of land surface cover to photosynthesize. Red and near infrared reflectance are used to compute the NDVI.

$$NDVI = (NIR-RED)/(NIR+RED)$$

Additionally, the NDVI value ranges from -1 to +1, with a reduction in NDVI occurring when leaves experience water stress.

This is a really effective method for identifying botanical poverty in any area. An efficient method for determining the geographic amount of plant fraction cover in the research region was discovered using data acquired from satellite imagery.

Conclusion:

To effectively protect the deteriorating bio-physical resource base and to check deforestation in Chitrakoot district of Uttar Pradesh, a multi-dimensional approach is essential. Establishing Eco-Sensitive Zones (ESZs) around protected areas like Ranipur Wildlife Sanctuary can regulate harmful land use and prevent encroachment. Advanced technology, including drones, AI-based surveillance, GIS mapping, and satellite monitoring, helps track forest cover changes in real time.

Community involvement plays a crucial role. Initiatives like Green Chaupals and Gram Vans engage villagers in afforestation and forest protection. Legal recognition of forest rights ensures forest dwellers can sustainably use and conserve forest resources. Large-scale tree plantation campaigns, such as “Ek Ped Maa Ke Naam,” aim to restore green cover with geo-tagging and monitoring for accountability.

Water conservation methods, including check dams, farm ponds, and contour bunding, support ecological restoration by improving soil moisture and preventing erosion. Partnerships with research institutions like the Forest Research Centre for Eco-Rehabilitation (FRCER) help apply scientific techniques to degraded land recovery and agroforestry.

By combining policy enforcement, modern technology, local participation, afforestation, and scientific inputs, Chitrakoot can significantly reduce deforestation, protect biodiversity, and promote sustainable development. Such integrated efforts are critical for preserving the district’s forests and ecological balance.

References

1. *Andrabi, Javaid Ahmad. Major crop combination and diversification regions in Kashmir Valley.*
2. *Budapest International research in Exact Sciences Journal. 2019 January; 1(1): 54- 61, ISSN: p-2655-7835.*
3. *Khan N. 1998. Quantitative Methods in Geographical Research. Concept Publishing Company, New Delhi, pp. 51-5*
4. *Gautam, Alka. Agricultural Geography. Allahabad, Sharda Pustak Bhawan. 2016; pp.1- 422, ISBN: 978-93-80285-89-4.*
5. *District Statistical Hand Book- Chitrakoot, 2020.*
6. *Husain, Majid. Agricultural Geography. Jaipur, Rawat Publications. 1996; pp.1- 430, ISBN: 978 81-7033-347-0.*
7. *India. Superintendent of Census Operations, Uttar Pradesh. (1965). District census handbook, Uttar Pradesh. Lucknow: Superintendent, Print. and Stationery, U.P.,*
8. *Khan N. 1998. Quantitative Methods in Geographical Research. Concept Publishing Company, New Delhi, pp. 51-55*
9. *Singh J. and Dhillon S. 1984. Agricultural Geography, Tata McGraw hill publishing company Ltd. Todkari G.U. 2012.*
10. *A Study of Crop Combination in Solapur District of Maharashtra. Journal of Crop Science, Vol. 3, Issue-1, pp.51-53. New Delhi, pp. 112-113.*

Paper Received : 08 July, 2025 ***Paper Accepted : 18 Aug., 2025***

Manglam - Year 16(02) Vol. XXXI Aug. 2025
ISSN-0976-8149, PP. 55-67

Breaking Barriers: A Comprehensive Analysis of Gender Integration in India's National Cadet Corps and the United States' Junior Reserve Officers' Training Corps

Dr. Durgesh Kumar Singh *
Rahul Yadav **
Harshit Singh ***

Abstract

This study examines gender inclusion in two prominent youth military training programs: India's National Cadet Corps (NCC) and the United States' Junior Reserve Officers' Training Corps (JROTC). Through comparative analysis of historical evolution, policy frameworks, participation trends, and institutional challenges, this research explores how these programs facilitate or constrain women's participation in defense education. Drawing from academic literature, government reports, and policy documents, the study reveals significant progress in female representation—with women comprising approximately 35% of NCC cadets and 40% of JROTC participants as of 2024. However, persistent barriers including infrastructure limitations, cultural biases, and safety concerns continue to impede full gender parity. The research adopts a predominantly supportive perspective while offering critical insights and policy recommendations to enhance inclusivity. Findings suggest that both programs serve as crucial platforms for women's empowerment and leadership development, though sustained institutional commitment is required to address remaining disparities.

Keywords: *Gender inclusion, military education, women empowerment, National Cadet Corps, JROTC, youth development*

Introduction

The integration of women into uniformed youth organizations represents a critical dimension of broader gender equality initiatives

* *Associate Professor, Department of Defence Studies, Feroze Gandhi College, Raebareli, University of Lucknow, Lucknow (U.P.)*
** *Research Scholar, Department of Education (CIE), University of Delhi, Delhi*
*** *M.Ed. Scholar, Department of Education (CIE), University of Delhi, Delhi*

in defense sectors globally. India's National Cadet Corps (NCC) and the United States' Junior Reserve Officers' Training Corps (JROTC) stand as prominent examples of how military-affiliated programs can serve as early platforms for fostering gender-inclusive leadership development (Bakshi, 2006). These voluntary programs, while distinct in their operational contexts, share common objectives of cultivating citizenship, discipline, and leadership skills among young people. The significance of studying gender inclusion in these programs extends beyond mere numerical representation. As Bhasin (2021) argues, women's participation in traditionally male-dominated spheres challenges entrenched patriarchal structures and creates new possibilities for gender relations. The experiences of female cadets in NCC and JROTC thus provide valuable insights into how institutional changes can facilitate broader social transformation. This comparative study addresses a critical gap in existing literature by examining gender inclusion across two distinct cultural and institutional contexts. While previous research has explored women's integration into professional military forces (Bhattacharyya, 2012), limited attention has been paid to youth military programs as foundational spaces for gender equality initiatives. The study's focus on Indian and American contexts offers unique opportunities to understand how different socio-political environments shape gender inclusion strategies and outcomes.

Literature Review

Theoretical Framework

The analysis draws upon feminist institutional theory, which examines how formal and informal rules within organizations can either perpetuate or challenge gender inequalities (John, 2018). As John (2018) notes in her examination of feminist perspectives in Indian sociology, institutions are not gender-neutral but actively shape and are shaped by gender relations. This framework is particularly relevant for understanding how military-affiliated youth programs, historically designed around masculine norms, adapt to include female participants. Intersectionality theory provides an additional analytical

lens, recognizing that gender intersects with other identities such as caste, class, race, and ethnicity to create unique experiences of inclusion or exclusion (Menon, 2012). This perspective is crucial for understanding variations in women's participation across different regions and communities within both India and the United States.

Gender and Military Education in India

Indian scholarship on women in defense contexts has evolved significantly since the 1970s feminist movement. Bhasin's (2021) pioneering work on gender and development emphasized the importance of challenging traditional gender roles through educational and institutional interventions. Similarly, Menon's (2012) analysis of feminist politics highlights how women's entry into previously male-dominated spaces can transform both institutional cultures and broader social norms.

Research by Bhattacharyya (2012) on women in the Indian military emphasizes the constitutional guarantee of equality while acknowledging persistent cultural barriers. Her analysis reveals how organizational policies must address both formal discrimination and informal cultural practices that may disadvantage women. This perspective is particularly relevant for understanding the NCC's evolution from minimal female participation to current targets of 40% female enrollment by 2025 (Singh et al., 2024).

Bakshi's (2006) seminal work on women in the Indian Armed Forces provides crucial insights into the challenges faced by female personnel, from recruitment through career progression. Her research, based on personal experience as a former officer, highlights the importance of adequate infrastructure, training adaptation, and cultural sensitivity in supporting women's integration (Bakshi, 2005).

Gender Integration in American Military Youth Programs

American research on JROTC has increasingly focused on demographic diversity and program outcomes. Studies consistently show that female JROTC participants demonstrate enhanced self-

esteem, leadership skills, and academic achievement compared to non-participants (Singh & Singh, 2025). However, challenges remain, including incidents of sexual misconduct by instructors and persistent gender stereotypes within program cultures.

Methodology

This study employs qualitative content analysis of secondary sources to examine gender inclusion in NCC and JROTC programs. The research synthesizes academic literature, government reports, policy documents, and media coverage to develop a comprehensive understanding of current practices and challenges. Data sources include peer-reviewed articles from journals such as the Indian Journal of Gender Studies (2025), government publications from India's Ministry of Defence and the U.S. Department of Defense, and reports from research institutions. The analysis focuses on identifying patterns, trends, and policy implications while maintaining critical engagement with both successes and limitations in gender inclusion efforts.

The comparative approach allows for cross-national learning while recognizing the distinct cultural and institutional contexts that shape each program's approach to gender inclusion. This methodology aligns with feminist research principles that emphasize the importance of context-sensitive analysis and the inclusion of women's experiences and perspectives (Centre for Women's Development Studies, 2025).

Historical Evolution of Gender Inclusion

National Cadet Corps (India)

The NCC's journey toward gender inclusion reflects broader changes in Indian society's approach to women's rights and opportunities. Established in 1948, the program initially operated with minimal female participation, reflecting the prevailing social norms of post-independence India (Drishti IAS, 2025). The formal opening to female cadets in 1963 marked an important policy shift, though actual participation remained limited for decades. A significant transformation began in the 2010s, with female enrollment rising from

approximately 13% in 2010 to 35% by 2023 (Singh, 2024). This dramatic increase reflects both targeted policy interventions and changing social attitudes toward women's participation in public life. The government's announcement of a 40% female enrollment target by 2025 demonstrates institutional commitment to gender parity (Singh et al., 2024).

Key milestones include the participation of all-female contingents in national parades and the establishment of women-only camps and competitions (VOA News, 2021). These initiatives serve both practical and symbolic functions, providing female cadets with leadership opportunities while challenging public perceptions about women's capabilities in military contexts.

Junior Reserve Officers' Training Corps (United States)

The JROTC's approach to gender inclusion has been shaped by broader civil rights legislation, particularly Title IX of the Education Amendments of 1972, which prohibited gender discrimination in federally funded educational programs. This legal framework provided a foundation for women's participation that was absent in the program's early decades.

Female enrollment in JROTC has stabilized at approximately 40% of total participants, representing significant progress from the program's historically male-dominated composition (Singh & Singh, 2025). However, this achievement has been accompanied by challenges, including documented cases of sexual misconduct by instructors that disproportionately affect female cadets.

The program's integration within the American public education system has facilitated gender inclusion by leveraging existing educational infrastructure and policies. This institutional embeddedness has both advantages and limitations, as it subjects JROTC to educational regulations while potentially limiting the program's ability to implement military-specific gender inclusion strategies.

Current Participation Patterns and Demographics

Quantitative Analysis

Contemporary data reveals substantial female representation in both programs, though with notable variations. The NCC's current female enrollment of approximately 35% represents more than a doubling from 2010 levels, with some states achieving near-parity (Singh, 2024). Regional variations are significant, with northeastern states and urban areas showing higher female participation rates than rural or traditional regions.

JROTC maintains relatively stable female enrollment at around 40% nationally, with variations across different service branches and geographic regions (Singh & Singh, 2025). The program's demographic composition includes substantial representation from minority communities, creating intersectional experiences for female cadets of color that require specific attention and support.

Qualitative Patterns

Research by Josephin (2017) on women's empowerment through NCC participation reveals important qualitative dimensions of female cadets' experiences. Her findings indicate that NCC participation enhances female cadets' confidence, leadership skills, and career aspirations, while also challenging traditional gender role expectations within families and communities. Female cadets consistently report that their participation in both NCC and JROTC provides valuable leadership experience and builds self-confidence (Singh, 2016). However, they also encounter gender-specific challenges including inadequate facilities, cultural resistance from some male peers, and limited female role models in leadership positions.

Institutional Challenges and Barriers

Infrastructure and Logistics

Both programs face significant infrastructure challenges in accommodating female participants effectively. In the NCC context,

Bakshi's (2005) research highlights persistent issues with accommodation facilities at camps, particularly in providing adequate privacy and safety measures for female cadets. These practical barriers can discourage participation and limit the full integration of female cadets into all program activities. The JROTC program benefits from its integration within existing school infrastructure, which typically includes gender-separated facilities. However, challenges arise in ensuring equal access to specialized equipment and training opportunities, particularly in programs that historically catered to male participants.

Cultural and Social Barriers

Cultural attitudes toward women's participation in military-related activities continue to influence enrollment and retention patterns in both programs. In the Indian context, research by Bhattacharyya (2012) emphasizes how traditional gender roles and family expectations can limit female participation, particularly in rural and conservative communities.

The intersection of gender with other social identities creates additional complexities. As feminist scholar Menon (2012) argues, the experiences of women from different caste, class, and regional backgrounds vary significantly, requiring targeted interventions to ensure inclusive participation.

Safety and Misconduct Concerns

Safety concerns represent a critical barrier to full gender inclusion in both programs. Recent investigations into sexual misconduct by JROTC instructors have highlighted the vulnerability of female cadets and the need for robust safeguarding measures (Singh & Singh, 2025). These incidents underscore the importance of comprehensive background checks, training programs, and reporting mechanisms to protect all participants.

In the Indian context, while systematic data on misconduct is limited, anecdotal evidence suggests that safety concerns influence parental decisions about female participation in NCC programs,

particularly those involving overnight camps or remote training locations (Singh, 2016).

Comparative Analysis: Convergences and Divergences

Policy Approaches

The two programs demonstrate different approaches to achieving gender inclusion, reflecting their distinct institutional contexts and legal frameworks. India's NCC has adopted explicit numerical targets and specialized programs for female cadets, reflecting a proactive approach to addressing historical underrepresentation (Singh, 2024). This strategy aligns with broader Indian policy initiatives such as the National Education Policy 2020, which emphasizes gender inclusion as a cross-cutting priority (National Education Policy and Gender Inclusion, 2020).

The JROTC's approach has been more regulatory, relying on existing anti-discrimination legislation and educational policies to ensure equal access. While this framework provides legal protections, it may be less effective in addressing informal barriers and cultural resistance to gender inclusion.

Institutional Culture and Leadership

Both programs have made efforts to promote female leadership, though with varying degrees of success. The NCC's highlighting of female contingents in national ceremonies serves important symbolic functions while providing concrete leadership opportunities for female cadets (VOA News, 2021). However, research suggests that women remain underrepresented in senior cadet positions and instructor roles.

JROTC programs report increasing numbers of female cadets in leadership positions, though cultural resistance from some male participants persists (Singh & Singh, 2025). The program's integration within educational institutions provides additional oversight and support for addressing discriminatory attitudes, though implementation varies across different schools and regions.

Outcomes and Impact

Research indicates positive outcomes for female participants in both programs, including enhanced self-confidence, leadership skills, and career aspirations (Josephin, 2017; Singh & Singh, 2025). However, the long-term impact on military recruitment and leadership representation requires further investigation. While both programs serve as potential pipelines to military careers, the actual transition rates and career progression of female alumni remain understudied.

Policy Recommendations

Institutional Reforms

Based on the comparative analysis, several key recommendations emerge for enhancing gender inclusion in both programs. First, comprehensive infrastructure development is essential to support full female participation (Bakshi, 2005). This includes adequate accommodation facilities, privacy measures, and safety protocols that address the specific needs of female cadets.

Second, mandatory gender sensitivity training for all instructors and senior cadets is crucial for creating inclusive environments. Such training should address unconscious bias, cultural stereotypes, and appropriate interaction protocols to ensure respectful treatment of all participants.

Third, the establishment of mentorship programs connecting female cadets with successful alumnae can provide role models and career guidance (Singh, 2024). These initiatives should be designed to address the intersectional experiences of women from different backgrounds and communities.

Policy Integration

The integration of gender inclusion objectives with broader educational and defense policies can enhance program effectiveness. In the Indian context, alignment with the National Education Policy 2020's gender inclusion goals can provide additional resources and institutional support for NCC initiatives (National Education Policy and Gender Inclusion, 2020).

For JROTC programs, strengthening connections with Title IX enforcement mechanisms and educational equity initiatives can help address persistent challenges and ensure consistent implementation across different institutions.

Monitoring and Evaluation

Both programs would benefit from regular gender-disaggregated data collection on enrolment, retention, leadership positions, and post-program outcomes. The establishment of external review mechanisms, potentially involving gender studies scholars and women's rights organizations, can provide independent assessment of inclusion efforts and recommend evidence-based improvements (Centre for Women's Development Studies, 2025).

Future Research Directions

Several areas warrant further investigation to enhance understanding of gender inclusion in youth military programs. Longitudinal studies tracking the career trajectories and life outcomes of female alumni from both NCC and JROTC would provide valuable insights into the long-term impact of participation (University Grants Commission, 2025).

Intersectional analysis examining how gender intersects with other identities such as race, caste, class, and sexual orientation would contribute to more nuanced understanding of inclusion challenges and opportunities. Such research should involve collaboration with scholars specializing in different aspects of identity and discrimination.

Cross-national comparative studies involving additional countries and programs could identify best practices and innovative approaches to gender inclusion in military youth education (Women in Security, 2022). These investigations should examine both policy frameworks and implementation practices to develop comprehensive understanding of effective strategies.

Conclusion

The examination of gender inclusion in India's NCC and the United States' JROTC reveals significant progress alongside persistent challenges. Both programs have achieved substantial female representation and demonstrate positive outcomes for women participants (Singh, 2024; Singh & Singh, 2025). However, the journey toward full gender parity requires sustained institutional commitment, adequate resources, and continued attention to cultural and structural barriers.

The comparative analysis highlights the importance of context-specific approaches that recognize different cultural, legal, and institutional environments while maintaining commitment to fundamental principles of gender equality. The success of both programs in attracting and retaining female participants demonstrates the potential for military-affiliated youth organizations to serve as platforms for women's empowerment and leadership development.

Moving forward, the integration of feminist theoretical insights with practical policy interventions offers the most promising path for enhancing gender inclusion (John, 2018). This requires ongoing collaboration between program administrators, gender studies scholars, and women's rights advocates to ensure that youth military education serves all participants equitably and effectively.

The stakes of this work extend beyond the programs themselves to encompass broader questions of gender equality, citizenship, and democratic participation. As Bhasin (2021) observed, when women enter traditionally male-dominated spaces, they transform not only those institutions but also create new possibilities for gender relations and social change. The continued evolution of NCC and JROTC toward fuller gender inclusion thus represents both an institutional achievement and a contribution to broader social transformation.

Reference

1. *Bakshi, D. (2006). In the line of fire: Women in the Indian Armed Forces. Foundation for Universal Responsibility of His Holiness the Dalai Lama.*
2. *Bakshi, D. (2005). Training of women cadets in the army: Some issues and challenges. USI Journal, 135(561), 364-375.*
3. *Bhasin, K. (2021). Understanding gender. Kali for Women.*
4. *Bhattacharyya, A. (2012). Women in military in India: The cry for parity. Mediterranean Journal of Social Sciences, 3(2), 317-324.*
5. *https://www.cwds.ac.in*
6. *https://www.drishtiias.com/daily-updates/daily-news-analysis/women-in-indian-armed-forces*
7. *John, M. E. (2018). Feminism and the discipline of sociology in India. In G. Chadha & M. T. Joseph (Eds.), Re-imagining sociology in India: Feminist perspectives (pp. 45-62). Routledge.*
8. *Josephin, V. P. D. (2017). Women empowerment through NCC. Global Research Publications.*
9. *Menon, N. (2012). Seeing like a feminist. Penguin Books India.*
10. *Menon, R. (2023). India on their minds: 8 women, 8 ideas of India. Women Unlimited.*
11. *National Education Policy and Gender Inclusion. (2020). Policy framework for gender equality in education. Ministry of Education, Government of India.*
12. *Singh, A., & Singh, Y. (2024). Women in combat: The rise of women in defense forces. Management Journal for Advanced Research, 4(4), 155-158.*
13. *Singh, A. (2024). Status quo of women's representation in Indian defense forces: An analysis of changing facets. SSRN Electronic Journal. https://doi.org/10.2139/ssrn.4779975*
14. *Singh, A., & Singh, R. (2025). Multiple perspectives examining how a Junior Reserve Officers' Training Corps (JROTC) program affects student development: A case study. Liberty University Research Symposium.*

15. *University Grants Commission. (2025). UGC-CARE list of quality journals. https://www.ilovephd.com/ugc-approved-care-journals-list/*
16. *VOA News. (2021, September 29). India's elite military academy to open doors to women. https://www.voanews.com/a/india-s-elite-military-academy-to-open-doors-to-women/6250074.html*
17. *Women's and gender history in India: Between academia and activism. (2019). Books OpenEdition, 91-104.*
18. *Women in Security. (2022). How to integrate gender perspective in military education and training. SEESAC Regional Study.*

Paper Received : 04 April, 2025 ***Paper Accepted : 20 July, 2025***

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 68-73

वेद में वर्णित वानस्पतिक औषधियाँ

*प्रो० आशा गुप्ता **

सारांश

वेदों में वनस्पतियों को देवता माना गया है और इन औषधीय पौधों के लिए स्तुतपरक मंत्रों का भी प्रयोग किया गया है। ऋग्वेद में ओषध सूक्त के अन्तर्गत चिकेत्सीय ज्ञान और प्रयोग के विषयमें विस्तृत रूप से बताया गया है। ओषधि वनस्पति को माता के समान हितकारी बताया गया है।

***मूल शब्द** – सुश्रुत, अक्ष, अवि, अशोक, अश्वत्थ, अश्वावती, उच्छुष्मा, उदुम्बर, उर्वारु, देवी, न्यस्तिका, नलद, नराची, नागकेशर, पलाश, पिप्पली, पीलु, पुण्डरीक पुनर्नवा, पृश्निपर्णी, बला, ब्राहनी, भगवती, भण्डूकी*

सृष्टि के प्रारंभ से ही मानव जीवन वनस्पतिमय था। वन्य प्रदेशों में वनस्पतियों का आधिक्य था और ग्रामीण क्षेत्र में भी उनकी बहूलता थी यही कारण था कि मानव अपने दैनन्दिन आवश्यकताओं की पूर्ति उसी माध्यम से करता था। आहार, वस्त्र, सैय्या, स्नान, अनुलेपन, अंगराग, शृंगार प्रसाधन, गृह निर्माण के नाना उपकरणों इत्यादि में पौधों का प्रयोग किया जाता रहा है। यज्ञों में वनस्पतियों का विशेष उपयोग था यज्ञशाला के निर्माण से लेकर यज्ञ की परिधि, यूप तथा विविध पात्रों तक में विभिन्न वनस्पतियों का प्रयोग किया जाता था। सोम तो यज्ञों में एक प्रधान द्रव्य था जिसे ओषधिराज की संज्ञा से विहित किया गया। मानव जीवन का सुख समृद्धि में वनस्पतियों का महत्वपूर्ण स्थान था। यही कारण है कि वैदिक वाङ्मय में ओषधि–वनस्पतियों की स्तुति में अनेक मंत्र उपलब्ध होते हैं। सर्वप्रथम में ऋग्वेद के ओषधि सूक्त के द्वारा हमें ओषधि, उनके प्रकार चिकित्सकीय प्रयोग एवं औषधियों की विभिन्न उपयोगिताओं के विषय में ज्ञान प्राप्त होता है। यजुर्वेद और अथर्ववेद में ओषधियों का वृहद विवरण प्राप्त होता है। अथर्ववेद को भिषग्वेद या भैषज्यवेद भी कहा जाता है। चरक और सुश्रुत[1] ने आयुर्वेद को अथर्ववेद का उपांग (उपवेद) बताया है।

* *संस्कृत विभाग, रणवीर रणंजय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अमेठी, डॉ० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या, उत्तर प्रदेश*

मानव में प्रकृति के साहचर्य से वनस्पतियों का ज्ञान प्राप्त किया। जैसे–जैसे आवश्यकताएं बढ़ती गई वैसे–वैसे वनस्पतियों का प्रयोग क्षेत्र विस्तुत होता गया। प्राचीन महर्षियों ने वर्ण, पत्र, पुष्प, फल, कांड आदि अवयवों की विशेषताओं, उदभवस्थानों तथा गुण कर्म का सूक्ष्म निरीक्षण कर वनस्पतियों का विभिन्न वर्गों में बांटा। सामान्य रूप से छोटे पौधों को ओषधि और वृक्षों को वनस्पति शब्द से सम्बोधित किया।

जबसे मानव शरीर का प्रादुर्भाव हुआ तभी से रोगों की भी उत्पत्ति हुई और इस निवारण हेतु 'ओषधि वनस्पति' का औषध रूप में प्रयोग प्रारम्भ हुआ। ज्वर, यक्ष्मा, बलास (कफल रोग) आनुवांशिक रोग एवं अन्य स्त्रीरोग जो उस प्राचीनकाल से आज भी उसी रूप में मानव शरीर का क्षय करने वाले एवं वेदना प्रदायक है, की चिकित्सा इन औषधियों के माध्यम से तब भी उसी प्रकार की जाती थी जैसा कि आज के वैज्ञानिक युग में किया जाता है।

हमारी संस्कृत में प्राचीनकाल से ही 'तुलसी' के पौधे को मध्य–आंगन में लगाने का जो परंपरा रही है वह केवल श्रद्धा एवं भक्ति को प्रयोजन ही नहीं बल्कि यह पौधा कई मीटर की परिधि में रोगाणुओं को मार देता है। इसी तरह 'पीपल' पर हम जल चढ़ाते हैं तो पीपल के बीच जल स्पर्श द्वारा एक चक्र का निर्माण होता है और पीपल स्थित ओषधीय गुण को हम आत्मसात कर लेते हैं। हमारे देश में दीपावली के अवसर पर सरसों के तेल का दीपक जलाते हैं इसीलिए नहीं कि हमारे देश में सरसों तेल की अधिकता है बल्कि इस तेल से रोगाणुओं (बैक्टीरिया) को नष्ट करने की क्षमता होती है।

ऋग्वेद में ओषधियों को मानवसृष्टि से पूर्व उत्पन्न होने वाली कहा गया है।[2] ओषधियाँ मातृवत् हितकारिणी होती हैं, अतः उन्हें 'माता' कहा गया है।[3] ओषधियाँ संसार में हजारों स्थानों पर उत्पन्न होकर मानव मात्र के व्याधिजन्य दुःखों को दूर करके उन्हें संरक्षण प्रदान करती है।[4] ऋग्वेद में चार प्रकार कही गई हैं– फलयुक्त, फलरहित, पुष्पयुक्त एवं पुष्परहित।[5] ऋग्वेद में 'अक्ष' शब्द का प्रयोग किया गया है। इसका अर्थ है 'रथ का एक भाग धूरा'। ऋग्वेद[6] और अथर्ववेद[7] में इस शब्द का प्रयोग 'पासा' (जुआ खेलने का साधन) के अर्थ में होता है, किन्तु छान्दोग्य उपनिषद्[8] में अक्ष शब्द विभीदक (बहेड़ा) के फल का बोधक है। आयुर्वेदिक मत से यह कड़वा, कसैला, दस्तावर, पाक के समय मधुर, नेत्रों को हितकारी केशवर्धक तथा स्वरभंग, नासा रोग, रुधिर

दोष, कण्ठरोग, हृदय रोग एवं रोग कृमियों का नाशक है। विभिदक की छाल, अल्परक्त, पांडुरोग एवं श्वेत कुष्ठ रोग में लाभदायक है। इसके बीज वमन, नेत्रव्रण को दूर करने वाले एवं वातनाशक होते हैं।[9] यह 'त्रिफला' में प्रयुक्त तीन द्रव्यों में से एक है।[10] अन्य दो द्रव्य हैं आमलकी (आँवला) एवं हरीतकी (हरड़)।

चरक संहिता के अनुसार विभीतक (बहेड़ा) के फल की मजा का लेप शोध एवं उससे उत्पन्न होने वाली दाह और वेदना से शांति प्रदान करता है।[11] बहेड़ा तथा अन्य अवयवों की छाल का चूर्ण शहद के साथ प्रयोग करने से कफज एवं पित्तज प्रमेह में लाभ प्रदान करता है।[12] इसका वानस्पतिक नाम 'टर्मिनेलिया बलरिका (Terminalia Ballirica) है और यह काम्ब्रेटेसी (Combretaceae) अर्थात् 'हरितकीकुल' की वनस्पति है इसका वृक्ष 60 से 100 फुट ऊँचा होता है। ओषधि के रूप में प्रयोग किया जाए तो इससे अम्लपित्त, अग्निमांद्य, अजीर्ण, दाह आदि उदरव्याधियों का निवारण होता है। '**<u>अघद्विष्टा</u>**'– अर्थात् पाप का नाश करने वाली। विद्वानों ने इसे 'दूर्वा' (दूब) कहा है। इसका उल्लेख 'अथर्ववेद' में हुआ है।[13] दूर्वा के तीन भेद बताए गए हैं– नील दुर्वा, श्वेत दुर्वा एवं गण्डदूर्वा। नील दुर्वा को ही शतपर्विका, सहस्रवीर्या एवं शतवल्ली कहा जाता है जो अनेक प्ररोहों वाली होती है।[14] इसके अतरिक्त इसे अमरी, अमृता अनुवल्लिका, असितालता, बहुवीर्य, हरसालिका, हरिता, महौषधि, एवं मंगला भी कहा जाता है। आयुर्वेदिक दृष्टि से दुर्वा–अरुचि, वमन, दाह, मूर्च्छा एवं कफनाशक तथा तृप्तिदायक है।[15] दूब का वैज्ञानिक नाम 'सिनोडोन डेक्टीलोन (Cynodon Dectylon) है। अजश्रृंगी– अथर्ववेद में अजश्रृंगी ओषधि का उल्लेख हुआ है। इसे वायु, जल और मलिन स्थानों पर उत्पन्न होने वाली 'अप्सरसो' (रोग कृमियों) को नष्ट करने वाली ओषधि कहा गया है। इसकी गंध तीव्र होती है।[16] इसका वैज्ञानिक नाम 'पिष्टेकिया इन्टिजेरिया' बताया गया है। यह कड़वी, कसैली, उष्ण तथा वात, कफ, क्षय, ज्वर, श्वास, खांशी एवं वमन को नष्ट करने वाली होती है।[17] **<u>अपस्कम्भ</u>**– अथर्ववेद में अपस्कम्भ का प्रयोग अतिविषाक्त अग्रभाग वाला (संभवतः बाण) अर्थ में हुआ है।[18] आचार्य सांयण इसे क्रमुक (सुपारी) वृक्ष स्वीकार करते हुए कहा है'' अपस्कम्यते विधार्यते अन्तरिक्षे इति अपस्कम्भः क्रमुकवृक्षः।[19] कौशिक सूत्र में इसे सर्पजन्य विष नाशक कहा गया है।[20] इसका वैज्ञानिक नाम है 'एरिका' 'कैटेचू' (Areca Catechue) है। यह भारी, शीतल रुक्ष, कसैली, अग्निप्रदीपक, रुचिकर और कफ, पित्त तथा

मुख्य की विरसता को दूर करने वाली ओषधीय गुणों से युक्त है। **अपामार्ग**— 'अपामार्ग' का प्रयोग अथर्ववेद में वहुशः किया गया है। इसे आधि एवं व्याधि दोनों की चिकित्सा में समान महत्वपूर्ण माना गया है। इससे क्रोध, दोष, अभिचार, दुःस्वज इत्यादि दूर करने वाली ओषधि बताया गया है।[21]

चरक के अनुसार अपामार्ग के साथ अन्य अवयवों संयोग— शिरःशूल, पीनस रोग, अधकपारी, अपस्मार और मूर्च्छा में लाभदायक होता है।[22] अपामार्ग का वनस्पतिक नाम 'एचीरेन्चस एस्पेरा' (Achyranchus Aspera) **अभया**— अनेक सूत्र ग्रन्थों में अभया को 'हरितकी' कहा गया है।[23] इसका वैज्ञानिक 'टर्मिनेलिया चेबुला' है। यह उदराग्निवर्द्धक, बुद्धिवर्द्धक, मधुरपाक, आयुवर्द्धक, नेत्रों को हितकारी, पुष्टिवर्द्धक, वायुवर्द्धक, श्वास, प्रमेह, अर्श, कुष्ठ, सूजन, उदररोग, स्वरभंग, विषमज्वर, गुल्म, ब्रण, वमन, हिचकी, हृदयरोगों, शूल यकृत तथा प्लीहा के रोग एवं कृमि नाशक है।[24]

अमृत— ऋग्वेद में पेय अमृत का निर्देश दिया गया है शतपथ ब्राह्मण में 'प्राण' एवं गोपथ ब्राह्मण में जल के रूप में प्रयोग किया गया है। डॉ0 प्रियव्रत शर्मा ने 'द्रव्यगुण विज्ञान' में गुडूची (गिलोय) को 'अमृत' कहा है। भावप्रकाश निघण्टु में भी अमृता अमृत वल्लरी इत्यादि नामों से विभूषित किया गया है।[25] यह उष्णु, बलदायक उदराग्निवर्द्धक, तृषा, आम, दाह प्रमेह खाँशी, पाण्डु, कामला, कुष्ठ वातरक्त, ज्वर, कृमि, बवासीर, हृदयरोग और और त्रिदोषनाशक होती है। कोरोना नामक महामारी में इस औषधि का प्रयोग रामबाण सिद्ध हुआ। **अर्क**— अथर्ववेद में अर्क (आक) को ताजीकारक (वीर्यवर्द्धक) औषधि कहा गया है।[26] श्वेतार्क को अलर्क, गणरूप, मन्दार, वसुक, सदापुष्प, बालार्क तथा प्रतापस कहा जाता है। रक्तार्क को अर्कपर्ण, विकीरण, रक्तपुष्प, स्फीट तथा सूर्य के समस्त पर्याय से जाना जाता है। इसके प्रयोग से— वातरोग, कुष्ठ, विष, व्रण, गुल्म, अर्श, कफ, उदररोग एवं कृमियों का शमन होता है। दर्द एवं सूजन को दूर करने के लिए मदार के पत्ते का लेप एक परम्परागत भारतीय चिकित्सा है। इसका वैज्ञानिक नाम 'कैलोट्रोपिस प्रोसीरा' (Clotropis Proceera) है। **अर्जुन**— अथर्ववेद में इसका अनेकशः उल्लेख हुआ है। यह भूरे रंग की लकड़ी वाला और हरे रंग की लकड़ी वाला होता है।[27]

भाव प्रकाश निघण्टु के अनुसार— अर्जुन वृक्ष की छाल का क्वाथ (काढ़ा) हृदय रोगों में उपयोगी है।[28] यह कसैला, उष्ण, मधुर, शीतल,

कान्तिजनक, व्रणशोधक, कफ, पित्त, दाह, प्रमेह, पाण्डुरोग, विषवाधा, रुधिर विकार बाधा को विनष्ट करता है। इसी तरह अनेक ओषधीय पौधे जैसे– अवि (कुलत्थ) अशोक, अश्वत्थ (पीपल) अश्वावती, इंद्राणी (इंद्रायण) उच्छुष्मा (कपिकच्छू या केवांच) उदुम्बर (गूलर), उर्वारु (उर्वारुक या ककड़ी) कनक्मक (धतूरा) कन्या (घृतकुमारी) कम्बला करंज, कुष्ठ, खदिर (खैर) गुल्गुलू (गुग्गुल) जीवन्ती तगर ताजद्भड़, (एरण्ड) तिल, दर्भ (कुश), दशवृक्ष, दिप्सौषधि (नागरमोथा या मोथा) देवी (काकमाची या मकोय) न्यस्तिका (शंखपुष्पी) नलद (उशीर) नराची, नागकेशर, पलाश, पिप्पली, पीलु, पुण्डरीक (कमल) पुनर्नवा, पृश्निपर्णी, बला, ब्राहनी, भगवती (सुभगा) भंड्गा, (भांग) भण्डूकी, (मण्दूकपर्णी) मदावती (द्राक्षा या अंगूर) मधु वनस्पति यव एवं यवपलाली, रामा, लांगली, वचा वरण इत्यादि द्वारा मानव कल्याण होता है।

वैदिक सभ्यता में वनस्पतियों को विशेष महत्त्व प्रदत्त है। आज के युग में जितनी तकनीकी प्रगति हुई है, चिकित्सा के क्षेत्र में नये–नये साधन आविष्कृत हुए हैं उतनी ही नवीन एवं प्राणघातक बीमारियाँ द्रष्टव्य हैं। यही कारण है कि मानव पुनः आयुर्वेद औषधि चिकित्सा एवं योग की ओर आशादृ ष्टि लगाए हुए हैं। जिस तरह पंच महाभूतों से हमारा निर्माण हुआ है उसी तरह वनस्पतियों का भी। यही कारण है कि उनमें विद्यमान औषधीय गुण हमारी आंतरिक स्थिति से मेल खाते हैं और हमारे शरीर में प्रदोष के व्यतिक्रम के परिणाम स्वरूप होने वाली व्याधियों को दूर करने में सामर्थ्यवान होते हैं। हम अंतः स्थिति से मेल खाते हैं और हमारे शरीर में त्रिदोष के व्यतिक्रम के परिणामस्वरूप होने वाली व्याधियों को दूर करने में सामर्थ्यवान होते हैं। हम जिस अन्न को ग्रहण करते है वह केवल हमारी भूख को ही नहीं शान्त करता अपितु वह हमें पौष्टिकता प्रदान कर हमारी प्रतिरोधक क्षमता को बढाता है।

अतएव ओषधीय पौधों को महत्त्व एवं उनको संरक्षण प्रदान करना प्रदान करना हमारा नैतिक धर्म है। ओषधीय पौधे मानव के लिए प्रकृतिदत्त उपहार है हमें इस उपहार को अपने प्राणों के समान सहेज कर रखना चाहिए।

संदर्भ

1. *इह खलुआयुर्वेदो नाम यदुपांगमथर्ववेदस्य–सुश्रुत सू0 1.6*
2. *ऋग्वेद 10/97/1*

3. *औषधिरिति मातस्तरतदो देवीरुप ब्रवे। ऋग्वेद 10/97/4*
4. *ऋग्वेद 10/97/4*
5. *याः फालिनीर्या अफला अपुष्पा, याश्च पुष्पिणीः। ऋग्वेद 10/97/15*
6. *ऋग्वेद 7.86.6, 10.34.1*
7. *अथर्ववेद 7.50.1, 7.50.9*
8. *छा0उ0–7.3.1*
9. *भाव0 हरिक्यादि0 34–36 पृ0 8–9*
10. *भाव0 हरिक्यादि0 42–43 पृ0 11*
11. *चरक संहिता– 12.71*
12. *च0चि0–6.35*
13. *अथर्ववेद 2.7*
14. *नील दुर्वारुहान्ताभागर्वी शतपर्विका– भाव0 गुड़्च्यादि0 164, पृ0 213*
15. *अजश्रृंग्यज रक्षः सर्वान् गन्धेन नाशय, अथर्व0 4.37.2*
16. *भाव0 हरिक्यादि0 170 पृ0 62–63*
17. *अपस्कम्भस्य शल्यान्निरवोचमहं विषम्। अथर्व0 4.6.4*
18. *कौ0 सू0– 28.2*
19. *अथर्ववेद 4.17 1–5 तक*
20. *चरक संहिता– 2.3 –6*
21. *पारस्कर गृह सूत्र 3.2.2.*
22. *भाव0 हारीतक्यादि– 1–33 पृ0 1–8.*
23. *गुड़ची मधुपर्णी स्यादमृतामृतबल्लरी। भाव0 गुड़्च्यादि0–6*
24. *अर्को अंगनांग संसमकं कृणोतु। अथर्व0 6.72.1*
25. *बभ्रार्जुन काण्डस्थ ....। अथर्व0 2.8.3*
   हरिता अर्जुना........................। अथर्व0 4.3.7.5
26. *भाव प्रकाश0 वटादि श्लोक– 26–27 पृष्ठ–344*

Paper Received : 15 May, 2025 **Paper Accepted : 18 June, 2025**

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 74-80

भारतीय शिक्षा प्रणाली में गुरुकुल परम्परा का योगदान और पुनर्पाठ

प्रो० अरुण कुमार सिंह *

सारांश

भारतीय शिक्षा की नींव गुरुकुल परम्परा रही है, जिसने ज्ञान के साथ चरित्र, संस्कार और सामाजिक जिम्मेदारी भी दी। गुरु–शिष्य का आत्मीय संबंध शिक्षा को गहरा और जीवनोपयोगी बनाता था। औपनिवेशिक काल में आधुनिक शिक्षा ने इसे पीछे धकेल दिया और शिक्षा केवल नौकरी तक सीमित हो गई। आज गुरुकुल परम्परा का पुनर्पाठ आवश्यक है ताकि हम अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ सकें। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में भी भारतीय ज्ञान परम्परा को पुनः स्थान देने का प्रयास किया गया है। यदि गुरुकुल की शिक्षण पद्धति को आधुनिक संसाधनों से जोड़कर अपनाया जाए, तो शिक्षा संपूर्ण और प्रभावी बनेगी। शिक्षा अब केवल डिग्री नहीं, जीवन को दिशा देने वाली होनी चाहिए। गुरुकुल के तत्वों को अपनाकर हम शिक्षा को पुनः सशक्त कर सकते हैं। इससे छात्रों का सर्वांगीण विकास होगा और शिक्षा प्रणाली का भविष्य उज्ज्वल होगा। गुरुकुल और आधुनिक शिक्षा के समन्वय से ही भारत की शिक्षा प्रणाली सशक्त होगी।

मूल शब्द *– गुरुकुल परम्परा, भारतीय शिक्षा प्रणाली, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020, समग्र विकास, सांस्कृतिक जड़े, राष्ट्रीय चेतना आदि।*

प्रस्तावना

भारतवर्ष की सांस्कृतिक और बौद्धिक परम्परा पूरी दुनिया में अद्वितीय रही है। इस परम्परा की आधारशिला जिस तत्त्व पर टिकी है, वह है–ज्ञान। भारतीय समाज ने ज्ञान को न केवल मोक्ष का साधन माना, बल्कि जीवन के प्रत्येक आयाम का आधार भी। भारत की शिक्षा पद्धति कभी मात्र नौकरी–केन्द्रित या औपचारिक नहीं रही, बल्कि यह संस्कार, आत्मबोध और चरित्र निर्माण पर आधारित रही है। इसी दृष्टिकोण ने गुरुकुल व्यवस्था को जन्म दिया, जो सहस्त्राब्दियों तक भारतीय समाज की बुद्धिक–नैतिक ऊर्जा का केन्द्र बनी रही।

* *इतिहास विभाग, डी.ए.वी.पी.जी. कालेज, महाराजा सुहेलदेव विश्वविद्यालय, आजमगढ़, उ०प्र०*

गुरुकुल परम्परा केवल एक शैक्षिक ढांचा नहीं थी, बल्कि एक जीवंत संस्था थी, जहाँ विद्यार्थी केवल अक्षरज्ञान ही नहीं, बल्कि जीवन–दर्शन, अनुशासन, सेवा, सहिष्णुता, और समर्पण जैसे गुणों का भी अर्जन करता था। गुरुकुल केवल ज्ञान का केन्द्र नहीं, बल्कि एक संस्कृतिक प्रयोगशाला था, जहाँ गुरु और शिष्य मिलकर जीवन की पूर्णता की ओर अग्रसर होते थे। यह शिक्षा प्रणाली व्यक्ति को स्वावलंबी, आत्मचिन्तक, और समाज के प्रति उत्तरदायी नागरिक बनाने का कार्य करती थी। आज जब आधुनिक शिक्षा प्रणाली के समक्ष मूल्यों का संकट, उद्देश्यहीनता और संस्कारहीनता जैसी चुनौतियाँ हैं, तब यह अत्यंत आवश्यक हो गया है कि हम अपनी परम्परा के उन स्रोतों की ओर पुनः दृष्टि डालें, जो हमें जीवन के गहरे अर्थ से जोड़ते हैं। गुरुकुल परम्परा ऐसी ही एक अनुपम व्यवस्था थी, जिसे केवल अतीत के गौरव के रूप में नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के विकल्प के रूप में देखे जाने की आवश्यकता है।

गुरुकुल परम्परा का स्वरूप और मूल तत्व

भारतीय शिक्षा प्रणाली की जड़ों को यदि खोजा जाए, तो वह हमें सीधे वेदों, उपनिषदों और स्मृतियों के युग में ले जाती है, जहाँ शिक्षा को केवल जीविका का साधन नहीं बल्कि आत्मा के उन्नयन, समाज के पुनर्निर्माण और विश्व के कल्याण का माध्यम माना गया। इसी व्यापक दृष्टिकोण से उपजा भारतीय गुरुकुल परम्परा का वह स्वरूप, जिसमें गुरु और शिष्य के बीच का सम्बन्ध महज शिक्षक और विद्यार्थी का नहीं था, बल्कि वह एक विशिष्ट आध्यात्मिक, सामाजिक और नैतिक अनुशासन पर आधारित जीवन–सम्बन्ध था। गुरुकुल वह संस्था थी जहाँ शिष्य अपनी संपूर्ण जीवनचर्या गुरु के मार्गदर्शन में व्यतीत करता था। वह केवल अध्ययन के लिए नहीं, बल्कि जीवन जीने की कला सीखने के लिए वहाँ आता था। उसका दिन ब्रह्ममुहूर्त में जागने, स्नान करने, संध्या वन्दन और यज्ञ करने से आरंभ होता था और पाठ, ध्यान, गुरुसेवा, आत्मावलोकन तथा समवयस्क शिष्यों के साथ विचार–विनिमय करते हुए बीतता था। यहाँ शिक्षा का स्वरूप केवल बौद्धिक नहीं था, बल्कि वह शारीरिक, मानसिक, चारित्रिक और आत्मिक विकास को समान रूप से केंद्र में रखती थी। विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करते हुए सेवा, श्रम और आत्मसंयम जैसे गुणों में भी दक्ष होता था, जिससे वह जीवन की वास्तविकताओं से जुड़कर

परिपक्व बनता था। गुरु का स्थान इस व्यवस्था में अत्यंत उच्च था। वह केवल ज्ञानी या शिक्षक नहीं था, बल्कि वह मार्गदर्शक, पालक और जीवन–दृष्टा होता था। शिष्य उसके सामने केवल छात्र नहीं बल्कि आत्मीय सदस्य होता था, जिसे वह अपने पुत्र की भाँति देखता, समझता और मार्ग दिखाता था। गुरु के प्रति श्रद्धा और विश्वास शिष्य के चरित्र का हिस्सा बनते थे। यह संबंध उस आदर्श पर टिका था जिसमें गुरु की आज्ञा पालन करना, उसे प्रथम स्थान देना और उसके ज्ञान को आत्मसात कर अपने जीवन में उतारना मुख्य ध्येय होता था।

गुरुकुलों में दी जाने वाली शिक्षा अत्यन्त विविधतापूर्ण होती थी। वेद, वेदांग, उपनिषद, दर्शन, व्याकरण, गणित, खगोल, ज्योतिष, औषध–विज्ञान, नीतिशास्त्र, संगीत, चित्रकला, शिल्पकला और युद्धकला जैसे विषयों की शिक्षा दी जाती थी। साथ ही यह शिक्षा केवल किताबी नहीं होती थी, उसमें अनुभव और आचरण का समन्वय भी था।[1] विद्यार्थी पाठ्यक्रम से बाहर भी सीखता था कृ जैसे गुरु की सेवा, आश्रम की व्यवस्था में भागीदारी, अनुशासन का पालन, प्रकृति के साथ सामंजस्य और आचार–विचार की मर्यादा। ये सारे आयाम मिलकर शिष्य को एक संतुलित, उत्तरदायी और नैतिक व्यक्ति के रूप में विकसित करते थे। शिक्षा की प्रक्रिया भी विशेष प्रकार की थी कृ श्रवण, मनन और निदिध्यासन। पहले गुरु से सुनकर विषय को ग्रहण करना (श्रवण), फिर उस पर गहराई से विचार करना (मनन), और अंततः उसे अपने आचरण में उतारकर जीवन में जीना (निदिध्यासन)। यह शिक्षा प्रणाली शुष्क नहीं थी, उसमें आत्मीयता, आध्यात्मिकता और क्रियाशीलता का अद्भुत समन्वय था। विद्यार्थी केवल जानकार नहीं बनता था, वह विचारशील, विवेकशील और संवेदनशील नागरिक बनता था।

गुरुकुल परम्परा का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पहलू उसकी समावेशिता भी थी। जहाँ आज की शिक्षा प्रणाली जाति, वर्ग और आर्थिक स्तर के भेदभाव में उलझी हुई दिखाई देती है, वहीं प्राचीन गुरुकुलों में अनेक उदाहरण मिलते हैं जहाँ समाज के सभी वर्गों के शिष्य केवल अपनी योग्यता और निष्ठा के आधार पर शिक्षा प्राप्त करते थे। सत्यकाम जाबाल, जो ब्राह्मण नहीं थे, लेकिन उन्होंने ऋषि गौतम के गुरुकुल में स्थान पाया क्योंकि वे सत्य के पथ पर

अडिग थे। यह दर्शाता है कि भारतीय गुरुकुल व्यवस्था मूलतः योग्यता, ईमानदारी और जिज्ञासा को प्राथमिकता देती थी न कि जन्म को। गुरुकुल परम्परा में शिक्षा को जीवन से पृथक नहीं माना गया था। वह जीवन के प्रत्येक क्षेत्र से जुड़ी हुई थी–व्यवहार, संबंध, प्रकृति, समाज, धर्म और राष्ट्र। यही कारण है कि इस परम्परा से निकले व्यक्ति केवल विद्वान नहीं थे, वे समाज–संस्कृतिक नेतृत्वकर्ता, नीतिशास्त्री, सैनिक, राजपुरुष, चिकित्सक और संत भी बनते थे। यह परम्परा ज्ञान को पुस्तक तक सीमित नहीं रखती थी, वह उसे व्यवहार, अनुभव और सेवा से जोड़ती थी। गुरुकुल एक जीवंत संस्थान था, जिसमें शिक्षा के माध्यम से समाज के पुनर्निर्माण की क्षमता निहित थी। वह केवल व्यक्तिगत उन्नति का माध्यम नहीं था, बल्कि सामाजिक दायित्वों की पूर्ति का क्षेत्र भी था।

शिक्षा के विषय और पद्धति

प्राचीन भारतीय गुरुकुल परम्परा में शिक्षा केवल एक संकुचित पाठ्यक्रम का नाम नहीं थी, बल्कि यह जीवन की समग्र तैयारी का साधन थी। उसका उद्देश्य था कृ मनुष्य को सामाजिक, नैतिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक रूप से सशक्त बनाना। इस परम्परा में अध्ययन की जो विषयवस्तु थी, वह काल, परिस्थिति और समाज की जरूरतों के अनुरूप विकसित हुई थी। शिक्षा केवल श्रुतिगम्य नहीं थी, वह समझ, आचरण और अनुभव की त्रैणिक प्रक्रिया में विकसित होती थी। विषयों की दृष्टि से देखा जाए तो गुरुकुलों में शिक्षा का केंद्र वेद और वेदांग होते थे। वेद चार थे और उनके साथ शिक्षा के छह वेदांग पढ़ाए जाते थे। शिक्षा (उच्चारणशास्त्र), कल्प (अनुष्ठान), व्याकरण (भाषा संरचना), निरुक्त (शब्दों का अर्थ), छन्द (काव्यविधान) और ज्योतिष (काल–गणना)। इसके साथ–साथ उपनिषदों, दर्शनशास्त्र, न्याय, मीमांसा, आयुर्वेद, धनुर्वेद, संगीत, नाटक, गणित, खगोल, राज्यशास्त्र, नीति और साहित्य जैसे विषयों की शिक्षा भी दी जाती थी।[2] उल्लेखनीय है कि शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं थी। शिष्य अपने गुरु से सीधी श्रवण परम्परा के माध्यम से ज्ञान अर्जित करता था। वह गुरु के मुख से पाठ सुनता था, उसे कंठस्थ करता था, और फिर उस पर मनन तथा विश्लेषण करता था। यही प्रक्रिया 'श्रवण, मनन और निदिध्यासन' कहलाती थी।[3] इस त्रैणिक प्रक्रिया का

लक्ष्य केवल तथ्य स्मरण करना नहीं था, बल्कि ज्ञान का आत्मसात और अन्तर्मुखीकरण था।

पद्धति की दृष्टि से यह शिक्षा प्रणाली संवाद, स्मरण, अभ्यास, सेवा और अनुशासन पर आधारित थी। प्रश्नोत्तर की विधि, जिसे आज 'सवबतंजपब उमजीवक' कहा जाता है, वह भारतीय गुरुकुलों में पहले से ही प्रचलित थी। जैसे उपनिषदों में याज्ञवल्क्य और मैत्रेयी का संवाद, अथवा गार्गी और वाजसनेयी का तर्कपूर्ण प्रश्न उत्तर–यह सब संवादपरक शिक्षा पद्धति के अद्भुत उदाहरण हैं। शिक्षा में पाठ्य सामग्री से अधिक महत्व 'प्रेरणा' और 'अंतरंग सान्निध्य' का था। गुरुकुल पद्धति में शिक्षा व्यक्तिकेंद्रित होती थी, न कि भीड़ केंद्रित। एक गुरु सीमित संख्या में शिष्यों को पढ़ाता था और प्रत्येक शिष्य की रुचि, योग्यता और प्रवृत्ति के अनुसार शिक्षा का स्तर और दिशा तय करता था। यह वह शिक्षा थी जो 'नियोजन' नहीं, बल्कि 'प्रेरणा' से चलती थी। इतिहासकारों और शिक्षाविदों का मानना है कि नालंदा, तक्षशिला, विक्रमशिला, वल्लभी, उदंतपुरी जैसे प्राचीन विश्वविद्यालयों ने इस गुरुकुल परम्परा को ही संस्थागत रूप दिया था, जहाँ हजारों छात्र और सैकड़ों शिक्षक एक अनुशासित, आत्मनिर्भर एवं विद्वत्तापूर्ण जीवन व्यतीत करते थे।[4] इन शिक्षालयों में प्रवेश की कोई जातिगत या वर्गगत बाधा नहीं थी, बल्कि योग्य और जिज्ञासु छात्र को ही वहाँ स्थान मिलता था, चाहे वह किसी भी सामाजिक पृष्ठभूमि से हो।

समाज और राष्ट्र निर्माण में गुरुकुल परम्परा का योगदान

यह परम्परा न केवल ज्ञान का संचार करती थी, बल्कि अपने समय के राष्ट्र की रक्षा और नीति–निर्माण में भी सक्रिय भूमिका निभाती थी। महाभारत काल में द्रोणाचार्य और कृपाचार्य जैसे गुरु सिर्फ शिक्षाविद् ही नहीं, राजनीतिक सलाहकार और राष्ट्र–संरक्षक भी थे। आचार्य चाणक्य ने तक्षशिला विश्वविद्यालय में रहकर जिस राजनीति और अर्थनीति की शिक्षा दी, उसी से मौर्य साम्राज्य की नींव पड़ी। गुरुकुलों की शिक्षा प्रणाली का राष्ट्र–निर्माण में योगदान इस बात से भी समझा जा सकता है कि अंग्रेजी शिक्षा पद्धति लागू होने से पहले भारत विश्व का सबसे अधिक साक्षर और सांस्कृतिक रूप से समृद्ध राष्ट्र था। थॉमस मुनरो और विलियम एडम्स जैसे अंग्रेज प्रशासकों की

रिपोर्टों में यह स्वीकार किया गया है कि उन्नीसवीं सदी के पूर्वार्ध में ही भारत के लगभग हर गाँव में कोई न कोई पाठशाला (गुरुकुल या गुरुमुखी शिक्षा केन्द्र) अवश्य होती थी।

गुरुकुल परम्परा का विघटन और आज की जरूरत

गुरुकुल परम्परा भारतीय शिक्षा व्यवस्था की आत्मा थी, जहाँ शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान नहीं, बल्कि चरित्र निर्माण, सामाजिक उत्तरदायित्व और आध्यात्मिक विकास भी था। गुरु–शिष्य के संबंध आत्मीयता पर आधारित होते थे और शिक्षा जीवन के हर पक्ष को स्पर्श करती थी। किन्तु अंग्रेजी शासन के दौरान लॉर्ड मैकाले की शिक्षा नीति (1835) के माध्यम से ऐसी आधुनिक शिक्षा प्रणाली लाई गई जिसका उद्देश्य एक ऐसा वर्ग तैयार करना था जो औपनिवेशिक प्रशासन की सेवा कर सके।[7] इसके परिणामस्वरूप शिक्षा का उद्देश्य रोजगार प्राप्ति तक सीमित हो गया और भारतीय भाषाएँ, शास्त्र तथा सांस्कृतिक शिक्षा हाशिए पर चली गईं। इस परिवर्तन ने गुरुकुल परम्परा को कमजोर किया और शिक्षा को एक आत्मविहीन, परीक्षा–केंद्रित प्रक्रिया में बदल दिया, जिससे भारतीय समाज के नैतिक और सांस्कृतिक मूल्यों का क्षरण हुआ।

आज के वैश्विक और मूल्य–संकट के दौर में भारतीय गुरुकुल परम्परा का पुनर्पाठ अत्यन्त आवश्यक हो गया है। यह परम्परा न केवल ज्ञान अर्जन का माध्यम थी, बल्कि जीवन मूल्यों, नैतिकता और सामाजिक समरसता की शिक्षा भी देती थी। आधुनिक शिक्षा प्रणाली जहाँ मात्र रोजगार–केंद्रित हो गई है, वहीं गुरुकुल प्रणाली जीवन–केंद्रित थी। इसलिए आज के विद्यार्थियों में आत्मानुशासन, पर्यावरण–सम्वेदनशीलता, आचारसंहिता और सह–अस्तित्व जैसे गुण विकसित करने के लिए गुरुकुल के तत्वों को पुनः अपनाना जरूरी है।[8] नई शिक्षा नीति 2020 में भी भारतीय ज्ञान परम्परा को पुनः स्थान देने का प्रयास हुआ है, जो इस दिशा में एक सकारात्मक संकेत है। यदि गुरुकुल की शिक्षण–पद्धति को आधुनिक संसाधनों के साथ संयोजित किया जाए, तो यह भारतीय शिक्षा को उसकी सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ते हुए एक सशक्त और समग्र प्रणाली प्रदान कर सकती है।

निष्कर्ष

गुरुकुल परम्परा भारतीय शिक्षा की जड़ रही है, जिसने व्यक्तित्व विकास, नैतिकता और सामाजिक उत्तरदायित्व को समाहित करते हुए समग्र शिक्षा प्रदान की। आधुनिक शिक्षा प्रणाली में जिस प्रकार शिक्षा का स्वरूप बदल गया है और वह केवल ज्ञान व नौकरी तक सीमित हो गई है, उससे शिक्षा के व्यापक उद्देश्य प्रभावित हुए हैं। इस संदर्भ में गुरुकुल के मूल्यवान तत्वों का पुनः समावेश अत्यंत आवश्यक है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने इस दिशा में महत्वपूर्ण पहल की है, जिससे भारतीय ज्ञान परम्परा को पुनर्जीवित करने का मार्ग खुला है। अतः हम कह सकते हैं कि हम गुरुकुल की शिक्षण पद्धति, गुरु–शिष्य संबंध और जीवन मूल्यों को समकालीन शिक्षा प्रणाली में प्रभावी रूप से सम्मिलित करें, ताकि शिक्षा का उद्देश्य केवल प्रमाणपत्र प्राप्ति से आगे बढ़कर जीवन को दिशा प्रदान कर सके।

संदर्भ

1. *बद्री नारायण : भारतीय परम्परा और शिक्षा, पृष्ठ–211, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं. 2015.*
2. *डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकर : प्राचीन भारत में शिक्षा का इतिहास, पृष्ठ–58, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं. 2003.*
3. *डॉ. रामनाथ शुक्ल : उपनिषदों में शिक्षा दृष्टि, पृष्ठ–39, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, वाराणसी, सं. 1998.*
4. *आर. सी. मजूमदार : प्राचीन भारत का इतिहास, भाग–2, पृष्ठ–173–180, भारतीय विद्या भवन, मुम्बई, सं. 2010.*
5. *डॉ. सत्यकेतु विद्यालंकर : प्राचीन भारत में शिक्षा का इतिहास, पृष्ठ–58, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, सं. 2003.*
6. *डॉ. रामनाथ शुक्ल : उपनिषदों में शिक्षा दृष्टि, पृष्ठ–39, भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, वाराणसी, सं. 1998.*
7. *आर. सी. मजूमदार : प्राचीन भारत का इतिहास, भाग–2, पृष्ठ–173–180, भारतीय विद्या भवन, मुम्बई, सं. 2010.*
8. *Ministry of Education, Government of India: National Education Policy 2020, Chapter 4 & 22, Published by MHRD, 2020.*

Paper Received : 15 May, 2025 **Paper Accepted : 18 June, 2025**

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 81-86

डॉ० बी०आर० अंबेडकर के सामाजिक न्याय संबंधी विचारों की अवधारणा

डॉ० अंशु पांडेय *

सारांश

डॉ० भीमराव अंबेडकर सामाजिक न्याय के महान प्रणेता थे, वे शोषितों के मन मस्तिष्क और भावना में शोषण के विरुद्ध क्रांतिकारी विचार पैदा करने वाले एक महान क्रांतिकारी थे। डॉ अंबेडकर के विचारों से शोषित वर्ग में नई चेतना जागृत हुई और उनका आत्मसम्मान व आत्मविश्वास जागा। एक विद्वान का विचार है कि 'अंबेडकर के अध्ययन का विस्तार तथा उनकी दृष्टि की व्यापकता, विश्लेषण की गहनता व सोच की तार्किकता और कार्य के लिए उनके द्वारा दिए गए मानवीय सुझाव लोगों को क्रियाशील बना देते थे'[1] । उनका तर्क था कि एक राष्ट्र को अपने सभी नागरिकों, विशेषकर दलितों व उत्पीड़ित लोगों के लिए न्याय और समानता सुनिश्चित करनी चाहिए। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि सामाजिक न्याय के बिना राजनीतिक स्वतंत्रता निरर्थक है। उन्होंने ऐसी नीतियों की वकालत की जो शिक्षा, राजनीतिक प्रतिनिधित्व और आर्थिक अवसरों के माध्यम से हाशिए पर पड़े समूहों को सशक्त बनाएँ। उनकी दृष्टि में इन समुदायों के उत्थान के लिए सकारात्मक कार्य किए जायें और एक ऐसा न्यायपूर्ण समाज का निर्माण हो ,जहाँ सभी के साथ समानता का व्यवहार किया जाए। वे राजनीति को सामाजिक मुक्ति के एक साधन के रूप में देखते थे, और एक ऐसे लोकतांत्रिक ढाँचे की वकालत करते थे जो व्यक्तिगत अधिकारों का सम्मान करते हुए सामूहिक कल्याण को बढ़ावा दे। उनके विचार आज भी प्रासंगिक हैं और भारत में सामाजिक न्याय और समानता के लिए चल रहे संघर्षों के लिए मार्गदर्शक का काम करते हैं। इस मूल्यांकन के माध्यम से, हमारा उद्देश्य आंबेडकर की चिरस्थायी विरासत और एक अधिक समावेशी एवं समतामूलक समाज के निर्माण में उनके विचारों की प्रासंगिकता को उजागर करना है।

मूल शब्द *– न्याय, समतामूलक, धार्मिक – भेदभाव, अस्पृश्यता, निर्बन्धन, बिक्री तथा बेगार।*

* *एसोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, दयानंद गर्ल्स पी०जी० कॉलेज, सी०एस०जे०एम० विश्वविद्यालय, कानपुर*

डॉ० बी०आर० अंबेडकर की सामाजिक न्याय व्यवस्था स्वतंत्रता, समानता, एवं बंधुत्व पर आधारित है। यह एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जिसमें जीवन के सभी क्षेत्रों में मनुष्य और मनुष्य के बीच किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं होना चाहिए। वह सामाजिक, धार्मिक भेदभाव के विरोधी थे, व ऐसी सामाजिक व्यवस्था चाहते थे जिसमें मनुष्य की स्थिति और योग्यता उसकी उपलब्धि पर आधारित होती है, जहां कोई भी व्यक्ति अपने जन्म के कारण कुलीन या अछूत ना हो। डॉ० अंबेडकर ने कहा है कि सामाजिक न्याय की धारणा मैत्री भाव शुभ संकल्प कुछ ऐसे तत्व हैं जो सामाजिक न्याय की धारणा का निर्माण करते हैं और यह अवधारणा सभी नागरिकों को एक सूत्र में बंधने का कार्य करती है, जिससे भ्रातत्व में वृद्धि होती है। उनकी दृष्टि में भ्रातत्व सामाजिक न्याय की आधारभूत शिला है[2]। उन्होंने देश के सामाजिक रूप से उत्पीड़ित और आर्थिक रूप से शोषित लोगों के जीवन स्तर को ऊंचा उठने के लिए संविधान में उन्होंने अनेक प्रावधान किये।

भारत का संविधान जिसका, मसौदा अंबेडकर जी की अध्यक्षता में तैयार किया गया था, जिसमें यह सुनिश्चित किया गया था कि राज्य अपने सभी नागरिकों को स्वतंत्रता, समानता के साथ–साथ सामाजिक आर्थिक व राजनीतिक न्याय सुनिश्चित करेगा, साथ ही साथ देश में अस्पृश्यता, शोषण और प्रत्येक प्रकार के भेदभाव को मिटाएगा। वंचितों और दलितों के विकास के लिए विशेषाधिकार प्रदान किए जाएंगे और विभिन्न क्षेत्रों में इन वर्गों के विकास के लिए सतत कार्य भी किए जाने के लिए भी राज्य प्रतिबद्ध रहेंगे। भारतीय संविधान के अंतर्गत 'अनुच्छेद 14' में विधि के समक्ष 'सामाजिक समानता के अधिकार' का प्रतिपादन करते हुए कहा गया है कि – 'राज्य भारत के राज्य क्षेत्र में किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से या विधियों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा'।[3] 'अनुच्छेद 15' में कहा गया है कि 'राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूल, वंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई भी विभेद नहीं करेगा तथा कोई नागरिक केवल धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों और सार्वजनिक मनोरंजन के स्थान में प्रवेश या पूर्णतः या भागतः राज्य निधि से पोषित या साधारण जनता के उपयोग के लिए समर्पित कुओं, तालाबों, स्नानघरों, सड़कों और सार्वजनिक समागम के स्थान के उपयोग के संबंध में किसी भी निर्योग्यता दायित्व, निर्बन्धन या शर्त के अधीन नहीं होगा'। (भारत का संविधान, पृष्ठ. 12)[4]

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 16 के तहत सरकारी नौकरियों में नियुक्ति के लिए धर्म, वंश, जाति, उत्पत्ति, जनस्थान, निवास आदि किसी प्रकार के भेद के बिना सब नागरिकों को समान अवसर प्रदान किए जाने का प्रावधान किया गया है। साथ ही अनुच्छेद 16 (4) के अंतर्गत पिछले वर्गों एवं अनुसूचित जाति, जनजाति के आरक्षण संबंधी नियमों का पूर्णरूपेण पालन हो, इस हेतु यह उपबंध किया गया है कि राज्य पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जाति, व जनजातीय, जिनका प्रतिनिधित्व राज्य के अधीन सेवाओं में निर्धारित अनुपात में नहीं है, राज्य के अधीन सेवाओं में किसी वर्ग या वर्गों के पदों पर प्रोन्नति के मामलों में आरक्षण के लिए उपबंध करने से निवारित नहीं करेगा। 'सामाजिक न्याय' की दिशा में भारतीय संविधान का 'अनुच्छेद 17' अत्यंत महत्वपूर्ण है जिसमें डॉ० बी०आर० अंबेडकर ने 'अस्पृश्यता कानून' को खत्म किया। डॉ० भीमराव अंबेडकर लिखते हैं कि अस्पृश्यता का अंत किया जाता है और उसका किसी भी रूप में आचरण निषिद्ध किया जाता है।' अस्पृश्यता से उपजी किसी निर्योग्यता को लागू करना अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा। 'अनुच्छेद 19' में उन्होंने भारत के राज्य क्षेत्र के किसी भी भाग में निवास करने और बस जाने तथा कोई आजीविका, व्यापार का कारोबार करने का अधिकार दिया। 'अनुच्छेद 21' में प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण किया गया है, जिसके अंतर्गत स्पष्ट किया गया है कि किसी व्यक्ति को उसके प्राण या देहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा अन्यथा नहीं। इसी प्रकार 'अनुच्छेद 23' में उन्होंने मानव के दुर्व्यापार और बलात श्रम का प्रतिशोध किया तथा स्पष्ट किया के इस उपबंध का कोई भी उल्लंघन अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा। 'अनुच्छेद 24' में बाल श्रम का प्रतिशोध किया गया है तथा अनुच्छेद 39 में समान कार्य के लिए सभी स्त्री पुरुषों को सम्मान वेतन का प्रावधान भी किया गया है। इस प्रकार डॉ० भीमराव अंबेडकर ने भारतीय संविधान के अंतर्गत सामाजिक न्याय सभी नागरिकों को समान रूप से प्रदान करने का संकल्प लिया।

डॉ० भीमराव अंबेडकर समाज में पुरुषों के साथ – साथ महिलाओं को भी समान अवसर प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध रहे हैं, उनका मत था कि नारी की प्रगति के बिना समाज की प्रगति संभव नही है। डॉ० अंबेडकर ने स्त्रियों के स्थान को उत्कृष्ट रूप से मानते हुए विकास मानदंडों के रूप में स्वीकार किया है[5]। उन्होंने स्त्रियों के आर्थिक उत्थान एवं राष्ट्रीय आर्थिक विकास में भागीदारी के लिए नारी शक्ति का संगठन होना आवश्यक माना है। डॉ अंबेडकर के अनुसार स्त्रियों को संपत्ति का अधिकार दिए बिना उन्हें की स्वतंत्रता और

समानता का अधिकार प्रदान किया जाना महत्वहीन है। उन्होंने कहा कि "मैं किसी समाज की प्रगति इस आधार पर मापता हूँ, कि इस समाज में महिलाओं ने किस सीमा तक प्रगति की है"। वे नारी संगठन के बहुत बड़े पैगम्बर थे। उनका विश्वास था कि यदि एक बार नारी यह निश्चय कर ले तो समाज की बुराइयों को दूर करने और समाज सुधार में उल्लेखनीय योगदान दे सकती हैं।

समाज में महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त हो सके इसके लिए अंबेडकर ने उल्लेखनीय एवं अविस्मरणीय कार्य किया उन्होंने संविधान में लिंग के आधार पर पुरुष और स्त्री के बीच सामाजिक भेद को समाप्त किया। अनुच्छेद 14–16 के द्वारा संविधान में स्त्री पुरुष में कोई भेद न मानते हुए दोनों को समान दर्जा प्रदान किया गया है। अवयस्क बच्चों और स्त्रियों की बिक्री तथा बेगार लेने पर भी संवैधानिक प्रतिबंध लगाया गया। संविधान द्वारा नारी को स्वतंत्रता एवं समानता का अधिकार प्रदान किए जाने से नारी की सामाजिक स्थिति में सुधार तो अवश्य हुआ किंतु स्वतंत्रता एवं समानता की संवैधानिक प्रत्याभूति मात्र से सदियों अपेक्षित नारी को परंपरागत दासता से मुक्ति मिल पाएगी, इस बात पर डॉ० भीमराव अंबेडकर को संदेह था। उनका मानना था कि विवाह एवं संपत्ति पर अधिकार संबंधी कानून में क्रांतिकारी परिवर्तन लाए बिना नारी की मुक्ति संभव नहीं है। अपने इस विश्वास को मूर्तरूप देने की दृष्टि से उन्होंने एक व्यापक सामाजिक विधान की रूप रेखा निर्मित की जिसे 'हिंदू कोड बिल' के नाम से जाना जाता है। 'हिंदू कोड बिल' में विवाह की निर्धारित तत्कालीन न्यूनतम आयु में वृद्धि, एक विवाह की अनिवार्यता,अंतर्जातीय विवाह को मान्यता, स्त्रियों को पुरुषों के समान तलाक का अधिकार, तलाकशुदा स्त्री को अपने पति से भरण–पोषण प्राप्त करने का अधिकार, विधवा पुनर्विवाह को मान्यता, स्त्री को पुत्री, पत्नी एवं मां के रूप में पारिवारिक संपत्ति पर अधिकार, स्त्री को गोद लेने का अधिकार आदि का प्रावधान किया।

स्वतंत्र भारत के प्रथम कानून मंत्री के रूप में 'हिंदू कोड बिल' अंबेडकर ने संसद के सम्मुख सर्वप्रथम 5 फरवरी 1951 को प्रस्तुत किया। बिल का औचित्य दर्शाते हुए उन्होंने संसद में कहा कि – यदि आप हिंदू व्यवस्था, हिंदू संस्कृति और हिंदू समाज की रक्षा चाहते हैं तो उनमें जो दोष पैदा हो गए हैं उनको सुधारने में आपको तनिक भी झिझक नहीं होना चाहिए। 'हिंदू कोड बिल' हिंदू व्यवस्था के केवल उन्हें अंशों सुधार चाहता है जो विकृत हैं उससे अधिक कुछ भी नहीं, अतः आप इसका समर्थन अवश्य करें। अंबेडकर जी का

कहना था कि वर्तमान हिंदू कानून संविधान में वर्णित मूल अधिकारों के प्रतिकूल है। हिंदू कोड बिल का उद्देश्य इसे संविधान सम्मत बनाना था। हिंदू कोड बिल में मौजूदा नियमों में सिर्फ चार सूत्र जोड़े गए थे, वह इस प्रकार हैं –

- जन्म–जात अधिकार के सिद्धांत का उन्मूलन
- महिलाओं को संपत्ति में संपूर्ण अधिकार
- पिता की संपत्ति में पुत्री का अधिकार
- तलाक की व्यवस्थाएं[6]

डॉ० अंबेडकर विवाह और संपत्ति संबंधी कानून में व्यापक परिवर्तन लाना चाहते थे और इसीलिए उन्होंने हिंदू कोड बिल प्रस्तुत किया। जिस समय यह बिल संसद में प्रस्तुत किया गया, उस समय संसद में कांग्रेस दल भारी बहुमत में था। कांग्रेसी एवं विपक्षी सांसदों सहित आम जनता में इस बिल को लेकर अत्यधिक विवाद पैदा हो गया। परंपरावादी विचारधारा के लोग बिल का विरोध कर रहे थे, जबकि प्रगतिशील विचारधारा के लोग इसका समर्थन। संसद और संसद के बाहर रूढ़िवादी तत्वों के विरोध के कारण 'हिंदू कोड बिल' मूल रूप में पारित नहीं हो सका तथा उसे स्थगित करना पड़ा। 'हिंदू कोड बिल' के प्रति तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू एवं कांग्रेसियों के उदासीन एवं नकारात्मक रूख तथा कतिपय अन्य नीतिगत विषयों पर असहमति के कारण डॉ० अंबेडकर ने सन 1951 में कानून मंत्री के पद से त्यागपत्र दे दिया। लेकिन आगे चलकर अलग–अलग अधिनियमों के रूप में 'हिंदू कोड बिल' संसद द्वारा पारित कर दिया गया।

डॉ० बी०आर० अंबेडकर भारत के आधुनिक निर्मित में से एक माने जाते हैं, उनके विचार व सिद्धांत भारतीय राजनीति के लिए हमेशा ही प्रासंगिक रहे हैं, वह एक ऐसी व्यवस्था के हिमायती थे, जिसमें राज्य सभी नागरिकों को समान राजनीतिक अवसर दे तथा धर्म, जाति, रंग, और लिंग के आधार पर भेदभाव न किया जाए। उनका यह राजनीतिक दर्शन व्यक्ति और समाज के परस्पर संबंधों पर बल देता है। उनका दृढ़ विश्वास था कि जब तक आर्थिक और सामाजिक विषमता समाप्त नहीं होगी, स्त्रियों को पुरुषों के बराबर अधिकार प्राप्त नहीं हो पाएंगे। अतः ये डॉ० भीमराव अंबेडकर के ही प्रयास थे कि समानता संबंधी विचारों को और अधिक बल मिला तथा समाज के वंचित वर्ग के लिए के लिए तीव्रगति से सामाजिक प्रगति का मार्ग प्रशस्त हुआ। भारत में शोषित व वंचित वर्गों के विकास एवं उनकी स्थिति में समानता संबंधी परिवर्तन लाने में डॉ० अंबेडकर का योगदान चिरस्मरणीय रहेगा।

सन्दर्भ

1. *अंबेडकर बी०आर०, अनिहिलेशन ऑफ कास्ट, पृष्ठ, 29–30*
2. *जाटव, डी०आर०, सामाजिक न्याय का सिद्धांत, समता साहित्य प्रकाशन जयपुर पृष्ठ 68*
3. *सिंह राम गोपाल (1992), डॉ० बी०आर० अंबेडकर एक समाज वैज्ञानिक, म०प्र० हिंदी ग्रंथ अकादमी, भोपाल, पृष्ठ 28*
4. *भारत का संविधान आलिया लॉ हाउस प्रकाशन, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश पृष्ठ–12*
5. *गुप्ता, राजेश, डॉ० अंबेडकर और सामाजिक न्याय, पृष्ठ–92*
6. *कुबेर, डब्ल्यू०एन० (2013), पृष्ठ–58*

Paper Received : 08 April, 2025 ***Paper Accepted : 15 July, 2025***

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 87-91

प्राचीन भारतीय राज चिन्तकों दृष्टि में दण्डनीति

डॉ० दिनकर त्रिपाठी *

सारांश

प्राचीन भारतीय राज चिन्तकों ने राजशास्त्र को जिस ढंग से प्रस्तुत किया है, उसमें 'दण्ड' का सिद्धान्त सर्व–प्रधान और विशेष महत्त्व का है। इसी कारण राजनीति शास्त्र को भी उन्होने 'दण्ड नीति' का नाम दिया है। राजा राज्य का शासन इसलिए करता है, क्योंकि 'दण्ड' का प्रयोग उसमें निहित है। आदर्श युग में हुए स्खलन से मत्स्य न्याय प्रारम्भ हुआ, जिसमें मानव जीवन, सम्पत्ति एवं धर्म पर संकट आया जिसके निवारणार्थ तथा धर्म की स्थापना हेतु ब्रह्मतेजोमय दण्ड की उत्पत्ति हुई।

मूल शब्द *– दण्ड, राजधर्म, रक्षा, प्रजा, शासन।*

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में दण्डनीति के सन्दर्भ में कहा गया है कि ''आन्वीक्षकी, त्रयी और वार्ता का योगक्षेम (फलना फूलना) दण्ड (व्यवस्था) पर ही निर्भर करता है। उनकी नीति को 'दण्डनीति' कहते हैं। प्राचीन भारत में दण्ड की अवधारणा उस शक्ति से रही है, जिस के द्वारा समाज की शक्तियाँ नियंत्रित होती रही हैं। अपराध निवृत्ति एवं धर्म की रक्षा तथा धर्म के क्रियान्वयन के लिए दण्ड की उत्पत्ति हुई है, ऐसी स्वीकृति है।''[1] दण्ड की उत्पत्ति की दार्शनिक विवेचना और उसके मूलभूत सिद्धान्तों का प्रतिपादन परवर्ती काल में किया गया है। ऋचाओं में विराट से ऋत् और सत्य की उत्पत्ति तथा उससे समुद्र और सम्वत्सर आदि का प्रादुर्भाव हुआ। इनके मूल में ऋत् विद्यमान था जिसका विकसित स्वरूप सृष्टि है। यह काल अपराध रहित था जिसे 'देवयुग' कहा गया। इस आदर्शयुग में अपराध न होने से दण्ड की कोई आवश्यकता नहीं रही। महाभारत के अनुसार उस काल में धिग्दण्ड ही पर्याप्त था।[2]

कामन्दक ने अपने नीतिसार में स्पष्ट किया है कि परस्पर मांस भक्षण की अभिलाषा से भिन्न मार्ग स्थित जगत् को दण्ड के अभाव से नष्ट करना मत्स्य न्याय है। यह जगत् काम और लोभ के द्वारा बल से निरालंब नरक में डूबता है। यह संसार प्रकृति से ही विषयों के वशीभूत रहा है। साधु सेषित सनातन मार्ग पर चलने के लिए दण्ड भय की ही प्रतिष्ठा है।[3] प्रजा दण्ड के भय से नियम के वशीभूत वैसे रहती है, जैसे पुरुष को कुल नारी प्राप्त होती

* *एसोसिएट प्रोफेसर एव विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, फिरोज गांधी कॉलेज, रायबरेली, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ*

है। अतः दण्ड से व्यक्ति, समाज एवं धर्म की रक्षा होती है। इसीलिए कामन्दक का विचार उचित प्रतीत होता है कि

दण्डं दण्डीव भूतेषु धारयन् धरणीपतिः।
प्रजाः समनुगृह्णीयात्प्रजापतिरिव स्वयम्।।[4]

भूपति दण्डी के समान सभी प्राणियों को दण्ड धारण कराता हुआ, प्रजापति के समान स्वयं प्रजा पर अनुग्रह करे। दण्ड का उद्देश्य कामन्दक और शुक्र दोनों विचारकों के मत में दम ही दण्ड है। जो राजा में स्थित राज्य एवं विधि के समक्ष समान समाज की स्थापना तथा सुरक्षा करना है।[5] इतना ही नहीं अपितु राजा भी विधि के अधीन है। जिसका उल्लंघन करने पर वह स्वयं दण्ड का भागी होता है।[6]

महाभारत शान्तिपर्व के अनुसार श्दण्डश उस मर्यादा का नाम है, जो मनुष्यों में अव्यवस्था के निवारण और अर्थ या धन–सम्पत्ति या मनुष्यों द्वारा आबाद पृथिवी के संरक्षण के लिए स्थापित की गई है।[7] आगे महाभारत में उल्लेख है कि जिस राजा में दण्ड देने की क्षमता नहीं होती ऐसे क्षत्रिय राजा की शोभा नहीं होती, न ही वह पृथ्वी का उपभोग कर सकता है तथा दण्ड न देने वाले राजा की प्रजा सुखी नहीं होती।

नादण्डः क्षत्रियो भाति नादण्डो भूमिमश्नुते।
नादण्डस्य प्रजा राज्ञः सुखं विन्दन्ति भारत।।[8]

दुष्ट व्यक्तियों को दण्ड देना और सज्जनों की रक्षा करना राज्य के राजाओं का श्रेष्ठ धर्म बताया गया है।

असतां प्रतिषेधश्च सतां च परिपालनम्।
एष राज्ञां परो धर्मः समरे चापलायनम्।।[9]

दण्ड की उत्पत्ति दैवीय सिद्धान्त पर आधारित है, इसीलिए दण्ड दैवीय गुण सम्पन्न कहा गया है। महाभारत की अवधारणा में दण्ड प्रजा पर शासन एवं उसकी रक्षा के लिए है। जब विश्व सोता रहता है. तो दण्ड जागता है। दण्ड का त्रिवर्ग है।[10] दण्ड विष्णु, नारायण और महापुरुष है। दण्ड दुष्टों को सम्मार्ग पर ले जाता है। दण्ड से ही राजा पृथ्वी पर शासन करता है, जिससे प्रजा सुख का भोग करती है। इस प्रकार महाभारत का दण्ड सिद्धान्त सार्वभौमिक सिद्ध होता है, जिसमें दण्ड शक्ति का विस्तार दृश्यमान है जिससे राजा काल का कारण स्वीकारा गया है।[11] जो प्राप्त न हो उसे प्राप्त करना,

प्राप्त हुए की रक्षा करना, रक्षित की वृद्धि करना और बढ़ी हुई सुख–समृद्धि को यथायोग्य स्थान व पात्रों में प्रयुक्त करना दण्डनीति का ही कार्य है। लोकयात्रा दण्डनीति पर ही निर्भर करती है।[12] महाभारत के शांति पर्व में दण्ड एवं दण्डनीति के अभिप्राय को इस प्रकार अभिव्यक्त किया गया–

यस्माददान्तान् दमयत्यशिष्टान् दण्डयत्यपि।
दमनाद् दण्डनाच्चौव तस्माद् दण्डं विदुर्बुधाः।।[13]

असम्मोहाय मर्त्यानामर्थसंरक्षणाय च।
मर्यादा स्थापिता लोके दण्डसंज्ञा विशाम्यते।।[14]

अर्थात् दण्ड द्वारा अदान्त (उद्धृत) लोगों का दमन किया जाता है। अतः दमन करने और दण्डित करने के कारण 'दण्ड' शब्द का प्रयोग विद्वानों द्वारा किया जाता है। मनुष्यों में कहीं अव्यवस्था न मच जाय, – और अर्थ का संरक्षण हो सके, अतः मर्यादा की स्थापना की गई, जिसे 'दण्ड' कहते हैं। महाभारत में धर्म और अर्थ की रक्षा के लिए दण्ड का प्रावधान किया गया। जैसा कि –

दण्डः संरक्षते धर्मं तथैवार्थं जनाधिपः।
कामं संरक्षते दण्डस्त्रिवर्गों दण्ड उच्यते।।[15]

अर्थात् धर्म, अर्थ और काम रूपी त्रिवर्ग की रक्षा सिर्फ दण्ड से सम्भव है। अन्यथा इसकी रक्षा करना असम्भव है। ज्ञातव्य है कि कामन्दक द्वारा निरूपण में कौटिल्य एवं मनु दोनों का समन्वय स्थापित किया गया है। उनके अनुसार दण्डी के समान दण्ड धारण करता हुआ, राजा प्रजा में दोनों लोकों को धारण कराता है।[16] इससे स्पष्ट होता है कि कामन्दक के विचार में लोक और परलोक दोनों की सिद्धि हेतु दण्ड आवश्यक है। दण्ड प्रयोग से त्रिवर्ग की स्थापना और वृद्धि सम्भव है। इसीलिए दुर्वृत्त के शमन हेतु ब्रह्मा ने दण्ड को उत्पन्न किया।[17] मनु भी कहते है कि ''दण्ड, ब्रह्मा का पुत्र एवं धर्म स्वरूप है।''[18] आगे चलकर – महाभारत के शांति पर्व में कहा गया है कि–

सर्वे त्यागाः राजधर्मेषु दृष्टाः सर्वाः दीक्षाः राजधर्मेषु चोक्ताः।
सर्वा विद्याः राजधर्मेषु युक्ताः, सर्वे लोकाः राजधर्मे प्रविष्टाः।।[19]

अर्थात् सम्पूर्ण त्याग, दीक्षा, विद्या तथा लोक राजधर्म पर ही आश्रित है। दण्डनीति का सभी दिशाओं में सही प्रकार से प्रयोग होता है और उस युग में जनता संतुष्ट रहती है उसे सत्युग कहते हैं। जैसा कि–

दण्डनीत्यां यदा राजा सम्यक् कात्स्येंन प्रवर्तते।
तदा कृतयुगो नाम कालः श्रेष्ठः प्रवर्तते।।[20]

मनु ने अपने मनुस्मृति में दण्ड के बारे में बताया है कि ष्यह श्यामवर्ण तथा लाल आँखों वाला पाप विनाशक है। चार दाँतों एवं चार भुजाओं वाला है। इसके उग्ररूप से भय की उत्पत्ति होती है। दण्ड के सदुपयोग से प्रजा सुखमय होती है।[21] पाश्चात्य विचार में दण्ड का कार्य अपराधी को दण्ड ही देना नहीं, अपितु ऐसे वातावरण का प्रस्तुतीकरण करना है, जिसमें अपराध की स्थिति ही न आ सके। शक्ति से किसी अधिकार की स्थापना नहीं हो सकती।[22] कौटिल्य के विचार में ''दण्ड जीव मात्र की सुरक्षा के लिए है। योगक्षेम कारक है। उसके मूल में विनय है। यह कृतक एवं स्वाभाविक इन दो विधाओं वाला है।''[23] शुक्र मत में ''जो अदेय वस्तु को ग्रहण करता है अथवा अदेय वस्तु किसी को देता है। वे दोनों चोर की भाँति दण्डनीय हैं। उन्हें उत्तम साहस नामक दण्ड देय है।''[24]

यदि शासन के लिए दण्डनीति न रहे तो 'त्रयी' का विनाश हो जाएगा। सम्पूर्ण विश्व जगत् का अन्तिम आश्रय सिर्फ 'राजधर्म' ही है। अर्थ और धर्म के अनुसार ही कार्य किये जाएं। धर्म, अर्थ और काम ये त्रिवर्ग राजधर्म में ही समाहित रहते हैं। दण्ड, अव्यवस्था का अन्त है।

सन्दर्भ

1. शतपथ ब्राह्मण 5.447
2. महाभारत शांति पर्व 58.14, 67.16–17, 287.8–14
3 नीतिसार 2.42–43
4 वही – 3.1
5 नीतिसार 2.15, शुक्रनीति– 1.1571
6 वशिष्ठ धर्मसूत्र 21, विशेष हेतु द्र–, Sense of Injustice, p. 158
7. महाभारत शाति पर्व 15.10
8. महाभारत शांति पर्व 14.14
9. महाभारत शांति पर्व 14.16
10. महाभारत शांति पर्व– 15.205
11. महाभारत शांति पर्व 1.22
12. अर्थशास्त्र 1.1.1.3
13. महाभारत शांति पर्व 15.8
14. महाभारत शांति पर्व 15.10
16. महाभारत शांति पर्व 15.3
17. नीतिसार 2.36

18. नीतिसार 2.38, 43.3.1 अर्थशास्त्र 1.4.17–19, 5.1.1 या.स्मृ– 1.12
19. मनुस्मृति 7.14
20. महाभारत शांति पर्व 62.29
21. महाभारत शाति पर्व 96.7
22. मनुस्मृति 7.25 महाभारत शांति पर्व–121.15–16, विष्णु धर्मसूत्र–3.65 म.पु. 225.8
23. Bernard Bosanquet, The Philosophical Theory of the State & p. 34 Thomas Hill Green Lectures on the principles of political obligation. p. 140
24. अर्थशास्त्र 1.6.2–36– विनयसमूलो दण्डः प्राणभृतां योगक्षेमावहः।

Paper Received : 08 April, 2025 **Paper Accepted : 15 July, 2025**

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 92-99

'बम' का सहारा : आधुनिक शिक्षा जगत की समस्याओं का चित्रण

*डॉ० नियति कल्प **

शोध सारांश

'बम का सहारा' निबंध में निबंधकार ने शिक्षा जगत की वर्तमान समस्याओं का प्रभावपूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया है। निबंधकार विवेकी राय स्वयं भी अध्यापक रहे हैं, इस कारण शिक्षा जगत की समस्याओं से वे भली–भांति परिचित हैं। वर्तमान शिक्षा पद्धति की यांत्रिकता और निरुद्देश्यता लेखक के मन में अनेकानेक प्रश्न उत्पन्न करती है। उसे ऐसी शिक्षा पद्धति की उपयोगिता बिल्कुल संदिग्ध जान पड़ती है, जिसमें किसी भी उपाय से कुछ निश्चित प्रश्न तैयार कर, परीक्षा में उत्तीर्ण होना ही विद्यार्थी के जीवन का एकमात्र लक्ष्य रह गया है। यांत्रिक शिक्षा–पद्धति में विद्यार्थी की अपने शिक्षक से यह आशा तनिक भी अनुचित नहीं है कि वह उसे परीक्षा में उत्तीर्ण होने का सुगम और सहज रास्ता बता दे,जिससे बिना परिश्रम वह डिग्री पाने में सफल हो जाये। विद्यार्थियों एवं अभिभावकों का सारा ध्यान येन–केन–प्रकारेण डिग्री प्राप्त कर लेने पर है। विवेकी राय का यह निबंध हमें वस्तुस्थिति का भान कराता है कि वर्षों से शिक्षा जगत की यह समस्या सुरसा की भाँति मुँह फैलाए ही हुए है। मनोरंजक और रोचक शैली में उक्त निबंध आज की शिक्षा–व्यवस्था और विद्यार्थियों की मनःस्थिति को बखूबी अभिव्यंजित करने में सफल है। जो हमें शिक्षा–व्यवस्था की बदहाली पर गंभीरतापूर्वक विचार करने को मजबूर कर देता है।

मूल शब्द *– शिक्षा पद्धति, यांत्रिकता, परीक्षा, डिग्री, कुंजी*

हिन्दी के प्रसिद्ध ललित निबंधकार विवेकी राय का 'बम' का सहारा' शीर्षक निबंध 1962 ई० में प्रकाशित 'फिर बैतलवा डाल पर' नामक निबंध संग्रह में संकलित है। प्रस्तुत निबंध में निबंधकार ने शिक्षा जगत की वर्तमान समस्याओं का प्रभावपूर्ण विवेचन प्रस्तुत किया है। विवेचन मनोरंजक प्रतीत होते हुए भी शिक्षण जगत् की समस्याओं के विषय में हमें गंभीरतापूर्वक सोचने को विवश करता है। आज तिरसठ साल के बाद भी, यह निबंध उतना ही प्रासंगिक है, बल्कि अब तो कुछ ज्यादा ही प्रासंगिक हो गया है।

निबंधकार विवेकी राय स्वयं भी अध्यापक रहे हैं, इस कारण शिक्षा जगत की समस्याओं से वे भली–भांति परिचित हैं। वर्तमान शिक्षा पद्धति की यांत्रिकता और निरुद्देश्यता लेखक के मन में अनेकानेक प्रश्न उत्पन्न करती है। उसे ऐसी शिक्षा पद्धति की उपयोगिता बिल्कुल संदिग्ध जान पड़ती है, जिसमें किसी भी

* *सहायक प्राध्यापक, विश्वविद्‌यालय हिन्दी विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची*

उपाय से कुछ निश्चित प्रश्न तैयार कर, परीक्षा में उत्तीर्ण होना ही विद्यार्थी के जीवन का एकमात्र लक्ष्य रह गया है। जिस व्यवस्था में उसकी प्रतिभा, रुचि एवं मानसिकता के पूर्ण विकास का कोई अवसर नहीं है। ऐसी यांत्रिक शिक्षा–पद्धति में विद्यार्थी की अपने शिक्षक से यह आशा तनिक भी अनुचित नहीं है कि वह उसे परीक्षा में उत्तीर्ण होने का सुगम और सहज रास्ता बता दे,जिससे बिना परिश्रम वह डिग्री पाने में सफल हो जाये। विद्यार्थियों एवं अभिभावकों का सारा ध्यान येन–केन–प्रकारेण डिग्री प्राप्त कर लेने पर है। आश्चर्य नहीं कि भारत में रोजगार–योग्य स्नातकों/डिग्रीधारियों की संख्या उत्साहवर्धक नहीं है, जबकि भारत जैसे विकासशील देश के लिए यह अत्यावश्यक है। 2024 की रिपोर्ट के अनुसार 18–21 आयुवर्ग के 47.76 प्रतिशत 22–25 आयुवर्ग के 63.58 प्रतिशत और 26–29 आयुवर्ग के 54.95 प्रतिशत युवा ही रोजगार के लिए योग्य पाए गए। विषयवार देखने पर बी.ए एवं बी. कॉम के लिए यह प्रतिशत निम्नतम है।[1] दिनकर जी ने संभवतः ऐसी ही स्थिति का अनुमान करके लिखा था "शिक्षा का स्तर अभी भी बहुत नीचा है। अगर वह और नीचे लाया गया, तो बेकारों की फौज बढ़ेगी और उनकी फौज भी, जिन्हें कोई भी काम सौंपा नहीं जा सकेगा।"[2] स्कूली स्तर पर भी शिक्षा का स्तर अच्छा नहीं कहा जा सकता। 2024 की रिपोर्ट के अनुसार कक्षा 5 में पढ़ने वाले मात्र 44.8 प्रतिशत बच्चे ही दूसरी कक्षा के टेक्स्ट को पढ़ने में सफल रहे। कक्षा 8 के लिए यह प्रतिशत 67.5 प्रतिशत रहा। अंकगणित के लिए यह प्रदर्शन और भी खराब है।[3] पढ़ाई–लिखाई को लेकर विकृत मानसिकता का परिचय 2015 में बिहार से आई एक खबर ने बखूबी दिया था जिसमें बोर्ड की परीक्षा में छात्रों को चोरी कराने के उद्देश्य से उनके अभिभावक दीवारों–छज्जों पर चिट लेकर चढ़े हुए थे।

विवेकी राय का यह निबंध हमें वस्तुस्थिति का भान कराता है कि वर्षों से शिक्षा जगत की यह समस्या सुरसा की भाँति मुँह फैलाए ही हुए है। प्रस्तुत निबंध के प्रारंभ में लेखक के पास आकर उसका एक छात्र उससे बम बना देने का आग्रह करता है। लेखक को आशंका होती है कि शायद उसका छात्र कम्युनिस्ट हो गया है। किंतु बम से छात्र का अभिप्राय ऐसी वस्तु से है, जिसकी सहायता से वह आसानी से परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाय। शिक्षक का विश्वास है कि बम और गोले से नहीं बल्कि पढ़ने से छात्र परीक्षा में सफल होता है। छात्र का मंतव्य पढ़ने से ही है। वह चाहता है कि शिक्षक, कवियों और उनकी भाषा–शैली के विषय में प्रश्नोत्तर तैयार करवा दे। शिक्षक अपने द्वारा कई बार बताये गये इस प्रश्न को याद कर लेने की सलाह छात्र को देता है। किंतु छात्र की समस्या कम नहीं। वह कहता है–"यही तो आफत है साहब! दर्जनों

मशहूर लेखक हैं। कोड़ियों प्रसिद्ध कवि हैं। किसका–किसका याद करें? जान साँसत में है!"[4]

शिक्षक उत्तर देता है कि क्या मुझे परचा आउट हो गया है जो बता दूँ कि यही आएगा?

किंतु छात्र के पास इस समस्या का समाधान तैयार है। वह कुछ ऐसा लिखवा देने का आग्रह करता है जो प्रत्येक कवि या लेखक के लिए लिखा जा सके। शिक्षक को यह असंभव प्रतीत होता है क्योंकि हर लेखक की अपनी अलग शैली, भिन्न–भिन्न भाव और गुण है। सबके विषय में ऐसा कुछ लिखवाना कैसे संभव है कि वह प्रत्येक लेखक पर सही उतरे।

छात्र अपने अज्ञानी शिक्षक के सामने अपने एक मित्र का उदाहरण प्रस्तुत करता है, जो इसी उपाय से परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया था। क्योंकि उसके एक मास्टर ने उसे लिखवाया था यानी कुंजी प्रदान की थी। वह कुछ ऐसा था–" आपकी भाषा आकर्षक है। आपकी शैली हृदय को छूती है। आपने अपने भावों और विचारों को सफलतापूर्वक प्रकट किया है।... इत्यादि। इसी तरह और भी।"[5]

वह शिक्षक से विनती करता है –"दो पृष्ठ भर तैयार करा दें। फिर तो कुछ इधर–उधर जोड़–जाड़कर ठीक ही कर लूँगा। किसी तरह इस वर्ष पास हो जाता।"[6]

तो क्या कई वर्ष से परीक्षा दे रहे हो? शिक्षक द्वारा इस प्रश्न पूछने पर विद्यार्थी बताता है कि उसे गत वर्ष परीक्षा देने से रोक दिया गया था। रोकने का कारण वह बताता है कि उसका बम ही कॉपी में चला गया था।लेखक आश्चर्य से भरकर उससे प्रश्न पूछ बैठता है–" बम? कैसा बम?"

वह जवाब देता है–" इतिहास के परचे का बम था। तमाम सन् – संवत् और तिथियाँ एक छोटे से कागज़ पर नोट करके ले गया था। कॉपी में छिपाकर लिखने के बाद उसे निकालना भूल गया और वह ऐसे ही उत्तर– पुस्तिका में चला गया।नतीजा यह हुआ कि परीक्षाफल तो गोल हो ही गया एक वर्ष के लिए रोक भी दिया गया।"[7] इसी कारण वह इस बार लिखकर नहीं बल्कि याद करके जायेगा।

यह वार्तालाप लेखक के सामने अनेक प्रश्न खड़े कर देता है। "जिस प्रकार बम–वर्षा करके शत्रु पर विजय प्राप्त करते हैं उसी प्रकार 'बम' के सहारे छात्र परीक्षा में विजय–लाभ के अभिलाषी हैं। इस 'बम' के भिन्न–भिन्न रूप

हैं। नोट्स हैं, सूत्र हैं, कुंजियाँ हैं, मशहूर सवाल हैं, संभावित प्रश्न हैं, नकल करना है, चोरी करना है, नंबर बढ़वाना है,रटाई–घोंटाई है, और परचा आउट करना है आदि–आदि। रह गयी बेचारी शिक्षा, तो परीक्षा और किसी प्रकार प्रमाणपत्र प्राप्त करने के दो पाटों के बीच में यह तो मानो पिसान हो गयी।"[8]

जहाँ विद्यालय के व्यवस्थापक हानि–लाभ की चिन्ता में हैं। अध्यापक को मात्र अपने वेतन से मतलब है। वहीं विद्यार्थी को किसी प्रकार परीक्षा पास करनी है,क्योंकि इसी से उसे नौकरी मिलती है। मात्र उत्तीर्ण होने को अपना लक्ष्य मान बैठे परीक्षार्थी का ध्यान पढ़ाई से अधिक परीक्षा पर होता है। जिसकी तैयारी में वह हर प्रकार की तिकड़म भिड़ाता है और बम तैयार करता है। यह 'कुंजी–युग' बहुत समय से चला आ रहा है। कहते हैं कि देश के युवा देश का भविष्य होते हैं। अपने ही हाथों अपना भविष्य नष्ट किए जाने का एक बेहतरीन उदाहरण हमारी शिक्षा–व्यवस्था है। सरकारों के लिए अंतिम प्राथमिकता शिक्षा ही होती है। अब तो शिक्षकों में ऐसे लोग आ गए हैं जिनका पठन–पाठन से कम ही नाता है। 'पाखी' पत्रिका के जुलाई 2025 अंक में इलाहाबाद विश्वविद्यालय के असिस्टेंट प्रोफेसर शिव कुमार यादव ने अपने आलेख 'बड़ी संभावनाओं के कवि' में इसी प्रवृत्ति को लक्षित करते हुए लिखा है "लेकिन कुछ ऐसे लोग भी शिक्षक बन जाते हैं जो न तो क्लास लेते हैं न ही कुछ लिखते हैं, बल्कि अपने आप को ऐसे कृत्यों में लगा देते हैं जिससे पूरा शिक्षक समाज कलंकित होता है।"[9]

लेखक को सहसा इस संदर्भ में एक घटना का स्मरण हो आता है जब निरीक्षण के सिलसिले में एक दयनीय परीक्षार्थी–तस्कर उसके सामने आया। प्रश्न था अकबर पर। किसी प्रकार वह परीक्षार्थी बाहर गया,इतिहास की पुस्तक से अकबरवाला पाठ फाड़कर लाया बिना सोचे–समझे नकल कर लिखना प्रारंभ किया–"बालकों पिछले अध्याय में तुम्हें बताया जा चुका है कि हुमायूँ.... बेचारे को क्या पता कि परीक्षक बालकों नहीं है और यह भी कि वह उत्तर लिख रहा है,इतिहास की पुस्तक नहीं। उसके सिर पर परीक्षा का भूत सवार है जिस कारण वह कुछ सोच नहीं पाता। पकड़े जाने पर वह 'जिन्दगी का सवाल है' यह कहकर गिड़गिड़ाता है। हम अपने देश भारत के परिप्रेक्ष्य में देखें तो यह आसानी से समझा जा सकता है कि हमारा सारा ध्यान डिग्रियाँ और प्रमाण–पत्र जुटाने पर है। साल–दर–साल रट्टू तोते –जैसे छात्र स्कूलों और विश्वविद्यालयों से उत्तीर्ण हो रहे हैं। दिल्ली के शिक्षा मंत्री रहे मनीष सिसोदिया ने दिल्ली राज्य में शिक्षा के क्षेत्र में किए गए प्रयोगों पर ' शिक्षा, दिल्ली के स्कूलों में मेरे कुछ अभिनव प्रयोग' शीर्षक पुस्तक में लिखा है " शिक्षा का मतलब सिर्फ पढ़े–लिखे होने का सर्टिफिकेट हाथ में लेकर घूम रहे

नौजवानों की जमात खड़ा करना नहीं है। ... अगर शिक्षा की यह जिम्मेदारी है कि हमारे बच्चे बड़े होकर अच्छी नौकरियाँ हासिल कर सकें तो शिक्षा की यह भी जिम्मेदारी है कि हमारे स्कूलों से ऐसे लोग भी निकलें जो नई–नई और अच्छी नौकरियाँ पैदा भी करें ; आज दुनिया की बहुत सारी बड़ी अर्थव्यवस्थाओं के बड़े होने का कारण यही है कि वे अपने स्कूल और कॉलेजों में जॉब सीकर्स नहीं जॉब प्रोवाइडर्स पैदा कर रहे हैं।"[10]

गत वर्ष की एक घटना का स्मरण लेखक को इसी संदर्भ में होता है जब जाड़े के मौसम में प्रातःकाल वह एक पुल पर बैठा एक व्यक्ति का इंतजार कर रहा होता है कि अचानक तेज सेण्ट के कारण उसका ध्यान तीन–चार विद्यार्थियों पर जाता है जो हाथ में उत्तर–पुस्तिकाएँ और एक–दो पुस्तकें लिए बातों में लीन सामने से निकल जाते हैं। लेखक के मन में प्रश्न उठता है कि अभी कॉलेज के समय में दो–ढाई घंटे की देर है तब आखिरकार ये विद्यार्थी कहाँ जायेंगे और उन्होंने इतनी तेज सेण्ट क्यों लगा रखी है? लेखक की नजर में वह जरूर कोई महत्वाकांक्षी छात्र है जो सभी को आकर्षित करने की नीयत से और अपनी विद्या की अनिपुणता की कमी को सेंट लगाकर पूरी कर रहा है। पढ़ने के समय वह कहीं धूप में बैठकर मित्रों के साथ गप लड़ाएगा। अध्यापकों की आलोचना करेगा। छात्रों की चर्चाएँ करेगा। साथ ही सारे संसार की मूर्खता ऊपर जमकर हँसी होगी। बीच में किसी ओर से पढ़ाई–लिखाई की बात पर वे कह उठेंगे– "हटाओ जी, कौन मरने जाए अभी से! जो पढ़तव्यम् तो मरतव्यम् ,दाँत कटाकट किं कर्तव्यम्।परीक्षा आएगी तो देखा जाएगा। कोई–न– कोई गोटी बैठेगी ही। लग गया तो तीर, नहीं तो तुक्का!"[11]

इन्हीं विचारों के क्रम में लेखक को गाँव की ओर से झुंड के झुंड छात्र आते दिखलाई पड़े। गाँव के छात्र जिनके पास समय की कीमत नहीं और जिनके पास घड़ी भी नहीं। इसी क्रम में लेखक को उस गाँव के एक परिचित छात्र का स्मरण हुआ जिसने गत वर्ष एक भाषण प्रतियोगिता में अपना कमाल दिखलाया था। छात्रों की अंतिम टोली में वह लेखक को अनायास दीख पड़ता है जो किसी पुस्तक में आँखें गड़ाए चला जा रहा था। लेखक को मानो स्वयं अपने प्रश्नों का समाधान मिल जाता है– "एक वह असमय जानेवाला सेण्ट की सुरभि में डूबा और एक यह उस समय का सदुपयोग कर सबसे पीछे जानेवाला पुस्तकों के पन्ने में डूबा!"[12]

अपने साथी की असफल प्रतीक्षा से ऊबकर लेखक आगे बढ़ा,जहाँ उसे मोड़ की पुल पर सेण्टवाला छात्र और उसके साथी एक कुत्ते के साथ बैठे दीख पड़े। उन सबका एक स्वर में लेखक को प्रणाम करना उसके लिए

अप्रत्याशित क्षण था। छात्रों के साथ बैठकर मानो वह भी अपने पूर्व छात्र–जीवन में वापस आ जाता है। लड़कों के अनुसार वे लेखक की टोपी,सूरत और चाल देखकर ही समझ गये कि वह कहीं का मास्टर है।

एक छात्र ने कहा–"आप लोगों को कॉपी जाँचते समय दया नहीं आती? दो–चार नम्बरों के लिए ही बेचारे लड़कों का जीवन चौपट हो जाता है।"[13]

लेखक मानो उसकी बात का समर्थन कर उत्तर देता है–"अध्यापक लोगों का पेट नहीं भरता। यह बालकों को फ़ेल करने के पाप का दण्ड है कि वे आज चपरासियों से भी गये–बीते हैं। बालकों को फ़ेल नहीं करना चाहिए।"[14]

दयावंत शिक्षक के ऐसे विचार छात्रों को सहानुभूति से भर देते हैं। वे देखते हैं कि शिक्षक के पैरों में तो बहुत दुखदायी बिवाइयाँ फटी हुई हैं। यदि उन्हें आज शिकार मिल जाय तो इसकी दवा का वे निश्चय प्रकट करते हैं। लेखक आश्चर्य प्रकट करता है कि पढ़ाई के समय वे सब शिकार खेल रहे हैं। इस प्रकार भला फाइनल परीक्षा में वह कैसे सफल हो पाएँगे? किंतु छात्रों को इसकी परवाह नहीं है। वे ठहाका मारकर हँस पड़ते हैं। सेण्ट लगाया हुआ छात्र कहता है कि परीक्षा का उनका केंद्र अपने ही कॉलेज में हो गया है। कुछ तिकड़म का बल,कुछ भुजा का बल, कुछ भाग्य का बल और सातवें फाटक के लिए जमकर बमबाज़ी होगी।

शिक्षक उन्हें स्मरण दिलाता है कि परीक्षा में बम का सहारा सदा हानिकारक और खतरनाक होता है। इसी बीच एक छात्र ने खेतों के बीच के छोटे से नाले की ओर संकेत किया। जब तक एक सियार की सूरत शिक्षक की आँखों के सामने प्रकट हुई , तबतक अपने कुत्ते को इशारा कर विचित्र प्रकार की हाँक लगाते हुए सभी उधर झपट पड़े। एक छात्र ने सियार के ताजा खून को बेवाई की अचूक दवा बतलाते हुए शिक्षक को जल्दी दौड़ने की सलाह देता है। झटपट की उत्तेजना में शिक्षक भी स्वयं को भूल गया। अब तक छात्रों को उचित दिशा–निर्देश देने का प्रयास करने वाला शिक्षक उस उत्तेजना की स्थिति में बिना कुछ विचारे छात्रों के आवाहन पर दौड़ने को उद्यत हो चुका था कि दूर से उसकी मित्र की पुकार ने, जिनकी वह अबतक प्रतीक्षा कर रहा था, उसे रोक दिया। निबंध की समाप्ति इसी बिन्दु पर होती है। यह निबंध शिक्षा के संबंध में जिस बात को व्यंजना से समझाना चाहता है , दिनकर उसी बात अपने निबंध 'शिक्षा के पाँच लक्षण' में शिक्षित व्यक्ति की पाँच पहचान के रूप में इस तरह बताते हैं – " शिक्षित व्यक्ति की पहली पहचान मैं यह मानता हूँ कि वह अपनी मातृभाषा में सुदक्ष होता है और वह अपनी मातृभाषा का प्रयोग धड़ल्ले से करता है। शिक्षित व्यक्ति की दूसरी पहचान यह है कि वह

विनम्र होता है। शिक्षित व्यक्ति की तीसरी पहचान यह है कि उसमें चिन्तन की शक्ति होती है। शिक्षित व्यक्ति की चौथी पहचान यह होती है कि उसका मस्तिष्क सतत विकासशील होता है। शिक्षित व्यक्ति की आखिरी पहचान यह है कि वह आलसी नहीं होता है और अपने हर काम को मुस्तैदी के साथ और ठीक समय पर अंजाम देता है। ... कर्म ही वह कसौटी है, जिस पर ज्ञान की परख की जाती है।"[15] देखा जाय तो शिक्षा के संबंध में दिनकर जी की उपर्युक्त बातें फिट बैठती हैं।

दरअसल आज शिक्षा को कमाई से जोड़कर ही देखा जा रहा है। धन–दौलत और सुख–सुविधा की चाह ने मनुष्य को पूँजी का सेवक बना दिया है। इस प्रवृत्ति को प्रेमचंद ने भाँप लिया था। उन्होंने अपने प्रसिद्ध निबंध 'महाजनी सभ्यता में लिखा है "इस महाजनी सभ्यता में सारे कामों की गरज महज पैसा होती है। ... कुलीनता और शराफत, गुण और कमाल की कसौटी पैसा, और केवल पैसा है। साहित्य, संगीत और कला – सभी धन की देहली पर माथा टेकने वालों में हैं।"[16]

निःसंदेह मनोरंजक और रोचक शैली में उक्त निबंध आज की शिक्षा–व्यवस्था और विद्यार्थियों की मनःस्थिति को बखूबी अभिव्यंजित करने में सफल है। जो हमें शिक्षा–व्यवस्था की बदहाली पर गंभीरतापूर्वक विचार करने को मजबूर कर देता है।

संदर्भ

1. *ISR (India Skills Report) 2024*
2. *रामधारी सिंह दिनकर, दिनकर रचनावली–8, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.स 36*
3. *ASER (ANNUAL STATUS OF EDUCATION REPORT (RURAL) 2024*
4. *विवेकी राय, फिर बैतलवा डाल पर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2000 ई., पृ. सं 138*
5. *विवेकी राय, फिर बैतलवा डाल पर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2000 ई., पृ. सं 139*
6. *विवेकी राय, फिर बैतलवा डाल पर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2000 ई., पृ. सं 139*
7. *विवेकी राय, फिर बैतलवा डाल पर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2000 ई., पृ. सं 139*
8. *विवेकी राय, फिर बैतलवा डाल पर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2000 ई., पृ. सं 139*
9. *शिव कुमार यादव, पाखी, जुलाई 2025, पृ.स 45*

10. *मनीष सिसोदिया, शिक्षा, दिल्ली के स्कूलों में मेरे कुछ अभिनव प्रयोग, पेंगुइन बुक्स, पृ.स 163*
11. *विवेकी राय, फिर बैतलवा डाल पर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2000 ई., पृ. सं 140*
12. *विवेकी राय, फिर बैतलवा डाल पर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2000 ई., पृ. सं 139*
13. *विवेकी राय, फिर बैतलवा डाल पर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2000 ई., पृ. सं 141*
14. *विवेकी राय, फिर बैतलवा डाल पर, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2000 ई., पृ. सं 141*
15. *रामधारी सिंह दिनकर, दिनकर रचनावली–8, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.स 23*
16. *प्रेमचंद, प्रेमचंद के श्रेष्ठ निबन्ध, ज्योति प्रकाशन, इलाहाबाद, 2005 पृ.स132*

Paper Received : 05 May, 2025		***Paper Accepted : 15 July, 2025***

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 100-111

गहरे अपनत्व बोध की कविताएँ और चेतन कश्यप

डॉ. किरण कुमारी *

सारांश

साहित्य में समाज का हित सन्निहित है। एक साहित्यकार स्वान्तःसुखाय लिखते हुए भी जन कल्याण की भावना को कभी बिसरा नहीं पाता। कवि तो स्वभाव से ही सरल और संवेदनशील होते हैं, उदार और परोपकारी होते हैं। यही कारण है कि काव्य जनता की जिह्वा पर आसानी से चढ़ जाता है, पाठक के हृदय को आह्लादित कर देता है। चेतन कश्यप एक युवा कवि हैं जिनकी कविता सीधे पाठक से संवाद करती है। वह सिर्फ आलोचना नहीं करती, जो है और जो होना चाहिए के बीच के अंतराल को भी रेखांकित करती है। इनकी कविता प्रकृति, प्रेम, परिवार ,परिवेश के साथ–साथ युग सत्य का भी दमदार वाचन करती है। एक बार पढ़ लेने के बाद इनकी पुस्तकें बार बार पढ़ने के लिए विवश कर देती हैं। इनकी पाँच कविता पुस्तकें हैं– चाँद के दर पर दस्तक, ख़ास तुम्हारे लिए, एक पीली नदी हरे पाटों के बीच बहती हुई, एक क्लिक की बदौलत, विसंवादी। इनकी कविता मन से शुरू होती है, जन तक पहुँचती है और जनतंत्र की विसंगतियों से रू–ब–रू करवाने में पूरी तरह सफल होती है।

मुख्य शब्द *– जनता, जनवादी साहित्य, अर्थ चक्र, अहसास, परिस्थितियाँ, बेबसी, जमाना, माँ–पिता, घर आदि।*

एक संवेदनशील मनुष्य, एक अध्येता, एक युवा चिंतक और एक प्रतिभाशाली कवि हैं चेतन कश्यप। उनकी संवेदना का विस्तार असीम है, अबाध है, अनंत है। काव्य में उनकी गति अप्रतिहत है। अर्थशास्त्र के अध्येता होने के साथ–साथ चेतन कश्यप बैंक के पदाधिकारी भी रहे हैं। इस कारण इन्हें जनता से जुड़ने के अवसर प्राप्त हुए और आर्थिक समस्या से जूझती मध्यवर्गीय जनता की यातना से इनका साक्षात्कार हुआ। कवि मन आंदोलित हो उठा।

कविता में क्या क्या होना चाहिए या कविता कैसे रची जाती है की चर्चा से इतर मैं मानती हूँ कि कविता रची नहीं जाती घटित होती है। कविता कवि के हृदय में वाष्पित होती है, उसकी रगों में प्रवाहित रक्त से ऊष्मायित होती है, उसकी चेतना में उमड़ती घुमड़ती है, फिर हौले से उसके मानस में उतर आती है। आज की कविता में महाप्राण निराला द्वारा छन्द मुक्त होने के बाद भी जो अति आवश्यक है वह है भावना का प्रवाह जिसे आप आंतरिक लय की संज्ञा दे सकते हैं। ताजी कविता और टटके अहसास के कवि हैं चेतन कश्यप। इन्हें पढ़ते हुए मुझे दुष्यन्त कुमार याद आते हैं। उन्होंने लिखा है–

* *सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची, झारखण्ड*

''ये सारा जिस्म झुककर बोझ से दुहरा हुआ होगा
मैं सजदे में नहीं था आपको धोखा हुआ होगा।''[1]

तो चेतन कश्यप उनसे आगे बढ़कर 'उफान' शीर्षक कविता में लिखते हैं–

"झुकी रीढ़ को तान दूँ
थोड़ी आग खून में डाल दूँ
सज्दे को तोड़ूँ जरा
जरा आँखों में आँखें डाल दूँ
जी चाहता है"।[2]

जीवन संघर्ष का ही पर्याय होता है। जीवन भर की जद्दोजहद के बाद माँ–पिता मिल कर पुत्र को गरिमामय पद पर नौकरी करते हुए पाते हैं, पर फिर भी मन में गूँजता है– उत्तम खेती, मध्यम बान, अधम नौकरी भीख निदान। तरावट कविता में चेतन कश्यप लिखते हैं––

''भटक रहा हूँ सड़कों पर
'टैम्पू' में घूम रहा हूँ
ये मेरा शहर है पटना, और
मैं यहाँ कोई नौकर नहीं हूँ।''[3]

तो ये कविता आज के युवाओं के हृदय की आवाज बन जाती है, जो अर्थ चक्र के व्यूह में फँसे, नौकरी के जाल में उलझे, पल पल पिसते हुए, तिल तिल घिसते हुए अपने शहर को और अपने उन्मुक्त जीवन को याद करते हैं। 'बेबसी' शीर्षक कविता देखिए––

''दुख–दर्द की कोई सीमा होगी?
या सान पर चढ़ा
बस घिसते जाना है
घिसते जाना है!''[4]

परिस्थितियाँ नौकरीपेशा को मानो पीस डालती हैं, कुछ करने लायक नहीं छोड़तीं। जब चेतना सम्पन्न युवा इसमें कुछ बदलाव चाहता है तो वह आवाज उठाता है। वह बड़े अफसरों से बात करता है तो कोई असर नहीं होता। उसका खून जलता है होता कुछ नहीं। यह अहसास तोड़ता है फिर 'आत्म–समर्पण' की पंक्तियों को अनुभूत कीजिए–

''तय यही किया है
अब कुछ नहीं कहेंगे
तय यही किया है काम
काम भर करेंगे, बस!''

बेटा नौकरी की उलझनों में निरन्तर पिस रहा है और माता–पिता शाश्वत प्रतीक्षा रत हैं। ऐसे में कभी जब चन्द दिनों की छुट्टियाँ ले बेटा धर लौटता है तो–

''चमक उठी हैं
माँ की आँखें
तरावट आ गई है
पापा के चेहरे पर
निकलते वक्त कहा माँ ने
आया करो जो कहा नहीं, पर
जो दिखा एकदम साफ–
अच्छा लगा! बहुत अच्छा लगा।
और अपना हाल
गूँगा क्या बताए
गुड़ का स्वाद।''[6]

बहुत कम में बहुत अधिक को अभिव्यक्त करने का लाघव इस युवा कवि को आप्त है। चप्पल बाहर खोलने, सबकुछ पूछकर करने, पुकारने पर दौड़कर आने आदि नित्यवृत्त के बाद कवि लिखते हैं –

''और
बेटों की जगह
काम आया है कि नहीं
वैधानिक सवाल है,
ठीक है,
कि क्योंकर है?
पर
सच्चाई
यही है छोटू घर का नौकर है।''[7]

यह कविता रूपायित करती है कि छोटू घर की धुरी है, फिर भी उसके हिस्से में अधिकार नहीं, केवल कर्तव्य हैं। वह नियमों से आबद्ध है। आज जमाना अड़ने और लड़ने वालों का है, चरने और हरने वालों का है, ढलने और छलने वालों का है। कवि का सवाल है

''जो बढ़ नहीं सकता है
जो चढ़ नहीं सकता है
उसका क्या?''[8]

जीवन का यथार्थ बेहद कठोर है और वह भी कवि की निगाह में है। चेतन कश्यप की 'गौरतलब' कविता उल्लेखनीय है––

''यथार्थ ही यथार्थ
दिखता है सब ओर
दुख में, सन्ताप में
जुर्म, अपराध में
शोषण की बातों में
सियह–अँधेरी रातों में
कत्ल, बलात्कार में
दुखियों के चीत्कार में
भ्रष्टाचार के शासन में
बेईमानी के राशन में
बस यही,
यही यथार्थ है
लेखक भी
यही लिखता है
या कि
बस यही बिकता है।''[9]

पर कवि चेतन कश्यप इससे आगे की यात्रा भी करते हैं। इनके काव्य में प्रश्न है कि

''ये जो महुए की खुशबू है
पके कटहल की गमक है
बौराए हुए जो आम हैं
क्या कुछ भी नहीं हैं?''[10]

यहाँ आप गंध बिम्ब का आनन्द ले सकते हैं। जीवन में परिवार का यथार्थ भी बहुमूल्य है जहाँ पुत्र से दूर रहने के लिए विवश माँ पिता नित्य चिंता मग्न दिखते हैं–

''माँ का
आशंकाभरा मन
पिता का
स्थित – प्रज्ञ – सा आचरण''[11]

आज के जमाने में जहाँ माँ पिता सर्वाधिक उपेक्षित हैं–ये पंक्तियाँ मन को संवेदित आलोड़ित कर देती हैं। पुत्र और पुत्र के परिवार से दूर अकेली रह गयी माँ की व्यथा समझने योग्य है। यह एक दारुण व्यथा है जब वह अपने कोखजाए

के सामने अपने हृदय की बात रखने में झिझक अनुभव करने लगती है। और पिता खामोश हो जाते हैं। वे भी स्थितप्रज्ञ हैं, सुख दुख से परे हैं,उन्हें बेटे की चिन्ता नहीं है, उससे आशा नहीं है या उम्मीद नहीं है ऐसा नहीं है, पर वे ऊपर से 'स्थितप्रज्ञ सा आचरण' ओढ़ लेते हैं। चेतन कश्यप की पंक्तियाँ बहुत कम शब्दों में बहुत अधिक बोलती हैं। 'माँ की हँसी' कविता में उतरिए–

''माँ
तुम कब हँसी थी
खुलकर पिछली बार?
माँ
तुमने
कब की थी आशा
हमसे पिछली बार....?''[12]

और अपनी माँ को अपने मन के दर्पण में देखिए। यह कविता माँ के कहे अनकहे अहसास से रू–ब–रू कराने की सामर्थ्य रखती है। 'घर' कविता में कवि लिखते हैं––

''घर हर लेता है
सब पीड़ा, दुख–तकलीफय
जहाँ रहते हैं पिता,
माँ''[13]

घर जिनकी दीवारें बच्चों के लिए सुरक्षा कवच होती हैं, जहाँ बच्चे स्वयं को महफूज समझते थे, निश्चिंत रहते थे, उसी घर में बेटे बहू, पोते पोतियों के बिना रहते हुए माँ–पिता कैसे जीते हैं इस पीड़ा को, वेदना को, यातना को समझने वाले कवि हैं चेतन कश्यप। 'ध्रुव–सत्य' कविता युग सत्य का उद्घोष कुछ इस प्रकार करती है––

''ध्रुव – सत्य शायद यही है
एकाकीपन – नितांत!
शायद ये
अशक्त सारे बंधन–पूर्णरूपेण!
और शायद ये
गैरजिम्मेदाराना प्रवृत्ति की
काठ– हृदय पीढ़ी––हम!!''[14]

'माँ' कविता में कवि लिखते हैं –

बचपन की भूख–प्यास
जरूरत हर आम, खास

पहचानती है
माँ सब जानती है।''[15]

घर से दूर युवा अपने आप को किसतरह व्यस्त रखता है यह 'एहसास' शीर्षक कविता में देखा जा सकता है––

''वही 'थॉट फॉर टुडे', वही 'सेक्रेड स्पेस'
जाने कितनी चीजों से जुड़ गया हूँ
जब से छूटा हूँ अपनी जड़ों से
जब से एहसास बढ़ गया है
अपनों से दूर होने का
देखिए तो जरा!''[16]

साथ न रह पाते हुए भी चेतन कश्यप अपनों से कभी दूर नहीं हैं–

''दिलों में आबाद हैं जो शहर
वो साथ–साथ चलते हैं
छूटते नहीं हैं लोग
जो दिलों में बसते हैं
तो फर्क क्या,
कि हमको रहना कहाँ है
तो फिक्र क्या,
हमको बिछड़ना कहाँ है।''[17]

चेतन कश्यप के बारे में ज्ञान प्रकाश विवेक लिखते हैं– ''चेतन कश्यप की कविताएँ, नए मिजाज की ऐसी कविताएँ हैं, जहाँ यथार्थ की चहलकदमी, कशमकश को पैदा करते हुए नए समय का तनाव रचती हैं। चेतन कश्यप की कविताओं में बदलते समय की तल्ख़ हकीकतें, बड़ी सलाहियत से व्यक्त हुई हैं।''[18]

अपनी कविता 'यथास्थिति' में कवि लिखते हैं–

''सर्वव्यापी विमूढ़ता
सर्वग्रासी अकर्मण्यता
संवेदनहीन संरचना
नीचे गूँगी, ऊपर बहरी।''[19]

इनकी कविता में व्यंग्य का स्वर भी प्रखर है–

''ओ ऊँचे ओहदे वाले बाबू
ओ बिन पेंदी के लोटे बाबू''[20]

''काटे काला कौआ किसको,
सबकी मोटी –मोटी चमड़ी
आँख का पानी मर गया पर
सबकी ऊँची–ऊँची पगड़ी''[21]

''चाटुकारिता अति मनभावन
सत्य वचन! सत्य वचन!
स्वार्थ सिद्धि है असली दर्शन
सत्य वचन! सत्य वचन !
मानवता का होता क्षरण
सत्य वचन!सत्य वचन!''[22]

और जब भाव प्रबल होते हैं तो कवि कुछ इस प्रकार स्वयं को अभिव्यक्त करता है–

''भाषा
कई बार समर्थ नहीं होती है
ख़ास कर तब
जब मन उत्प्लावित हो
सोचता हूँ इस बार
भेज दूँ
एक
कोरा कागज
मतलब
तो साफ है!''[23]

इनके बारे में ज्ञानप्रकाश विवेक का यह कथन सर्वथा उपयुक्त है कि– ''चेतन कश्यप अपनी कविताई में, मोम के दस्ताने पहनकर आग की लपटें पकड़ने का हुनर रखते हैं।''[24] इनकी कविता सरल शब्दों में कठिन अर्थ व्यक्त करने में समर्थ है––

''अर्थ
निहित अर्थ
अनर्थ
कौन है समर्थ
जो सब समझ सका.....''[25]

चेतन कश्यप का जन साधारण के प्रति जुड़ाव अनुपम है।ये मानते हैं कि जनता दर्द सहने पर विवश है क्योंकि–

''जो बोलेगा बागी होगा
चुप रहने पर दागी होगा
चित भी उनकी पट भी उनकी
उनकी है सरकार।''[26]

डॉ. माधव सोनटक्के लिखते हैं– ''जनवादी कवि मात्र क्रांति का नारा ही नहीं लगाता अपने परिवेश को आलोचनात्मक दृष्टि से परखता भी है। साथ ही हमेशा विद्रोही–मुद्रा बनाए रखने की अपेक्षा सकारात्मक रवैया भी अपनाता है।'' राजनीतिक चेतना जनवादी काव्य धारा की विशेषता है। आज राजनीति मात्र राजनयिकों तक सीमित नहीं है बल्कि देश का सबसे लघु व्यक्ति भी उसमें शामिल है। जब राजनैतिक परिवेश विषमता, पाखण्ड और विसंगतियों से भरा हो, तो जन साधारण का जीवन दुख से भर जाता है। तब राजनैतिक विसंगतियों से जूझना साहित्यकार का धर्म होता है। आज जनतंत्र अपना स्वरूप खो रहा है। ''जनतंत्रीय व्यवस्था पूँजीवादी–सामंतवादी अजनतंत्रीय वर्ग की गिरफ्त में है, मुख में समाजवाद और बगल में पूँजीवाद की दोगली नीति की शिकार है। इसीलिए 'जनतंत्र' शोषण तंत्र में तब्दील होता हुआ दिखाई देता है।''[28] ऐसी परिस्थिति में जब राजनीति से सेवाभावना लुप्त हो गई है, राष्ट्र प्रेम का मुखौटा भर है। जो भावना सबसे प्रबल हो कर उभरी है वह है कुर्सी प्रेम, जिसके लिए तमाम उठापटक, खरीद फरोख्त किए जाते हैं। चेतन कश्यप 'महिमा कुर्सी की' में लिखते हैं––

''कुर्सी की चिन्ता
कुर्सी की चर्चा
कुर्सी का पैसा
कुर्सी का खर्चा
कुर्सी की प्रतीक्षा
कुर्सी का स्वागत
कुर्सी स्वयंभू
कुर्सी तथागत''[29]

राजनीतिक पार्टियाँ अपना प्रभुत्व दिखाने के लिए सभाओं और भोज का आयोजन करती हैं। इसमें जनता के पैसे से, जनता पर अपना प्रभुत्व जताया जाता है। ऐसे आयोजनों की पोल खोलते हुए युवा कवि चेतन कश्यप लिखते हैं–

''शर्तें तुम तय नहीं करते हो
माना कि तुम जय नहीं करते हो
उनके हाथों में डोर है सब
सत्ता जिनकी ओर है जब

बड़ी गाड़ियाँ, बड़े साहब, बड़े लोग
जिसने ऐसा पैदा किया है संयोग
ये उसके ताकत की झाँकी है
तुमने शायद कम आँकी है।''[30]

जन–चेतनावादी कवि शोषण मूलक व्यवस्था द्वारा निर्मित समकालीन नरक को सही मानवीय दुनिया में बदलने का प्रयास करता है। यह अपने परिवेश की सहज और अनिवार्य प्रतिक्रिया के रूप में सामने आता है। चेतन कश्यप लिखते हैं––

''अंदर ही अंदर
जो उबल रहा है नसों में
उस गुस्से का
फटना जरूरी है
यह अति
जो अति से भी ज्यादा है
उसका
घटना जरूरी है
बहुत जरूरी है!!''[31]

''जन चेतनावादी कवि कविता की सार्थकता समाज–जीवन से मात्र जुड़ जाने में नहीं, बल्कि उसके प्रति दायित्व निभाने में महसूस करता है, उसे वह एक हथियार की तरह इस्तेमाल करना चाहता है। इसलिए वह अपनी कविता की शक्ति और उसकी सम्भावनाओं के प्रति सोचता है।''[32] व्यवस्था के रुख और संवेदनाहीन परिवेश की अभिव्यक्ति चेतन कश्यप निराले ढंग से करते हैं–

''परस्पर
कुछ बचा ही नहीं है
जो कुछ है भी
तो, है विद्वेष
अब इतना ही शेष!''[33]

अपनी कथ्य–चेतना के अनुरूप जन–चेतनावादी कवियों ने सहज, स्वाभाविक जनभाषा को अपनाया है। काव्य भाषा की सहजता और जीवन्तता को बनाये रखने के लिए बोलियों तथा अन्य भाषा के बहुप्रचलित शब्दों का बेहिचक प्रयोग किया जा रहा है–

''हिरामन भाय
डर ही लगता रहता है
कौन करे कलेस!

अब तो
मीता को
मीता की
बातों से भी
लग जाती है ठेस!!''[34]

व्यंग्यात्मकता इनकी भाषा–शैली की खास विशेषता है। यह एक नया जमाना है, जहाँ फूट डालो राज करो का बीज मंत्र है। समाज में अत्याचार है, अनाचार है, झूठ है, फरेब है। आंदोलन होते हैं, उन्हें दंगों में बदल दिया जाता है। कवि चेतन कश्यप का प्रश्न है––

''सब तो अपने हैं
पराया कौन है?!
सब करता कौन है?
करवाता कौन है?''[35]

और जब दंगे हो रहे होते हैं सबसे अधिक दिहाड़ी मजदूर और गरीब लोग मारे जाते हैं। ठेले लूट लिए जाते हैं। दुकानें जला दी जाती हैं। एक तरफ कोहराम ही कोहराम होता है और दूसरी ओर.......

''जो राजा, मंत्री होते हैं
महफूज घरों में सोते हैं
फिर
नई बिसातें बिछती हैं
फिर
खेल पुराना चलता है
बस
एक प्यादा बदलता है।''[36]

इनकी कविताओं में मुहावरों और लोकोक्तियों का धड़ल्ले से प्रयोग हुआ है। लोक में प्रयुक्त और जनता जनार्दन के द्वारा सर्वस्वीकृत तद्भव शब्दों का उपयोग कविता को जनमानस तक ले जाने में सहायक है।

निष्कर्ष

चेतन कश्यप के काव्य में अभिव्यक्ति के क्षितिज का अनंत विस्तार दृष्टिगत होता है। इनका प्रथम काव्य संग्रह चाँद के दर पर दस्तक देता है। चाँद से कवि को अतिशय प्रेम है।इनकी कविता में एक अलग किस्म की सहजता है, एक अपनापन है जो पाठक के हृदय को आकर्षित करता है। इनकी कविताई में गाँव घर की मिट्टी की सोंधी महक है, महुए के फूल की

खुशबू है, पके कटहल की गमक है, आम्र वृक्षों का बौराना है, भाई–बहन का हर्षाना है, घर का सुरक्षा कवच है, प्रेम का धनत्व है, वात्सल्य का भावबोध है ,भारत का संस्कृति बोध है, सामयिक यथार्थ का वाचन है। यह कविता हमारे मानस को समृद्ध करती है। इसे पढ़कर व्यर्थता बोध नहीं होता। इन्होंने अपनी पीढ़ी की कमियों को भी स्वीकारा है। ये गहरे अपनत्व बोध के कवि हैं।

संदर्भ

1. *कुमार दुष्यन्त, साये में धूप, राधाकृष्ण, नई दिल्ली, अठारहवाँ संस्करण 1999, पृ. सं. 15*
2. *कश्यप चेतन, एक पीली नदी हरे पाटों के बीच बहती हुई, प्रकाशन संस्थान, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण 2016, पृ.सं. 26*
3. *वही, पृ.सं. 24*
4. *वही, वही, पृ.सं. 36*
5. *वही, पृ.सं. 41*
6. *वही, पृ. सं. 110*
7. *वही, पृ.सं. 115*
8. *वही, पृ.सं. 116*
9. *वही, पृ.सं. 09*
10. *वही, पृ.सं. 10*
11. *वही, पृ.सं. 11*
12. *वही, पृ.सं. 117*
13. *वही, पृ.सं. 122*
14. *चेतनकश्यप, चाँद के दर पर दस्तक, शिल्पायन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, संस्करण 2013 पृ.सं. 70*
15. *वही, पृ.सं. 37*
16. *वही, पृ.सं. 44*
17. *वही, पृ.सं. 57*
18. *वही, चाँद के दर पर दस्तक के फ्लैप से*
19. *वही, पृ.सं. 64*
20. *वही, पृ.सं. 65*
21. *वही, पृ.सं. 67*
22. *वही, पृ.सं. 68*
23. *कश्यप चेतन, ख़ास तुम्हारे लिए, बोधि प्रकाशन जयपुर, प्रथम संस्करण अगस्त, 2017 पृ.सं. 68*

24. चेतन कश्यप, चाँद के दर पर दस्तक, शिल्पायन पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दिल्ली, संस्करण 2013, के फ्लैप से
25. चेतन कश्यप, एक क्लिक की बदौलत, न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2024, पृ.सं. 129
26. चेतन कश्यप, विसंवादी, न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2024, पृ.सं. 39
27. सोनटक्के डॉ. माधव, हिन्दी साहित्य का इतिहास, विकास प्रकाशन कानपुर, तृतीय संस्करण 2006, पृ.सं. 463
28. वही, पृ.सं. 465
29. कश्यप चेतन, विसंवादी, न्यूवर्ल्ड पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2024, पृ.सं. 79
30. वही, पृ.सं. 107
31. वही, पृ.सं. 108
32. सोनटक्के डॉ. माधव, हिन्दी साहित्य का इतिहास, विकास प्रकाशन कानपुर, तृतीय संस्करण 2006 पृ.सं. 467
33. चेतन कश्यप, विसंवादी, न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2024 पृ.सं. 76
34. वही, पृ.सं. 75
35. वही, पृ.सं. 55
36. वही, पृ.सं. 52

Paper Received : 20 May, 2024 ***Paper Accepted : 05 Aug, 2025***

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 112-116

यज्ञ और पर्यावरण संरक्षण

*डॉ० नीतू सिंह **

सारांश

वेदों की सजीवता यज्ञ से ही परिलक्षित होती है और यज्ञ आयोजन से ही धरा पर पर्यावरण की परिशुद्धि होती है। यज्ञ और पर्यावरण संरक्षण के बीच अविभाज्य संबंध है। इस पृथ्वी पर यज्ञमय वातावरण में ही सर्वांगीण विकास की झलक मिलती है। हमारे प्राचीन ऋषि–मुनियों ने मानव जाति के लिए जो धर्म बताएं है, वे यज्ञ से ही प्रेरति है। विश्व का कल्याण यज्ञ द्वारा पर्यावरण संरक्षण से ही संभव है। यज्ञ से न केवल इस लोक में बल्कि परलोक में भी प्राप्त किया जा सकता है।

मुख्य शब्द *– यज्ञ, शतपथ ब्राह्मण, पर्यावरण, प्रदूषण*

पर्यावरण की दृष्टि से यज्ञ के महत्त्व का उल्लेख करते हुए अथर्ववेद में यज्ञ को सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को बाँधने वाला नाभि स्थल बताया गया है। आश्वलायन गृह्य सूत्र में संतान, पशु ब्रह्म तेज और अन्न का वर्धन करने वाला बताया गया है। मनुस्मृति में वर्णित है कि यज्ञ में डाली गई वस्तुएं आहूति द्वारा सूर्य तक पहुँचती है, सूर्य से वर्षा होती है, वर्षो से अन्न उत्पन्न होता है, जिससे प्रजा की रक्षा होती है। विश्व की प्रवर्त्तमान विकास प्रक्रिया आज अपनी चरम ऊँचाई को छूने के लिए लालायित सी प्रतीत हो रही है। सोलहवीं सदी में इस विकास की प्रक्रिया का आरम्भमानव के लिए सुविधाएँ जुटाने के लिए हुआ था। अपने इस प्रयास में प्रभुप्रदत्त बुद्धि के सफल प्रयोग से मानव ने कुछ ही समय में अभूतपूर्व उपलब्धियों को भी प्राप्त किया। कालान्तर में यह प्रक्रिया विशुद्ध वैज्ञानिक प्रक्रिया हो गई है। जो आधुनिक सत्यता के विकास में एक महत्त्वपूर्ण सोपान सिद्ध हुई। इस सोपान पर आरूढ मनुष्य ने मानवीय हित में सभ्यता के विकास में अहं भूमिका निभाई, किन्तु इस सोपान के द्वारा गन्तव्य लक्ष्य अन्तहीन था, अतः मानवीय उपयोग की मूलभूत सुविधाओं को जुटाने के बाद मनुष्य ने उस अन्तहीन लक्ष्य को लक्षित कर अपने प्रयास जारी रखो। भानव बुद्धि और वह अनन्त (प्रकृति) कहीं न कहीं एक ही घरातल से सम्बद्ध है, अतः मनुष्य ने उस अनन्त के कई रहस्यों को भी पाया।

प्रारम्भ में प्रकृत्ति के ये रहस्य मानव को अद्भुत भी लगे और तब तक प्रकृति के विभिन्न रूपों को अदृश्य शक्ति प्रतिरूप मानकर पूजने वाले समाज

* *असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, रणवीर रणंजय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अमेठी, डॉ० राममनोहर लोहिया विश्वविद्यालय, अयोध्या (उ०प्र०)*

में वैज्ञानिक वेतना का अभ्युदय हुआ। यह प्रक्रिया आगे बढ़ी। उपलब्धियों की प्राप्ति से मनुष्य में दरम पैदा हुआ और उसने केवल अपने मानसिक विनोद या दम्म की सन्तुष्टि के लिए शोध की प्रक्रिया जारी रखी, इस क्रम में वह चाहे अनचाहे अनन्त प्रकृति को चुर्नाती दे बैठा। विकास की यह यात्रा यहीं से पथ विचलित हो गई और कतिपय आहे की बुष्टि के लिए लक्ष्यहीन दिशा की ओर बढ़ने लगी।

मानव की सुविधाओं के लिए प्रारम्भ की गई यात्रा का यह दुखद परिणाम मानव अहं की ही एक उपलब्धि है। सुविधाएँ जुटाना एवं प्रकृति के रहस्य को जानना यह एक भिन्न बात है. किन्तु सुविधाएँ जुटाकर एवं प्रकृति के रहस्य को जानकर उसका असन्तुलित दोहन मनुष्य के लिए श्रेयस्कर सिद्ध नहीं हुआ, क्योंकि यह तो वैज्ञानिक भी मानते हैं कि मनुष्य प्रकृति का एक अंश है और कोई भी अंश अपने अंशी को आहत कर सुरक्षित नहीं हो सकता। मानव भी इस रूप में नियम का अपवाद नहीं बन सकता है। वर्तमान में पर्यावरण प्रदूषण की भयावहता इसी प्रकृति चक्र में हस्तक्षेप का परिणाम है। श्रेष्ठता के मद में चूर मानव द्वारा प्रकृति के अस्तित्व को नकारने जैसी भूल के परिणाम को देखने के लिए शायद सृष्टि ही साक्षी न रह पाये। इसकी चरम परिणति की हम मात्र कल्पना ही कर सकते हैं।

आधिदैविक अर्थात्–पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश पर होने वाले कुप्रभावों की क्षतिपूर्ति एवं दुष्प्रभावों की क्षमता को यज्ञ के माध्यम से कम किया जा सकता है। इसी प्रकार आधिभौतिक अर्थात् प्राणी–जगत् के प्रदूषण से उत्पन्न दुःखों को यज्ञ के माध्यम से कम करते हुए शून्य स्तर तक पहुँचाया जा सकता है। वायु–प्रदूषण के निवारण के वैदिक उपायों से–''यज्ञ से वायुशुद्धि एवं चक्रीय व्यवस्था में वर्षा भी शुद्ध होती हुई जल एवं वायु दोनों शुद्ध हो जाते हैं। सर्वविदित है कि प्रदूषण से ऋतुचक्र अनियमित हो जाता है, जिससे उपयुक्त समय पर वर्षा नहीं होती है। ऐसे समय में यज्ञ की सहायता से वृष्टि कराई जा सकती है। यह प्राचीन विज्ञान भारतीय संस्कृति में परम्परागत रूप से शास्त्रों में सुरक्षित रहा, किन्तु आधुनिक समय में गतशताब्दी के वैदिक विद्वान स्वामी दयानन्द 'यज्ञ द्वारा वर्षा' सिद्धान्त के प्रबल समर्थक और इसके साथ ही 'पंचभूत शुद्ध होते हैं' और 'सम्पूर्ण सृष्टि में सुख केवल यज्ञ द्वारा ही हो सकता है।'' इस मत के पोषक रहे हैं। उनके अनुसार–**''यज्ञ से जो वाष्प**

उठता है, वह जल को निर्दोष और सुगन्धित करके सब जग को सुखी करता है। इस शुद्ध जल और वायु के द्वारा अन्नादि औषधि भी शुद्ध होती है। ऐसे सुगन्ध के अधिक होने से जगत् में नित्यप्रति अधिक से अधिक सुख बढ़ता है। यह यज्ञ–अग्नि में होम करने के बिना दूसरे प्रकार से होना असम्भव है।''[1]

स्वामी दयानन्द अपना सम्पूर्ण मन्तव्य वैदिक शास्त्रों के आधार पर ही कहते हैं। शतपथ ब्राह्मण का वचन है–**''अग्नेर्वै धूमो जायते, धूमादभ्रम् अभ्राद्‍ वृष्टिः, अग्नेर्वा एते जायन्ते तस्मादाह तपोजा इति।''**[2] इस वचन की व्याख्या में स्वामी दयानन्द ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में लिखते हैं– जो होम करने के द्रव्य अग्नि में डालते जाते हैं, उनसे धुआँ और भाप उत्पन्न होते हैं...मेघमण्डल में वायु के आधार से रहते हैं। फिर वे परस्पर मिलकर बादल होके उनसे वृष्टि, वृष्टि से औषधि...।'' अन्यत्र यजुर्वेद के मन्त्र के अर्थ में लिखते हैं **''मनुष्य...भूमि में जिस यज्ञ का अनुष्ठान करता है, वह जलवृष्टिकारक मेघ को प्राप्त हो, वहाँ जाकर सूर्य की किरणों के गुणों से वर्षाता है।''**[3] शतपथ ब्राह्मण के उपर्युक्त वचन की मनु महाराज इस प्रकार पुष्टि करते हैं–

अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते।
आदित्याज्जायते वृष्टिः वृष्टेरन्नं ततः प्रजाः।''[4]

मनु के वचन– ''**आधुनिक समय में विदेशी विद्वानों की दृष्टि में भी प्रयोगों द्वारा सिद्ध होने पर उन्होंने महर्षि मनु को विश्व में प्रसिद्धतम एवं महानतम् स्वास्थ्य–सम्बन्धी सुधारकों में माना है।''**[5] गीता में भी यज्ञ से वृष्टि की प्रक्रिया वर्णित हैं–

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः।
यज्ञाद् भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः।।[6]

वेदमन्त्रों के अन्तर्निहित विज्ञान को जानकर यज्ञ के माध्यम से पवन की दिशा परिवर्तित करके अतिवृष्टि को रोका जा सकता है। इसी विधान से यज्ञ के द्वारा ऋतु चक्र को नियमित करके आँधी–तूफान–चक्रवात आदि को रोका जा सकता है। ऋग्वेद में इसका वर्णन है–

गोमातरो यच्छुभयन्ते अजिभिस्तनूषु शुभ्रा दधिरे विरुक्मतः।
बाधन्ते विश्वमभिमातिनमप वर्त्मान्येषामनु रीयते घृतम्।।[7]

अर्थात् सूर्य, पृथिवी एवं वायु बिजलियों से शोभा पाते हैं तथा अपने शरीरों से भिन्न–भिन्न कान्ति से युक्त बादलों को धारण करते हैं, अलग–अलग दिशाओं में फैलने वाले मेघों को पीड़ित करते हैं, अलग–अलग दिशाओं में फैलने वाले मेघों को पीड़ित करते हैं। इस कारण जिस ओर वायु जाती है, उस मार्ग पर ही मेघों का जल भी जाता है।''[8] इस प्रकार यज्ञ सभी प्रकार के आधिदैविक कष्टों को दूर करने की सामर्थ्य रखता है। सिर्फ आवश्यकता इसकी है कि मानव पूर्ण निष्ठा के साथ श्रद्धावान् होते हुए वेदमन्त्रों में अन्तर्निहित विज्ञान के रहस्यों को जानकर तदनुसार विधिविधान से कार्य करें। आध्यात्मिक प्रदूषण में मानसिक स्तर का प्रदूषण ग्रहण किया जाता है। अग्निहोत्र से मन पर सकारात्मक प्रभाव होने से प्रदूषण से होने वाली हानियाँ समाप्त हो जाती हैं। प्रदूषण से हुई हानियों से प्रकट हुए रोग भी अग्निहोत्र के विधिपूर्वक प्रयोग से सही होते देखे गये हैं। अमेरिका के एक मनोवैज्ञानिक श्री वैरी रैथनर ने पूना विश्वविद्यालय में 'अग्निहोत्र का मानसिक तनाव पर प्रभाव' नामक विषय पर शोध किया था। उन्होंने शोध निष्कर्ष प्राप्त किया कि अग्निहोत्र चिकित्सा से बच्चों का मृगी रोग जाता रहता है और मानसिक रूप से अविकसित बच्चों की बुद्धि विकसित हो जाती है।

प्रदूषण का एक भयंकर प्रकार है। विचार–प्रदूषण। इससे व्यक्ति के विचार इतने प्रदूषित हो जाते हैं कि वह अच्छे को अच्छा और बुरे को बुरा निर्णय करने तक में असमर्थ हो जाता है। अन्ततः इस विचारहीनता, विचार–शून्यता में वह नशे का आदी बन जाता है। व्यक्तिगत स्वास्थ्य, अर्थ–व्यवस्था, परिवार तथा समाज के लिए यह दुर्व्यसन हानिकारक होते हुए भी व्यक्ति इसे छोड़ने में असमर्थ होता है। व्यक्ति का स्वाभिमान तथा मनोबल, संकल्प शक्ति आदि समाप्त प्रायः हो जाती है। इससे उसके लिए अपने जीवन का अर्थ भी धीरे–धीरे अर्थहीन होने लगता है। ऐसी विषम परिस्थिति में मनोवैज्ञानिक किंकर्तव्यविमूढ़ होने लगते हैं।

पर्यावरण प्रदूषण सम्बन्धी समस्त समस्याओं से केवल यज्ञ के विधिवत अनुष्ठान के द्वारा छुटकारा पा सकते हैं। गुरुवर्य आचार्य श्री स्वामी विवेकानन्द जी के शब्दों में–''वर्तमान में पर्यावरण आदि विविध समस्याओं में उलझे हुए विश्व की रक्षा करने का यह (यज्ञ) एक निरापद अमोघ उपाय है और यदि हम इसे ऋषियों द्वारा प्रदत्त मानवता के लिए वरदान कहें तो यह उचित ही है।''[9]

इस विषय में अन्य आधुनिक पद्धति के वैज्ञानिक अध्ययन किये जाने चाहिए जिससे यज्ञ आदि में अनास्थावान व्यक्ति भी आध्यात्मिक प्रदूषण से मुक्त होकर आनन्द लाभ प्राप्त कर सके।

संदर्भ

1. *ऋग्वेदादिभाष्य . भूमिका*
2. *शतपथ ब्राह्मण 5/3/5/17*
3. *यजुर्वेदभाष्य 1/25*
4. *मनुस्मृति 3/48*
5. *यज्ञविमर्श, पृ0–77*
6. *यज्ञ विमर्श, पृ0–82, आर्षज्योति, पृ0–242*
7. *ऋग्वेद 1/85/3*
8. *यज्ञविमर्श, पृ0–88*
9. *ओ३म् तत्सत् अग्निहोत्र यज्ञ विज्ञान की दृष्टि में – स्वामी विवेकानन्द सरस्वती, प्रकाशक – स्वामी समर्पणानन्द वैदिक शोध संस्थान गुरुकुतत आश्रम (टीकरी भोला मेरठ पृ0–17*

Paper Received : 12 April, 2025 ***Paper Accepted : 25 July, 2025***

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 117-124

भक्तियोग का माहात्म्य

*डॉ० भास्कर प्रसाद द्विवेदी **

सारांश

भक्ति शब्द संस्कृत की 'भज्' धातु से बना है जिसका अर्थ है– पूजा करना या सेवा करना। यह ईश्वर, व्यक्ति या वस्तु के प्रति गहरा प्रेम, समर्पण, निष्ठा और श्रद्धा की भावना है। भक्ति का उद्देश्य आध्यात्मिक चेतना, विश्वास और संतुष्टि प्राप्त करना है। इसके विभिन्न रूप हो सकते हैं, जैसे– प्रेम भक्ति, नवधा भक्ति और देशभक्ति। ईश्वर के प्रति परम प्रेम को भक्ति कहते हैं जबकि अपनी देह, सन्तान, पत्नी या अन्य विषयों के प्रति जो प्रेम है वह आसक्ति कहलाती है। श्रीमद्भगवद्गीता कर्मयोग और ज्ञानयोग के संयोजन में भक्तियोग का परिचय देती है जबकि भागवतपुराण भक्ति का विस्तार करता है और भक्तियोगी के लिए नौ विशिष्ट गतिविधियां प्रस्तुत करता है। श्रीमद्भगवद्गीता ने भक्ति के रूप में उस समय धर्म की दो प्रमुख प्रथाओं का विकल्प प्रस्तुत किया– सन्यासी का एकान्तवास और धार्मिक अनुष्ठान का अभ्यास। स्वामी विवेकानन्द ने भक्ति को परमात्मा से मिलन का व्यवस्थित मार्ग बताया था।

हिन्दू धर्म में भक्तियोग से आशय अपने इष्ट देवता में अनुराग रखकर आन्तरिक विकास करने से है। इसे भक्तिमार्ग भी कहते हैं। यह उन तीन मार्गों में से एक है जिससे मोक्ष की प्राप्ति हो सकती है। अन्य दो मार्ग हैं– ज्ञानयोग तथा कर्मयोग। भक्ति की परम्परा बहुत पुरानी है। ग्यारह महत्त्वपूर्ण उपनिषदों में से एक श्वेताश्वतर उपनिषद् में भक्ति का उल्लेख है। श्वेताश्वतरोपनिषद् में कहा गया है कि जिसकी उस परमदेव परेश्वर में तथा गुरु में भक्ति है वही उस परमात्मा को जान सकता है तथा उसी के हृदय में वह प्रकाशित होता है –

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।।[1]

जब मनुष्य परमेश्वर के प्रति अपने समस्त कर्मों तथा भावों का समर्पण कर देता है तब उसके इस समर्पण से उन कर्मों का अभाव हो जाने पर इस साधक के पूर्वसंचित कर्मसमुदाय का भी सर्वथा नाश हो जाता है। इस प्रकार कर्मों का नाश हो जाने पर वह साधक परमात्मा को प्राप्त हो जाता है–

आरभ्य कर्माणि गुणान्वितानि भावांश्च सर्वान् विनियोजयेद्यः।
तेषामभावे कृतकर्मनाशः कर्मक्षये याति स तत्त्वतोऽन्यः।।[2]

---

* *असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चुनार, माँ विन्ध्यवासिनी विश्वविद्यालय, मीरजापुर*

भक्तियोग क्या है? यह योग भावना प्रधान और प्रेमी प्रकृति वाले व्यक्ति के लिये उपयोगी है। वह ईश्वर से प्रेम करना चाहता है और सभी प्रकार के क्रिया–अनुष्ठान, पुष्प, गन्ध–द्रव्य, मन्दिर और मूर्ति का आश्रय लेकर अपने इष्ट को प्राप्त करना चाहता है। प्रेम एक आधारभूत एवं सार्वभौम संवेग है। यदि कोई व्यक्ति मृत्यु से डरता है तो इसका अर्थ है कि उसे अपने जीवन से प्रेम है। स्वार्थी व्यक्ति अपने उद्येश्यों से अधिक प्रेम करता है। किसी व्यक्ति को अपनी पत्नी या पुत्र आदि से विशेष प्रेम हो सकता है। इस प्रकार का प्रेम मोह, भय, घृणा तथा शोक उत्पन्न करता है। यदि यही प्रेम परमात्मा से हो जाए तो मनुष्य के मुक्ति का मार्ग प्रशस्त होने लगता है। ज्यों–ज्यों ईश्वर से लगाव बढ.ता जाता है नश्वर सांसारिक वस्तुओं से लगाव कम होता जाता है। जब तक मनुष्य स्वार्थयुक्त उद्देश्य लेकर ईश्वर का ध्यान करता है तब तक वह भक्तियोग की परिधि में नहीं आता। पराभक्ति ही भक्तियोग के अन्तर्गत आती है जिसमें मुक्ति को छोड.कर अन्य कोई अभिलाषा नहीं होती। स्वर्ग, सन्तति, सम्पत्ति या किसी अन्य कामना की पूर्ति के लिए भक्ति को माध्यम बनाना विशालकाय जहाज से छोटी नदी को पार करने जैसा महान् साधन से तुच्छ साध्य को प्राप्त करने के समान होता है। विष्णुपुराण में भक्ति की सर्वोत्तम परिभाषा दी गयी है–

या प्रीतिरविवेकानां विषयेष्वनपायिनी।
त्वामनुस्मरतः सा मे हृदयान्मापसमर्पतु।।[3]

हे ईश्वर! अज्ञानी जनों की जैसी गाढी प्रीति इन्द्रियों के भोग के नाशवान् पदार्थों पर रहती है, उसी प्रकार की प्रीति मेरी तुझमें हो और तेरा स्मरण करते हुए मेरे हृदय से वह कभी दूर न होवे।

श्रीमद्भगवद्गीता का बारहवां अध्याय भक्तियोग के अभिधान से जाना जाता है। इसमें आध्यात्मिक साधना के अन्य मार्गों की अपेक्षा भक्तिमार्ग की सर्वोत्कृष्टता पर प्रकाश डाला गया है। इसका प्रारम्भ अर्जुन द्वारा श्रीकृष्ण से पूछे गए इस प्रश्न से होता है कि योग में किन्हें पूर्ण मानें? जो भगवान के साकार रूप में भक्ति करते हैं या वे जो निराकार ब्रह्म की उपासना करते हैं। इसका उत्तर देते हुए श्रीकृष्ण कहते हैं कि दोनों मार्ग भगवद्प्राप्ति की ओर ले जाते हैं किन्तु वे उनकी साकार रूप की पूजा करने वाले भक्त का श्रेष्ठ योगी के रूप में सम्मान करते हैं। वे कहते हैं कि मायाबद्ध देहधारियों के लिए

उनके निराकार अव्यक्त रूप की आराधना करना अत्यन्त कष्टसाध्य है जबकि साकार रूप की आराधना करने वाले भक्त अपनी चेतना के साथ ही भगवान में विलीन हो जाते हैं और उनके प्रत्येक कर्म भगवान को समर्पित होते हैं। इसलिये श्रीकृष्ण अर्जुन को अपनी बुद्धि उन्हें समर्पित करने और अपने मन को केवल उनकी प्रेममयी भक्ति में स्थिर करने के लिए कहते हैं। किन्तु ऐसा प्रेम प्रायः संघर्षमयी आत्मालभ्य होता है। इसलिए श्रीकृष्ण अन्य विकल्प देते हुए कहते हैं कि यदि भक्त तुरन्त अपने मन को पूर्णरूप से भगवान में एकाग्र करने की अवस्था प्राप्त नहीं कर सकता तब उसे निरन्तर अभ्यास द्वारा पूर्णता की अवस्था को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। भक्ति कोई रहस्यमयी उपहार नहीं है अपितु इसे निरन्तर प्रयास से ही पोषित किया जा सकता है। यदि मनुष्य को यह भी कठिन लगता है तो सबसे सरलतम मार्ग यह है कि उसे अपने कर्म फलों का त्याग कर देना चाहिए और अपनी आत्मा में स्थित हो जाना चाहिए। श्रीकृष्ण कहते हैं कि लौकिक कर्मों से श्रेष्ठ ज्ञानार्जन है, ज्ञानार्जन से श्रेष्ठ ध्यान है और ध्यान से श्रेष्ठ कर्म–फलों का त्याग करना है जो तुरन्त परमशांति के मार्ग की ओर ले जाता है। इस अध्याय के शेष श्लोकों में उनके प्रिय भक्तों के अद्‌भुत गुणों का वर्णन किया गया है जो भगवान को अत्यन्त प्रिय हैं। अर्जुन ने पूछा कि आपके साकार रूप पर दृढ.ता पूर्वक निरन्तर समर्पित होने वालों को या आपके अव्यक्त निराकार रूप की आराधना करने वालों में से आप किसे पूर्ण योग मानते हैं–

एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते।
ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः।।[4]

आनन्दमयी भगवान ने कहा वे जो अपने मन को मुझमें स्थिर करते हैं और सदैव दृढतापूर्वक पूर्ण श्रद्धा के साथ मेरी भक्ति में तल्लीन रहते हैं, मैं उन्हें ही सर्वश्रेष्ठ योगी मानता हूं। लेकिन जो लोग अपनी इन्द्रियों को निग्रह करके सर्वत्र समभाव से मेरे परम सत्य निराकार अविनाशी निर्वचनीय अव्यक्त सर्वव्यापक अकल्पनीय अपरिवर्तनीय शाश्वत और अचल रूप की पूजा करते हैं। वे सभी जीवों के कल्याण में संलग्न रहकर मुझे प्राप्त करते हैं–

मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः।।[5]

जिन लोगों का मन भगवान के अव्यक्त रूप पर आसक्त होता है उनके लिए भगवान की अनुभूति का मार्ग अतिदुष्कर और कष्टों से भरा होता है। अव्यक्त रूप की उपासना देहधारी जीवों के लिए अत्यन्त दुष्कर होती है। लेकिन जो अपने सभी कर्मों को मुझे समर्पित करते हैं और मुझे परम लक्ष्य समझकर मेरी आराधना करते हैं और अनन्य भक्ति भाव से मेरा ध्यान करते हैं मन में मुझमें स्थिर कर अपनी चेतना को मेरे साथ एकीकृत कर देते हैं मैं उन्हें शीघ्र जन्म–मृत्यु के सागर से पार कर उनका उद्धार करता हूं। अपने मन को केवल मुझ पर स्थिर करो और अपनी बुद्धि मुझे समर्पित कर दो। इस प्रकार से तुम सदैव मुझ में स्थित रहोगे। श्रीकृष्ण कहते हैं कि हे अर्जुन! यदि तुम दृढ.ता से मुझ पर अपना मन स्थिर करने में असमर्थ हो तो सांसारिक कार्यकलापों से मन को विरक्त कर भक्ति भाव से निरंतर मेरा स्मरण करने का अभ्यास करो–

अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम्।
अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय।।[6]

श्रीकृष्ण कहते हैं कि यदि तुम भक्ति मार्ग के पालन के साथ मेरा स्मरण करने का अभ्यास नहीं कर सकते तब मेरी सेवा के लिए कर्म करने का अभ्यास करो। इस प्रकार तुम पूर्णता की अवस्था को प्राप्त कर लोगे। यदि तुम भक्तियुक्त होकर मेरी सेवा के लिए कार्य करने में असमर्थ हो तब अपने सभी कर्मों के फलों का त्याग करो और आत्मस्थित हो जाओ। शारीरिक अभ्यास से श्रेष्ठ ज्ञान है, ज्ञान से श्रेष्ठ ध्यान है और ध्यान से श्रेष्ठ कर्मफलों का परित्याग है और ऐसे त्याग से शीघ्र मन को शांति प्राप्त होती है। जो किसी प्राणी से द्वेष नहीं करते, सबके मित्र हैं, दयालु हैं ऐसे भक्त मुझे अति प्रिय हैं क्योंकि वे स्वामित्व की भावना से अनासक्त और मिथ्या अहंकार से मुक्त रहते हैं। दुख और सुख में समभाव रहते हैं और क्षमावान होते हैं। जो मेरी भक्ति में दृढ.ता से एकीकृत हो जाते हैं वे आत्मसंयमित होकर दृढ. संकल्प के साथ अपना मन और बुद्धि मुझे समर्पित करते हैं। वे जो किसी को उद्विग्न करने का कारण नहीं होते और न ही किसी के द्वारा व्यथित होते हैं। जो सुख–दुख में समभाव रहते हैं, भय और चिन्ता से मुक्त रहते हैं, मेरे ऐसे भक्त मुझे अतिशय प्रिय हैं। वे जो सांसारिक प्रलोभनों के प्रति उदासीन रहते हैं, बाह्य और आंतरिक रूप से शुद्ध, निपुण, चिन्तारहित, कष्टरहित और सभी कार्यकलापों में स्वार्थरहित रहते हैं, ऐसे मेरे

भक्त मुझे अतिशय प्रिय हैं। वे जो न तो लौकिक सुखों से हर्षित होते हैं और न तो सांसारिक दुखों से निराश होते हैं तथा न ही किसी हानि के लिए शोक करते हैं एवं न ही लाभ की लालसा करते हैं, वे शुभ और अशुभ कर्मो का परित्याग करते हैं ऐसे भक्त जो भक्ति भावना से परिपूर्ण होते हैं वे मुझे अतिशय प्रिय हैं। जो मित्रों और शत्रुओं के लिए एक समान हैं, मान–अपमान, शीत–उष्ण, सुख–दुख में समभाव रहते हैं, जो सभी प्रकार के कुसंग से मुक्त रहते हैं, जो अपनी प्रशंसा और निदा को एक जैसा समझते हैं, जो सदैव मौन–चिन्तन में लीन रहते हैं, जो मिल जाए उसी में संतुष्ट रहते हैं, घर गृहस्थी में आसक्ति नहीं रखते, जिनकी बुद्धि दृढ.तापूर्वक मुझमें स्थिर रहती है और जो मेरे प्रति भक्तिभाव से परिपूर्ण रहते हैं वे मुझे अतिशय प्रिय हैं–

तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी संतुष्टो येन केनचित्।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः।।
ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते।
श्रद्धधाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः।।[7]

श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि जो भक्त अनन्य भाव से मेरा स्मरण करते हैं मैं उनके योग–क्षेम की स्वयं रक्षा करता हूं। यहां पर भक्ति के लिये अनन्य भाव का होना आवश्यक है। जिनके साध्य और साधन एक होते हैं, जो कुछ भी दृश्य और श्रव्य है वह सब ईश्वर का ही स्वरूप है, ऐसा जो दृढता से मान लेते हैं उनकी ईश्वर के अतिरिक्त कहीं भी महत्त्वबुद्धि नहीं होती। ऐसे अनन्य भक्त ईश्वर के प्रति प्रेम को स्वजीवन निर्वाह से भी अधिक महत्त्वपूर्ण मानते हैं।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम्।।[8]

श्रीमद्भगवद्गीता ज्ञान, कर्म और भक्ति की समस्त जिज्ञासाओं को शान्त करने वाला एक विलक्षण ग्रन्थ है। साक्षात् परमेश्वर श्रीकृष्ण के मुख से निःसृत हुए गीता के श्लोकों को किसी अन्य प्रमाण की कसौटी पर खरा उतरने की अपेक्षा नहीं की जाती। गीता में जितने भाव भरे हैं उतने बुद्धि में नहीं आते, जितने बुद्धि में आते हैं उतने मन में नहीं आते और जितने मन में आते हैं उतने भावों को वाणी कहने में समर्थ नहीं हो पाती। भक्ति की सीमा

या भक्ति का स्वरूप क्या होना चाहिये? इस शंका का समाधान करते हुए भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि–

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्यस्य मत्पराः।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते।।[9]
तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम्।।[10]

जो मनुष्य अपने सभी कर्मों को मुझे अर्पित करके मेरी शरण होकर अनन्यभाव से भक्तियोग में स्थित होकर निरन्तर मेरा चिन्तन करते हुए मेरी आराधना करते हैं, मुझमें स्थिर मन वाले उन मनुष्यों का मैं जन्म मृत्युरूपी संसार सागर से शीघ्र ही उद्धार करता हूं। भगवान कहते हैं कि जो जिस भाव से मेरी शरण आता है, उसी भाव से मैं उसको आश्रय देता हूँ–

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्ततन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।।[11]

अतः वे कहते हैं कि यद्यपि मैं सब में समभाव से स्थित हूँ तथापि जिनका एकमात्र प्रिय मैं हूं, जो मेरे लिये ही सम्पूर्ण कर्म करते हैं और मेरे परायण होकर नित्य निरन्तर मेरे ही ध्यान, जप, चिन्तन आदि में लगे रहते हैं, ऐसे भक्तों का मैं स्वयं मृत्यु–संसार–सागर से सम्यक् प्रकार से उद्धार कर देता हूँ। जब साधक भगवत्प्राप्ति के निमित्त बार बार नाम–जप, भजन–कीर्तन, श्रवण आदि का अभ्यास करता है तब उसका अन्तःकरण शुद्ध होने लगता है और भगवत्प्राप्ति की प्रबल इच्छा जाग्रत हो जाती है। भगवत्प्राप्ति की तीव्र इच्छा होने पर भगवान से मिलने के लिये व्याकुलता पैदा हो जाती है। यह व्याकुलता उसकी अवशिष्ट सांसारिक आसक्ति एवं अनन्त जन्मों के पाप को जला डालती है। जब भक्त भगवान के बिना नहीं रह सकता तो भगवान भी उस भक्त के बिना नहीं रह पाते और उससे मिलने का मार्ग सृजित कर देते हैं। अतः भगवान को पाने के लिये अभ्यास की विशिष्ट आवश्यकता है। श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं कि यदि तू मन को मुझमें अचल भाव से स्थिर करने में अपने को असमर्थ पाता है तो अभ्यास योग के द्वारा मेरी प्राप्ति की इच्छा कर। भगवान् यह भी कहते हैं कि निर्गुण निराकार ब्रह्म की उपासना करने वालों की अपेक्षा सगुण साकार ईश्वर की उपासना करने वाला श्रेष्ठ है। साथ ही

ऐसे भक्त के लिये समर्पण, अभ्यास, भगवदर्थ कर्म तथा सर्वकर्मफलत्याग ये चार साधन बताए हैं। इन चार साधनों से सिद्धावस्था को प्राप्त हुए अपने प्रिय भक्त के बारह लक्षणों का उल्लेख भगवान ने गीता में किया है–

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च।
निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुखः क्षमी।।
सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः।।[12]

अर्थात् द्वेषभाव से रहित, मित्रभाव वाला, दयालु, ममतारहित, अहंकार रहित, सुखदुख मे सम, क्षमाशील, निरन्तर सन्तुष्ट, योगी, शरीर को वश में रखने वाला, दृढनिश्चयी तथा मुझमें अर्पित मन–बुद्धिवाला मेरा भक्त मुझे प्रिय है। श्रीमद्भागवत महापुराण में भक्ति के नौ प्रकार बताए गए हैं जिन्हें नवधा–भक्ति कहा गया है–

श्रवणं कीर्तनं विष्णोः स्मरणं पादसेवनम्।
अर्चनं वन्दनं दास्यं सख्यमात्मनिवेदनम्।।[13]

श्रवण का तात्पर्य है ईश्वर की लीला, कथा, महत्त्व, शक्ति, स्त्रोत इत्यादि को परम श्रद्धा के सहित अतृप्त मन से निरंतर सुनना– परीक्षित की भांति। कीर्तन है– ईश्वर के गुण, चरित्र, नाम, पराक्रम आदि का आनंद एवं उत्साह के साथ कीर्तन करना– शुकदेव की भांति। निरन्तर अनन्य भाव से परमेश्वर का स्मरण करना, उनके महात्म्य और शक्ति का स्मरण कर उस पर मुग्ध होना स्मरण है– प्रह्लाद की भांति। पादसेवन है– ईश्वर के चरणों का आश्रय लेना और उन्हीं को अपना सर्वस्व समझना– लक्ष्मी की भांति। मन वचन और कर्म द्वारा पवित्र सामग्री से ईश्वर के चरणों का पूजन करना अर्चन कहलाता है– पृथुराजा की भांति। भगवान की मूर्ति को अथवा भगवान के अंश के रूप में व्याप्त भक्तजन, आचार्य, गुरुजनों, माता पिता आदि को परम आदर सत्कार के साथ पवित्र भाव से नमस्कार करना या उनकी सेवा करना ही वन्दन है– अक्रूर की भांति। ईश्वर को स्वामी और स्वयं को दास समझकर परम श्रद्धा के साथ सेवा करना दास्यभाव की भक्ति है– हनुमान की भांति। सख्य– ईश्वर को ही अपना परम मित्र समझकर अपना सर्वस्व उसे समर्पण कर देना तथा सच्चे भाव से अपने पाप पुण्य का निवेदन करना– अर्जुन की भांति। अपने

आप को भगवान के चरणों में सदा के लिये समर्पित कर देना और कुछ भी अपनी स्वतन्त्र सत्ता न रखना ही आत्मनिवेदन है। राजा बलि को इस श्रेणी का भक्त कहा जाता है। यह भक्ति की सर्वोत्तम अवस्था मानी गयी है। इस प्रकार भक्त और भगवान में प्रत्येक अद्वैत की समाप्ति होकर एकाकार हो जाना तथा भक्त के द्वारा स्वयं को समर्पित कर देना ही भक्तियोग है और यही भगवान् को प्रिय है।

संदर्भ

1. *श्वेताश्वतरोपनिषद् 6.23*
2. *श्वेताश्वतरोपनिषद् 6.4*
3. *विष्णुपुराण 1.20.19*
4. *श्रीमद्भगवद्गीता 12.1*
5. *श्रीमद्भगवद्गीता 12.2*
6. *श्रीमद्भगवद्गीता 12.9*
7. *श्रीमद्भगवद्गीता 12.19. 20*
8. *श्रीमद्भगवद्गीता 9.22*
9. *श्रीमद्भगवद्गीता 12.6*
10. *श्रीमद्भगवद्गीता 12.7*
11. *श्रीमद्भगवद्गीता 4.11*
12. *श्रीमद्भगवद्गीता 12.13. 14*
13. *श्रीमद्भागवत पुराण 7.5.23*

Paper Received : 12 April, 2025 ***Paper Accepted : 25 July, 2025***

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 125-132

जनवादी चेतना और आत्मान्वेषण की अभिव्यक्ति मुक्तिबोध की लंबी कविता "अंधेरे में"

*डॉ० संतोष कुमार पाण्डेय **

*जय राज पाण्डेय ***

सारांश

मुक्तिबोध की लंबी कविता 'अंधेरे में' हिंदी नई कविता आंदोलन की ऐसी प्रतिनिधि कृति है जिसमें मध्यवर्गीय बुद्धिजीवी का आत्मसंघर्ष, अपराधबोध और छद्म चेतना गहराई से उद्घाटित होती है। इस कविता में मुक्तिबोध ने तिलस्मी खोह, अंधेरा कमरा, जुलूस, तिलक की मूर्ति और गांधी जैसे प्रतीकों के माध्यम से समाजवादी और जनवादी आदर्शों के क्षरण को चित्रित किया है। मध्यवर्ग स्वतंत्रता से पहले लोकतंत्र और समाजवाद जैसे मूल्यों की स्थापना की उम्मीद करता था, परंतु स्वतंत्रता के बाद वही वर्ग पूंजीवादी आकांक्षाओं में उलझ कर इन मूल्यों से विश्वासघात करता है। कविता का नायक स्वप्न और फैंटेसी में अपने भीतर के अपराधबोध और आत्मग्लानि से जूझता है। रक्तालोक स्नात पुरुष उसके भीतर की वही जनवादी चेतना है जो उसे आत्मोद्बोधन के लिए प्रेरित करती है परंतु मध्यवर्गीय सुविधाभोगी उसे अंधेरे में ही उलझाए रखता है। कविता लोकतंत्र के विघटन, सत्ता के चारित्रिक पतन और फासिस्ट प्रवृत्तियों की आलोचना करते हुए कवि, लेखक और बुद्धिजीवी वर्ग का आह्वान करती है कि वे सत्ता के मुखपत्र न बनें, बल्कि जनता के पक्ष में खड़े हों। यह कृति आत्मान्वेषण, आत्मसंघर्ष और सामूहिक जनचेतना के मेल से एक प्रगतिशील समाज निर्माण का स्वप्न प्रस्तुत करती है और हिंदी कविता को एक नया फैंटेसी यथार्थ सौंपती है।

***मुख्य शब्द** – ब्रह्मराक्षस, प्रयोगवाद, समाजवाद, जनवाद, लोकतंत्र, न्याय, अहिंसा, गांधी, तिलक, मध्यवर्ग, द्वंद, संघर्ष।*

मुक्तिबोध प्रयोगवाद और नई कविता धारा से जुड़े हुए कवि थे। मुक्तिबोध में यदि एक तरफ व्यक्तिवाद था तो दूसरी तरफ समाजवाद और मार्क्सवाद। मुक्तिबोध इस बात को मानते थे कि समाज का ठीक होना आवश्यक है परंतु उससे पहले यह आवश्यक है कि व्यक्ति अपने आप को संशोधित करे।

इसलिए कि जो है उससे बेहतर चाहिए पूरी दुनिया साफ करने के लिए मेहतर चाहिए वह मेहतर मैं हो नहीं पाता।[1]

---

* *असिस्टेंट प्रोफेसर एवं शोध निर्देशक हिंदी–विभाग, फीरोज गांधी कॉलेज, रायबरेली, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ*

** *शोध–छात्र, हिंदी, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ*

मुक्तिबोध की कविताएं एक तरफ मध्यवर्ग व्यक्ति को पकड़ने की कोशिश करती हैं तो दूसरी तरफ समाजवाद मार्क्सवादी चेतना को भी उभारने की कोशिश करती हैं। मुक्तिबोध की कविताओं में मध्यवर्गी बुद्धिजीवी ही नायक है जो ब्रह्मराक्षस और रक्तालोक स्नात पुरुष जैसे प्रतीकों के रूप में उभर कर आया है।

मुक्तिबोध की कविताओं के केंद्र में मध्यवर्ग और उसकी छद्म चेतना है। इस छद्म चेतना में मध्यवर्ग समाजवादी हितों की बात तो करता है लेकिन दूसरी तरफ यह अपने लिए उच्चवर्गीय पूंजीवादी सुविधाओं और महत्वाकांक्षाओं को भी हासिल करना चाहता है। अब ऐसे में यह मध्यवर्ग पूंजीवादी हितों की ओर जाए या समाजवादी आकांक्षाओं की ओर वह तय नहीं कर पाता यही इसकी छद्म चेतना है। मध्यवर्ग के मन में यह भाव था कि भारत जब आजाद होगा तो लोकतंत्र, समाजवाद, स्वतंत्रता, मानवता, बंधुत्व और न्याय जैसे मूल्यों की स्थापना होगी लेकिन पीड़ा यह है कि आजादी तो मिली लेकिन इन्हीं मूल्यों के साथ इसी मध्यवर्ग ने विश्वासघात किया।

मुक्तिबोध की कविताएं मध्यवर्ग के इसी अपराध बोध को उद्घाटित करती हैं। ब्रह्मराक्षस कविता का नायक खंडहर की बावड़ी में घुसा हुआ है स्नान कर रहा है–

> प्रतिपल पाप–छाया दूर करने के लिए, दिन–रात स्वच्छ करने –ब्रह्मराक्षस घिस रहा है देह हाथ के पंजे, बराबर, बाँह–छाती–मुँह छपाछप खूब करते साफ, फिर भी मैल फिर भी मैल।[2]

वह अपराध बोध को धो देना चाहता है लेकिन दाग इतने गहरे हैं कि वह धोए नहीं जा सकते।

मुक्तिबोध की कविताओं के दो हथियार हैं, आत्मसंघर्ष तथा मध्यवर्ग के द्वंद। अंधेरे में कविता का नायक अपने कमरे में सोया हुआ है वह स्वप्न से जागना नहीं चाहता उसे अपनी सुविधाएं पसंद हैं। रक्तालोक स्नात पुरुष उसे बुलाना चाहता है लेकिन वह कहता है मुझे ऊंचाइयों से डर लगता है। तुम चाहते हो मैं नदी नाले को पार कर आऊं लेकिन मुझे अपनी सुविधाओं और अपनी कमजोरी को त्याग कर तुम्हारे पीछे आना पसंद नहीं है।

> लगता है— दरवाजा खोलकर बाँहों में कस लूँ... मैं पड़ा हुआ हूँ, शक्ति ही नहीं है कि उठ सकूँ जरा भी (यह भी तो सही है कि कमजोरियों से ही लगाव है मुझको) इसीलिए टालता हूँ उस मेरे प्रिय को डरता हूँ उससे।[3]

दूसरी तरफ उनकी कविताओं में व्यक्तित्व का परिवर्तन भी है। मध्यवर्ग सुविधाभोगी आत्म चेतस है। एक ओर तो वह विश्वचेतस बनना चाहता है। लेकिन दूसरी ओर अपने जीवनधर्मिता के लिए भी जीना चाहता है। इसीलिए

> पिस गया वह भीतरी और बाहरी दो कठिन पाटों बीच, ऐसी ट्रेजिडी है नीच।[4]

मुक्तिबोध ने अवचेतन मन के अमूर्त भाव और विचारों को बिंबो और प्रतीकों के माध्यम से उसे पहले स्वप्नकथा में बदलने की कोशिश की फिर स्वप्नकथा को कविता का नाम दिया। यही वजह है मुक्तिबोध ने फैंटेसी शैली को अपनाया। इसीलिए मुक्तिबोध की कविताओं में अवचेतन मन के अपराध बोध हैं, गुहा अंधकार है, तिलिस्मी खोह है। कहीं बरगद है तो कहीं डरावने पेड़।

> रचना और अर्थ का स्रोत कवि की वह व्यापक वेदना है जिसे वह बार—बार 'सत्—चित्—वेदना' कह कर अभिहित करता है। वक्तृत्व के अंश शायद सबसे कम इस कविता में आते हैं, जो बहुत बार उसके नाटकीय विधान में घुल—मिल गए हैं, और इस स्तर पर यह मुक्तिबोध की क्लासिक कृति है।[5]

अंधेरे में कविता में कुल आठ खंड है। इस कविता का काव्यनायक स्वप्न में कई दृश्यों को देखता है। वह देखता है कि—

> जिन्दगी के...कमरों में अँधेरे लगाता है चक्कर कोई एक लगातार आवाज पैरों की देती है सुनाई बार—बार... बार—बार, वह नहीं दीखता...।[6]

यह काव्यनायक स्वप्न में देख रहा है कि अंधेरे कमरे में कोई चल रहा है यह अंधेरा कमरा और कुछ नहीं अवचेतन मन का परिचायक है। अचानक उसे दिखता है।

> इतने में अकस्मात् गिरते हैं भीतर से फूले हुए पलस्तर, चूने–भरी रेत खिसकती हैं पपड़ियाँ इस तरह–खुद–ब–खुद कोई बड़ा चेहरा बन जाता है। नुकीली नाक और भव्य ललाट है, दृढ़ हनु, कोई अनजानी अन–पहचानी आकृति।[7]

रामविलास शर्मा लिखते हैं –''कामायनी के इस मनु से मुक्तिबोध की कविता के मनु की तस्वीर बहुत कुछ मिलती जुलती है।''[8] लेकिन नामवर सिंह लिखते हैं– कामायनी के मनु अंततः कैलास पर जाकर समरस की साधना में लीन हो जाते हैं जबकि 'अंधेरे में' का मनु जगत की गलियों में घूमता है प्रतिपल, वही फटेहाल रूप।[9]

अगले दृश्य में देखता है कि शहर के बाहर के तालाब का जल श्याम है उसे उसमें एक श्वेत आकृति दिखाई पड़ती है, काव्यनायक समझ नहीं पाता कि जो पपड़ी और प्लास्टर के झड़ जाने से आकृति उभर कर आई है और तालाब में जो आकृति है ये दोनों या जिनके पैरों की आवाज सुनाई पड़ती है वह कौन है ?

> बाहर शहर के, पहाड़ी के उस पार, तालाब..निस्तब्ध जल, पर, भीतर से उभरती है सहसा सलिल के तम–श्याम शीशे में कोई श्वेत आकृति.. किन्तु, मैं हतप्रभ, नहीं वह समझ में आता।[10]

सपने में ही अचानक काव्य नायक देखता है कि–

> अकस्मात् –वृक्षों के अँधेरे में छिपी हुई किसी एक तिलस्मी खोह का शिला–द्वार खुलता है धड़ से घुसती है लाल–लाल मशाल अजीब–सी.. कुहरे में, सामने, रक्तालोक–स्नात पुरुष एक, रहस्य साक्षात्।[11]

तब काव्यनायक समझता है यह वही आकृति है जिसे मैने नील सलिल में और कमरे में देखा था। फेंटेसी शैली की यही पहचान है कि वहां स्वप्नकथा चलती रहती है अगले क्रम में वह देखता है कि –

> साँकल ही रह–रह बजती है द्वार पर आधी रात, इतने अँधेरे में, कौन आया मिलने? बाहर जो खड़ा है यह वही व्यक्ति है, जी हाँ! जो मुझे तिलिस्मी खोह में दिखा था।[12]

लेकिन काव्यनायक अपनी कमजोरी में इतना थका और उलझा हुआ है कि बार बार बजती उस साकल से उत्पन्न अपने भीतर के उद्‌बोध को सुनना नहीं चाहता है। हालांकि यह जान गया है कि वह कोई और नहीं रक्तालोक स्नात पुरुष ही है जो इसे जगाने के लिए इसे इसी की बात बताने के लिए बेचौन है। परंतु यह तो मध्यवर्गीय सुविधाभोगी नायक है। यह क्यों उसकी बात सुने

> अवसर–अनवसर प्रकट जो होता ही रहता मेरी सुविधाओं का न तनिक खयाल कर... प्रतीकों में प्रस्तुत, इशारे से बताता है, समझाता रहता, हृदय को देता है बिजली के झटके।[13]

मुक्तिबोध की कविताएं लोकतंत्र में आई गिरावट राजनीति के चारित्रिक पतन जैसे मुद्दों को उद्‌घाटित करती हैं। काव्यनायक देखता है कि जुलूस में चल रहे कुछ लोगों की निगाह इस पर पड़ती है और आवाज आती है–

> मारो गोली, दागो स्साले को मार डालो, उसको खत्म करो एकदम''
> रास्ते पर भाग–दौड़ धका–पेल गैलरी से भागा मैं पसीने से शराबोर।[14]

काव्य नायक पकड़ा जाता है और उसे ऐसा लगता है–

> किसी काले डैश की घनी काली पट्टी ही आँखों पे बँध गयी, किसी खड़ी पाई की सूली पर मैं टांग दिया गया, किसी शून्य बिन्दु के अँधियारे खड्डे में गिरा दिया।[15]

जिस व्यवस्था के द्वारा उसे पकड़ा जाता है यह व्यवस्था नहीं चाहती है कि कोई चेतस व्यक्ति जागृतावस्था में आ जाय। मुक्तिबोध जानते हैं कि मध्यवर्ग के पास ज्ञान विज्ञान की कमी नहीं है परंतु वह अपने ज्ञान का सामाजिक संवेदना के उद्देश्य से प्रयोग नहीं कर पाता। ब्रह्मराक्षस और अंधेरे में का नायक दोनों इसी बात के परिचायक हैं। वर्तमान व्यवस्था ऐसे जागरूक लोगों के खिलाफ है। ऐसे लोग व्यवस्था के लिए घातक साबित हो सकते हैं इसलिए व्यवस्था उसके साथ कुछ ऐसा बर्ताव करती है कि–

> शीश की हड्डी जा रही तोड़ी।
> लोहे की कील पर बड़े हथौड़े पड़ रहे लगातार।
> शीश का मोटा अस्थि–कवच ही निकाल डाला।[16]

मुक्तिबोध कविता में मार्शल लॉ की चर्चा करते हैं जहां सैनिक सत्ता लागू की जाती है। लोकतंत्र की सारी शक्तियां सेना के हाथों में चली जाती है। अधिनायकवाद निरंकुशता और तानाशाही का जन्म होता है। अभिव्यक्ति की आजादी खत्म कर दी जाती है। ऐसे में काव्यनायक अपने होशोहवास छोड़कर स्वप्न में भागता दिखाई पड़ता है। काव्यनायक स्वप्न में भागता ही जा रहा है कि उसे अचानक तिलक की मूर्ति दिखाई पड़ती है

> तिलक की पाषाण–मूर्ति है निःसंग स्तब्ध जड़ीभूत...देखता हूँ उसको परन्तु, यह क्या!! भव्य ललाट की नासिका से बह रहा खून न जाने कब से लाल–लाल गरमीला रक्त टपकता।[17]

आजाद भारत में लोकतंत्र तो आया ज्ञान विज्ञान की व्यवस्था तो हुई लेकिन गांधीवादी आदर्शों और मूल्यों की हत्या हुई। काव्यनायक स्वप्न में भागता ही जा रहा कि अचानक उसे बरगद के वृक्ष पर रहने वाला एक सिरफिरा दिखाई पड़ता है जो कि अब आत्मउद्बोधित हो चुका है। वह जान गया है कि शहर में मार्शल लॉ लागू हो चुका है, इसीलिए वह मुझे भी जगाने के लिए गीत गा रहा है...

> ओ मेरे आदर्शवादी मन, ओ मेरे सिद्धान्तवादी मन, अब तक क्या किया? जीवन क्या जिया !!
>
> उदरम्भरि बन अनात्म बन गये, भूतों की शादी में कनात–से तन गये, किसी व्यभिचारी के बन गये बिस्तर,...बहुत–बहुत ज्यादा लिया, दिया बहुत–बहुत कम, मर गया देश, अरे, जीवित रह गये तुम।[18]

मध्यवर्ग के गाल पर तमाचा जड़ते हुए मुक्तिबोध कहते हैं कि तुमने लोककरुणा को मन से निकाल कर जन सामान्य के हितों की बात सोचना बंद कर दिया सिर्फ अपने ही कीचड़ में सन कर तुम केंचुए की तरह सिमट गए।इस गीत को सुनकर काव्यनायक स्वयं उद्बोधित हो चुका है। वह जान चुका है कि रक्तालोक स्नात पुरुष ही उसकी आत्मा की पीड़ा है अब उसी की बात को सुनना है।

> वह रहस्यमय व्यक्ति अब तक न पायी गयी मेरी अभिव्यक्ति है,
> पूर्ण अवस्था वह निज–सम्भावनाओं,

निहित प्रभावों, मेरे परिपूर्ण का आविर्भाव,
हृदय में रिस रहे ज्ञान का तनाव वह, आत्मा की प्रतिमा।[19]

बच्चन सिंह लिखते हैं इसमें न अस्मिता की खोज है और न अस्तित्ववाद–रहस्यवाद। इसमें अँधेरे के विरुद्ध प्रकाश का संघर्ष है। इसी संघर्ष में ही उसकी अपनी रचना–प्रक्रिया–आत्मसंभवा परम अभिव्यक्ति होती है।[20] काव्यनायक का स्वप्न भंग होता है अब वह सब कुछ समझ चुका है वह कहता है कि अभिव्यक्ति पर जिन लोगों ने ताला लगा रखा है वह उसे बर्दाश्त नहीं है –

अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे उठाने ही होंगे।

तोड़ने ही होंगे मठ और गढ़ सब। पहुँचना होगा दुर्गम पहाड़ों के उस पार तब कहीं देखने मिलेंगी बाँहें जिसमें कि प्रतिपल काँपता रहता अरुण कमल एक ले जाने उसको धँसना ही होगा झील के हिम–शीत सुनील जल में।[21]

इस कविता में रक्तालोक स्नात पुरुष और कोई नहीं बल्कि अभिव्यक्ति तथा आत्मोद्बोधन को जगाने का परिचायक है जो मध्यवर्गीय व्यक्ति की आत्मा में कहीं बैठी हुई है। यह कविता स्वप्न कथा के माध्यम से मध्यवर्ग के मूल्यों, भावों एवं विचारों को बिंबो एवं प्रतीकों के माध्यम से उद्घाटित करती है। इस कविता का उद्देश्य जनवादी समाजवादी मूल्यों की स्थापना के साथ फासिस्ट पूंजीवादी तथा अधिनायकवादी शक्तियों का विरोध कर समाजवाद की स्थापना करना है।यह कविता व्यक्ति को अपने भीतर झांकने और अंधेरे कोनों को उजागर कर उन्हें मिटाने की प्रेरणा देती है।

संदर्भ

1. *मुक्तिबोध,चांद का मुंह टेढ़ा है,भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन नई दिल्ली 1985 , पृष्ठ 121*
2. *वही, पृष्ठ 36*
3. *वही, पृष्ठ –260*
4. *वही, पृष्ठ –41*
5. *रामस्वरूप चतुर्वेदी , हिंदी साहित्य और संवेदना का विकास , लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, 2000, पृष्ठ – 204*

6. चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ – 121
7. वही, पृष्ठ –256
8. रामविलास शर्मा, नयी कविता और अस्तित्ववाद, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2012, पृ. –147
9. नामवर सिंह, कविता के नए प्रतिमान, राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली 2003, पृ. – 248
10. चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ – 257
11. वही, पृष्ठ –257
12. वही, पृष्ठ –259
13. वही, पृष्ठ –259
19. वही, पृष्ठ –267
20. वही, पृष्ठ –258
21. वही, पृष्ठ –285
22. वही, पृष्ठ –277
23. वही, पृष्ठ –279
24. वही, पृष्ठ –270
25. वही, पृष्ठ –258
26. बच्चन सिंह, हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली 2006, पृष्ठ – 432
27. चांद का मुंह टेढ़ा है, पृष्ठ – 289

Paper Received : 12 April, 2025 ***Paper Accepted : 25 July, 2025***

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 133-141

ट्रावणकोर और कोचीन राज्य का भारत संघ में विलय

*डॉ० दिवाकर त्रिपाठी **
*विद्याधर मिश्र ***

सारांश

भारत प्राचीनकाल से लेकर अब तक सांस्कृतिक रूप से एक सुदृढ़ राष्ट्र के रूप में प्रतिष्ठापित रहा है। वैदिक साहित्य से लेकर लौकिक साहित्य के महाकाव्यों तक सभी में हमें एक राष्ट्र की संकल्पना दिखाई पड़ती है। आधुनिक भारत में राष्ट्रवाद का उदय 1857 के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम से दिखाई पड़ता है। किन्तु, इसी के साथ ब्रिटिश सरकार द्वारा भारत में 'फूट डालो और राज करो' की नीति भी खुलकर अपनायी गयी थी। 1947 में भारत को ब्रिटिश सत्ता से आजादी मिली। परन्तु यह आजादी देश के विभाजन के रूप में एक भीषण त्रासदी लेकर आयी थी। विभाजन के बाद भारत एवं देशी रियासतों को एक प्रशासन के अन्तर्गत लाना प्रायः राजनीतिक नेतृत्व के सामने सबसे महत्वपूर्ण कार्यभार था। सरदार वल्लभभाई पटेल बहुत कुशलता और दक्षतापूर्ण राजनयिकता के साथ प्रलोभन और दबाव का प्रयोग करते हुए सैकड़ों रजवाडों और रियासतों को दो चरणों में भारतीय संघ में विलय करने में सफल रहे। इनमें त्रावणकोर और कोचीन की रियासतें दक्षिण भारत की प्रमुख रियासतें थीं। जिनका विलय दूसरे चरण में सफलतापूर्वक कर लिया गया। यह कार्य 1949 में सम्पन्न हुआ। इस कार्य में सरदार पटेल के सचिव रहे वी.पी. मेनन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। दोनों रियासतों के महाराजाओं के बीच राजप्रमुख के पद नए संघ की राजधानी तथा अन्य मुद्दों पर उभरे मतभेद को आसानी से सुलझा लिया गया।

मुख्य शब्द *– स्वतन्त्रता, रियासत, त्रावणकोर, कोचीन, महाराजा, मेनन, सरदार वल्लभभाई पटेल, देवस्वोम, केरल, त्रिवेन्द्रम, ब्रिटिश, नारायण पिल्लई, बलवर्मा, एर्नाकुलम, प्रिवी पर्स।*

ट्रावणकोर और कोचीन राज्य का भारत संघ में विलय

15 अगस्त 1947 को भारत को ब्रिटिश सत्ता से आजादी तो मिली परन्तु यह आजादी, देश के विभाजन के रूप में, एक भीषण त्रासदी लेकर आयी थी। विभाजन के बाद भारतीय राजनीतिक नेतृत्व के सामने सबसे महत्वपूर्ण कार्य देशी रियासतों को एक प्रशासन के अन्तर्गत लाना था। ब्रिटिश शासन के

* *इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग, डॉ० राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, अयोध्या*

** *असिस्टेण्ट प्रोफेसर, इतिहास, रमाबाई राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय अकबरपुर, अम्बेडकर नगर*

अन्तर्गत देश का लगभग 40 प्रतिशत भाग, छोटे और बड़े कुल मिलाकर 56 रियासतों से घिरा हुआ था जो ब्रिटिश सर्वोच्चता ;ठतपजपेी च्तंउवनदजबलद्ध को स्वीकार करते थे। इन देशी रियासतों को बाह्य आक्रमणों से सुरक्षा के साथ–साथ राज्य की प्रजा से बचाने की प्रतिभूति कुछ शर्तों के साथ ब्रिटिश सरकार से प्राप्त थी।

ट्रावणकोर और कोचीन के राज्य भारतीय प्रायद्वीप के सूदूर दक्षिणी भाग में स्थित हैं। प्राचीन काल में ट्रावणकोर के भूभाग पर चेर वंश के राजाओं ने शासन किया था। बाद में, चेर राज्य कई भागों में विभक्त हो गया और वहाँ अनेक छोटे–छोटे राज्य स्थापित हो गए। अठारहवीं शताब्दी में राजा मार्तण्ड वर्मा ने इन राज्यों को पुनः संगठित किया तथा सम्पूर्ण ट्रावणकोर में राजनीतिक एकता स्थापित कर राज्य को एक शासनसूत्र में बाँधा।

कोचीन का राज्य, अरब सागर के तट पर, ट्रावणकोर राज्य के उत्तर में स्थित है। पुर्तगालियों द्वारा प्रथम यूरोपीय कम्पनी, कोचीन में स्थापित की गई थी। सन् 1500 ई0 से लेकर सन् 1663 ई0 तक कोचीन के शासकों पर पुर्तगालियों का प्रभाव बना रहा। 1663 ई0 में वे डचों के प्रभाव में आ गए। मैसूर राज्य के शासक हैदर अली और उसके पुत्र टीपू सुल्तान ने कोचीन राज्य को जीतकर उसे अपने आधिपत्य में रखा। 1791 ई0 में दोनों राज्यों के बीच एक समझौता हो गया और कोचीन का राज्य अंग्रेजी संरक्षण में चला गया। 1805 ई0 से कोचीन राज्य पर ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी का प्रभाव पूरी तरह से कायम हो गया।

स्वतन्त्रता के पश्चात् राज्यों के एकीकरण की प्रक्रिया के सम्पादन के क्रम में, सरदार वल्लभभाई पटेल के रियासत मन्त्रालय में सचिव वी.पी. मेनन मार्च, 1949 में ट्रावणकोर गए। वे रियासत के प्रधानमन्त्री टी.के. नारायण पिल्लई तथा बाद में अन्य मन्त्रियों से मिले। यथासम्भव राज्यों का समूहीकरण, रियासत मन्त्रालय की नीति से सम्बन्धित था। मेनन ने दोनों राज्यों–ट्रावणकोर और कोचीन–के एकीकरण को सही और उचित कदम बताया। राज्य के प्रधानमन्त्री ने दक्षिणी भाग में बसे हुए तमिल भाषी लोगों की तरफ इशारा किया और कहा कि एकीकरण में यहाँ से समस्या का सामना कर पड़ सकता है। परन्तु मेनन विचार था कि इस समस्या को आसानी से सुलझाया जा सकता था।

दोनों राज्यों के एकीकरण के मुद्दे पर वार्ता करने के लिए कोचीन के प्रधानमन्त्री अपने मन्त्रिमण्डल के साथ मेनन से मिले। इसके बाद ट्रावणकोर और कोचीन के मन्त्रिमण्डलों की एक संयुक्त बैठक हुई जिसमें सर्वसम्मति से दोनों राज्यों के मन्त्रिमण्डलों ने एकीकरण के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया।

इसी समय मेनन ने कांग्रेस के स्थानीय नेताओं से भी बातचीत की। वे भी दोनों राज्यों के एकीकरण के पक्ष में थे। ट्रावणकोर तमिल कांग्रेस का एक प्रतिनिधिमण्डल भी मेनन से मिला। उसने कहा कि दोनों राज्यों के एकीकरण से तमिल–भाषी लोग अल्पसंख्यक हो जाएंगे और उन पर बहुसंख्यकों का क्रूर अत्याचार हो सकता है। इसलिए तमिल–भाषी क्षेत्र का मद्रास राज्य में विलय का प्रस्ताव रखा गया। मेनन ने इस विषय को गम्भीरता से नहीं लिया और भविष्य के लिए टाल दिया। आर्थिक और अन्य मुद्दों के आधार पर स्थानीय बार एसोसिएशन ने भी दोनों राज्यों के मद्रास प्रान्त के साथ विलय का प्रस्ताव रखा। मेनन ने उन्हें बताया कि यह रियासत मनत्रालय द्वारा कभी भी स्वीकार्य नहीं होगा। फिर भी, वे यह प्रस्ताव सरदार पटेल के पास रखने के लिए सहमत हो गए।

06 मार्च को वी.पी. मेनन और ट्रावणकोर के महाराजा बल वर्मा के बीच आखिरी बैठक हुई जिसमें मेनन ने कहा कि अधिकांश भारतीय रियासतों का नए भारत संघ में विलय हो चुका है। ट्रावणकोर और कोचीन का एकीकरण राष्ट्र निर्माण के लिए आवश्यक है। 10 मार्च को मेनन ने कोचीन की राजधानी एर्नाकुलम में ''ऐक्य केरल समिति'' के सदस्यों से बातचीत की। 10 मार्च को ही मेनन ने दोनों राज्यों के प्रधानमन्त्रियों को पत्र लिखकर अपने राज्य के भविष्य के बारे में निश्चित सुझाव लिखित रूप में देने को कहा। 12 मार्च को दोनों राज्यों की ओर से लिखित सुझाव आ भी गए। दोनों राज्यों ने अपने–अपने विधानमण्डलों से परामर्श तथा कांग्रेस के सदस्यों से सलाह करने के बाद यह सुझाव दिया कि सबसे पहले दोनों राज्यों का एकीकरण कर दिया जाय। इसके बाद मेनन दिल्ली वापस आ गए।

दिल्ली वापस आकर मेनन ने सरदार वल्लभभाई पटेल को सूचित किया कि दोनों राज्यों की प्रजा, दोनों राज्यों के एकीकरण की प्रबल पक्षधर है। ट्रावणकोर के तमिलभाषी लोगों के मामले में उन्होंने बताया कि वे पहले से ही वहाँ अल्पसंख्यक हैं। और यह कि, राज्यों के एकीकरण हो जाने से उनकी वर्तमान स्थिति में कोई विशेष व्यवधान नहीं आने वाला है। भाषा के अतिरिक्त, अन्य सभी मामलों में वे राज्य की शेष जनसंख्या के साथ अच्छी तरह से घुले–मिले हुए हैं। सरदार पटेल ने इस बात को स्वीकार किया।

दोनों राज्यों के एकीकरण की प्रक्रिया के अगले चरण में, 01 अप्रैल 1949 को दोनों राज्यों के मन्त्रियों तथा स्थानीय कांग्रेस संगठन के प्रतिनिधियों का एक प्रतिनिधिमण्डल दिल्ली में सरदार पटेल से भेंट की। कांग्रेस के नेताओं ने एक बार पुनः मलयालम भाषी प्रान्त के गठन की बात तो की, किन्तु इस पर

कोई दबाव नहीं डाला। प्रतिनिधिमण्डल के सदस्यों ने भी सरदार पटेल से, दोनों राज्यों का एकीकरण कर, एक नए संघ के निर्माण हेतु अपनी इच्छा प्रकट की। 02 अप्रैल, 1949 को भारत सरकार ने एक प्रेस विज्ञप्ति जारी कर प्रतिनिधिमण्डल के इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया।

ट्रावणकोर के महाराजा ने दिल्ली आकर सरदार पटेल और वी.पी. मेनन से वार्ताएं की। वार्ता के दौरान महाराजा ने कुछ महत्वपूर्ण सवाल खड़े किए। उनकी इच्छा थी कि उनके राज्य की महत्ता को देखते हुए उन्हें ही दोनों राज्यों के संघ का स्थायी अध्यक्ष बनाया जाय; उनकी उपाधि 'राजप्रमुख' के स्थान पर 'पेरुमल' (प्राचीन केरल संघ के राजाओं की उपाधि) रखी जाय; और अन्त में, स्वामी पद्मनाभ के राज्य का सेवक होने के नाते तथा उनके प्रति विशेष समर्पण होने के कारण उनके लिए सामान्यतः 'राजप्रमुख' के पद की शपथ लेना सम्भव नहीं होगा।

इसी समय दिल्ली में एक अफवाह तेजी से फैल रही थी कि यदि ट्रावणकोर राज्य का एकीकरण किया गया तो महाराजा सिंहासन त्याग देंगे। गवर्नर जनरल चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने मेनन से कहा कि यदि प्रस्तावित संघ, महाराजा के सत्ता से विमुख होने का कोई कारण बन रहा हो तो हमें इस विचार का त्याग कर देना चाहिए। हमारा उद्देश्य राज्यों से सुरक्षित एकीकरण के साथ नई व्यवस्था के स्थायी रहने और किसी भी कड़वाहट से दूर रहने का है। ट्रावणकोर और कोचीन की परिस्थितियों को देखते हुए, महाराजा की स्थिति संरक्षित की जानी चाहिए।

एकीकरण के प्रक्रिया के अगले चरण में, सरदार पटेल ने वार्ता के लिए मेनन को एक बार पुनः त्रिवेन्द्रम भेजा। मेनन 21 मई को त्रिवेन्द्रम पहुँचे और महाराजा द्वारा पूर्व में गिनाई गई बाधाओं पर कई दौर की वार्ताएं की। पहली बाधा थी—महाराजा का राजप्रमुख के रूप में शपथ लेने की असमर्थता। एक तरफ तो महाराजा ने स्वयं को श्री पद्मनाभ स्वामी के राज्य का सेवक बताया था, न कि राज्य का शासक। दूसरी तरफ, भारत सरकार को महाराजा से कुछ इस प्रकार का आश्वासन भी चाहिए था कि वे भारत के नए संविधान तथा नए संघ के प्रति वफादार हैं। इस समस्या के समाधान के लिए मेनन ने महाराजा को एक सुझाव दिया कि वे उन्हें (मेनन को) संबोधित करते हुए एक पत्र पढ़ेंगे जिसके शब्द इस प्रकार होंगे—''ट्रावणकोर और कोचीन राज्य के राजप्रमुख का पदभार ग्रहण करते हुए मैं, भारत सरकार को यह दृढ़ विश्वास दिलाता हूँ कि मैं, भारत के संविधान और ट्रावणकोर तथा कोचीन के संयुक्त राज्य का बचाव, संरक्षण और सुरक्षा अपनी पूर्ण क्षमता के साथ करूँगा तथा मैं भारत की जनता

की सेवा के प्रति समर्पित रहूँगा।'' इस पत्र को नए संघ के उद्घाटन के अवसर पर मुख्य न्यायाधीश द्वारा महाराजा की उपस्थिति में पढ़ा जाना था। दूसरी समस्या थी–महाराजा का 'आजीवन राजप्रमुख' बने रहने का प्रस्ताव। इससे पूर्व ग्वालियर, पटियाला और जयपुर के महाराजाओं को 'आजीवन राजप्रमुख' मान लिया गया था, इसलिए ट्रावणकोर के महाराजा का वही प्रस्ताव अस्वीकार नहीं किया जा सकता था। जनसंख्या और राजस्व – दोनों विषयों में ट्रावणकोर की स्थिति, कोचीन से अधिक महत्वपूर्ण थी। लेकिन महाराजा का यह भी प्रस्ताव था कि एकीकृत ट्रावणकोर और कोचीन राज्य का कोई उपप्रमुख नहीं होगा, और यह कि, उनकी अस्थायी अनुपस्थिति में ट्रावणकोर और कोचीन राज्य संघ के प्रधान न्यायाधीश, राजप्रमुख की भूमिका निभाएंगे। यह प्रस्ताव कोचीन के महाराजा के लिए निश्चित रूप से उचित नहीं था। जैसा कि अन्य संघ राज्यों के विषय में लागू किया गया था, वे उपराजप्रमुख पद के हकदार थे। ऐसी स्थिति में, उनके युग, धार्मिक मान्यताओं और अन्य कारणों से नए संघ की होने वाली राजधानी त्रिवेन्द्रम में, किंचित् समय के लिए भी, ठहरना उनके लिए काफी असुविधाजनक होता। ट्रावणकोर के महाराजा ने यह शर्त रखी थी कि यदि उनकी नई प्रास्थिति से उन्हें किसी भी प्रकार का कष्ट हुआ तो वे अपने पद से त्यागपत्र दे देंगे। मेनन इस प्रस्ताव पर सहमत हो गए थे और ट्रावणकोर के महाराजा को नए संघ राज्य का राजप्रमुख मान लिया गया। और यह भी कि वहाँ कोई उपराजप्रमुख का पद नहीं होगा। जहाँ तक महाराजा द्वारा 'राजप्रमुख' पद के स्थान पर 'पेरुमल' की उपाधि धारण करने का प्रस्ताव था, उसे पूरी तरह से नकार दिया गया क्योंकि इस तरह का कोई भी नया कार्य भविष्य में अनेक समस्याएं पैदा कर सकता है। सरकार की तरफ से यह स्पष्ट किया गया कि नए संविधान में प्रान्तों का मुखिया 'गवर्नर' कहा जाएगा तथा राज्य संघ का मुखिया 'राजप्रमुख'।

मेनन ने दोनों राज्यों के महाराजाओं के साथ अलग–अलग और एक साथ कई वार्ताएं कीं। अन्त में, कोचीन के महाराजा ने ट्रावणकोर के महाराजा को नए संघ राज्य का 'आजीवन राजप्रमुख' बनना स्वीकार कर लिया। कोचीन के महाराजा ने कोई विशेष माँग भी नहीं रखी, सिवाय इसके कि उन्हें कोचीन राज्य से प्रकाशित होने वाली वार्षिक पत्रिका 'पंजंगम' की भविष्य में आपूर्ति की जाती रहेगी।

ट्रावणकोर–कोचीन राज्य में एक अन्य समस्या देवस्वोम ;क्मअेंवउद्ध को लेकर थी। पद्मनाभ मन्दिर के पास बहुत सारी सम्पत्ति थी। यह सम्पत्ति जमीन के रूप में भी थी। इसका प्रबन्धन आठ वंशानुगत ट्रस्टियों तथा महाराजा

के द्वारा किया जाता था। इस ट्रस्ट को 'योगम' या 'सिनोड' कहा जाता था। 18वीं शताब्दी में योगम संस्था, मन्दिर प्रबन्धन से बाहर हो गई और मन्दिर का सम्पूर्ण प्रबन्धन महाराजा के हाथों में आ गया। इसके बाद मन्दिर और राज्य की सम्पत्तियाँ आपस में मिल गईं। फिर भी, राज्य ने मन्दिर के रखरखाव और धार्मिक उत्सवों के आयोजन में योगदान करने का कार्य जारी रखा।

ट्रावणकोर के महाराजा के 'प्रिवी पर्स' का निर्धारणः—ट्रावणकोर के महाराजा का कुल वार्षिक आहरण 27 लाख रुपए का था। सरदार पटेल के सचिव वी.पी. मेनन ने महाराजा को बताया कि वास्तव में उनका प्रिवी पर्स 15 लाख रुपए वार्षिक का ही था। शेष राशि वे विभिन्न प्रकार की सुविधाओं के रूप में उपभोग कर रहे थे। एक लम्बी वार्ता के बाद महाराजा का प्रिवी पर्स 18 लाख रुपए वार्षिक निश्चित किया गया। मेनन ने महाराजा को सुझाव दिया कि नई नियमावली में उनके उत्तराधिकारियों के लिए 10 लाख रुपए वार्षिक का ही प्रिवी पर्स दिया जाएगा क्योंकि सरकार का निर्णय है कि किसी भी स्थिति में इससे अधिक की राशि अन्य किसी मामले में स्वीकृत नहीं की जा सकती है। महाराजा के आग्रह पर यह निश्चित किया गया कि उनके उत्तराधिकारियों के लिए प्रिवी पर्स की धनराशि भारत सरकार द्वारा बाद में निर्धारित कर दी जायेगी। ट्रावणकोर के महाराजा के भत्ते, मन्त्रियों की सहमति के बाद, तीन लाख रुपए वार्षिक तथा कार्यालय व्यय के लिए 66 हजार रुपए वार्षिक अलग से निश्चित कर दिए गए।

वार्ता के दौरान ट्रावणकोर के प्रधानमन्त्री ने बताया कि महाराजा के द्वारा लगभग 60 हजार एकड़ की कान्दूकृषि की जमीन, जिससे लगभग 5 लाख रुपए का वार्षिक भूराजस्व प्राप्त होता है, को पुनः अधिकृत कर लिए जाने से जनता में गहरा असन्तोष है। इस बात पर सहमति बनी कि महाराजा और उनका मन्त्रिमण्डल स्वेच्छया इस भूभाग को नए संयुक्त राज्य को अभ्यर्पित कर देगा। महाराजा ने इससे सम्बन्धित घोषणापत्र पर, प्रतिज्ञा—पत्र पर हस्ताक्षर करने के साथ ही, अपने हस्ताक्षर भी किए।

दोनों राज्यों के प्रधानमन्त्रियों से तीन अन्य प्रमुख बिन्दुओं पर विचार विमर्श किया गया। पहला, राजप्रमुख, भारत सरकार अधिनियम 1935 के प्रावधानों के अनुसार केन्द्रीय और समवर्ती सूची के विषयों पर कानून बनाने का अधिकार, केन्द्रीय विधान सभा को देने से सम्बन्धित अधिकार को विलयपत्र में शामिल करेंगे। करों से सम्बन्धित मामले पर राजप्रमुख एक नए प्रतिज्ञा—पत्र पर हस्ताक्षर करेंगे। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि ट्रावणकोर में खाद्यान्न की समस्या है, केन्द्रीय सरकार राज्य को सहायता प्रदान करती रहेगी। दूसरा,

नवगठित राज्यों के संघों के राजनेताओं में अनुभव की कमी, प्रशिक्षित कर्मचारियों अभाव और एकीकरण के परिणामस्वरूप उत्पन्न अव्यवस्था के उदाहरणों को देखते हुए राजप्रमुख को, आपातकाल में न्यायपालिका छोड़कर, प्रशासन के वे सभी अधिकार दे दिए जाएंगे जो भारत सरकार के नियन्त्रण में हैं। इस आशय का प्रावधान भी प्रतिज्ञा–पत्र में शामिल किया गया। तीसरा, जब तक भारत के संविधान का निर्माण पूरा नहीं कर लिया जाता और संविधान सभा द्वारा वह अंगीकार नहीं कर लिया जाता, तब तक राजप्रमुख और मन्त्रिमण्डल दोनों, भारत सरकार द्वारा नियन्त्रित, अधीक्षक की भूमिका में रहेंगे। पहले तो प्रधानमन्त्रियों ने इन प्रावधानों को स्वीकार करने में अनिच्छा जताई परन्तु बाद में वे इसे स्वीकार करने को तैयार हो गए। मेनन ने उन्हें बताया कि ये मामले केवल ट्रावणकोर और कोचीन के राज्यों से ही सम्बन्धित नहीं थे बल्कि सम्पूर्ण राष्ट्र के अन्य संघों पर भी लागू होंगे।

दोनों राज्यों के प्रधानमन्त्रियों से आगे की वार्ताओं के बाद प्रतिज्ञा पत्र तैयार कर उसे अन्तिम रूप किया गया। इस प्रतिज्ञा–पत्र के द्वारा ट्रावणकोर और कोचीन के संघ ने, भारत सरकार अधिनियम–1935 में उल्लिखित संघीय सूची और समवर्ती सूची के विषयों पर, भारत सरकार का अधिकार स्वीकार कर लिया। राजप्रमुख को करों के निर्धारण के विषय में अधिकार देने की सहमति भी ले ली गई। राजप्रमुख और राज्य की मन्त्रिमण्डल, भारत सरकार के नियन्त्रण में रहेगी। राज्य की सरकार भंग होने की स्थिति में प्रशासन की समस्त शक्तियाँ भारत सरकार को प्राप्त हो जाएंगी।

कांग्रेस के स्थानीय नेताओं ने नए संघ का नाम 'केरल संघ' रखने का सुझाव दिया था। इसे इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया गया था कि इससे भाषायी समस्या उठ खड़ी होगी और नए संघ के तमिलभाषी लोगों तथा ट्रावणकोर के महाराजा की इस पर आपत्ति हो सकती है। नए संघ का नाम 'ट्रावणकोर और कोचीन संयुक्त राज्य' रखा गया।

27 मई, 1949 को ट्रावणकोर के महाराजा ने अन्तिम रूप से तैयार किए गए प्रतिज्ञा–पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए। मन्त्रिमण्डल की ओर से राज्य के प्रधानमन्त्री ने महाराजा को हरसम्भव सहयोग देने का आश्वासन दिया। साथ ही, उन्होंने कहा कि महाराजा और उनके परिवार की गरिमा बनाए रखने के लिए वे सब कुछ करने को तैयार हैं। इसके प्रतिउत्तर में महाराजा ने अपने मन्त्रियों को अपना हार्दिक सहयोग प्रदान करने को कहा।

कोचीन के महाराजा के प्रिवी पर्स का निर्धारण और शाही राजपरिवारः–1949 में कोचीन के महाराजा रु0 174000.00 (रुपए एक लाख

चौहत्तर हजार मात्र) के अलावा अन्य सुविधाएं जैसे—राजमहल की मरम्मत, कारों की आपूर्ति तथा रखरखाव आदि प्राप्त कर रहे थे। सभी पक्षों और तथ्यों को ध्यान में रखते हुए महाराजा का प्रिवी पर्स रु0 235000.00 (रुपए दो लाख पैंतीस हजार मात्र) वार्षिक तय कर दिया गया जो कोचीन राज्य के समस्त राजस्व का 0.56 प्रतिशत था।

कोचीन के शाही राजपरिवार में उस समय 223 राजकुमार (Princes) और 231 राजकुमारियाँ (Princesses) थीं जिन्हें राज्य की तरफ से भत्ता मिलता था। उनके विवाह, अन्य उत्सव या समारोह तथा शिक्षा के लिए अलग से धन दिया जाता था। सभी राजकुमारियों के लिए आवास उपलब्ध कराया गया था और अधिकांश के पतिगण उनकी सहायता करने के बजाय राज्य पर ही आश्रित रहते थे। भारत सरकार ने इनकी स्थिति को देखते हुए राजपरिवार के साथ तत्समय रह रहे राजकुमारों और राजकुमारियों के इन सभी के भत्तों को जारी रखने का निर्णय लिया। साथ ही, यह स्पष्ट कर दिया गया कि भविष्य में राजपरिवार में किसी भी नए सदस्य के जुड़ने पर उनके प्रति भारत सरकार की कोई जिम्मेदारी नहीं होगी। राजकुमारों और राजकुमारियों से वार्ता के दौरान एक दिलचस्प तथ्य यह भी सामने आया था कि राज्य में एक पक्षीशाल ;।अपंतलद्ध है जिसमें दुर्लभ प्रजाति के अनेक पक्षी पाले गए हैं। नई लोकप्रिय सरकार बनने के बाद अहिंसा के नियमों के पालन किए जाने की आड़ में अगर इन पक्षियों को मुक्त कर दिया जाएगा तो ये दूसरे शिकारी पक्षियों और अन्य जीवों के शिकार बन जाएंगे। इस प्रकार ये बेचारे पक्षी बेमौत मारे जाएंगे।

कोचीन के महाराजा ने 29 मई, 1949 को प्रतिज्ञा—पत्र पर हस्ताक्षर दिए। हस्ताक्षर करने से पूर्व उन्होंने ईश्वर को याद किया और एक प्रार्थना भी की थी। मेनन ने महाराजा को आश्वस्त किया कि भारत सरकार उनकी गरिमा और विशेषाधिकारों को पूरी तरह से बनाए रखेगी। इसके बाद महाराजा ने प्रधानमन्त्री और मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को बुलाकर कहा कि भविष्य में राजपरिवार और कोचीन की जनता के हितों की रक्षा और देखभाल करना आपका दायित्व होगा। प्रधानमन्त्री ने महाराजा को आश्वस्त किया कि वे अपनी पूरी क्षमता के साथ उनकी इच्छाओं का सम्मान करेंगे।

राज्य की राजधानी — ट्रावणकोर और कोचीन के नए संयुक्त राज्य की राजधानी के प्रश्न पर विचार करने के लिए अबिलम्ब ध्यानाकर्षण किया गया। एक विकल्प कोचीन की राजधानी एर्नाकुलम थी। परन्तु वहाँ सुविधाओं का अभाव था। अतः यह नगर राजधानी के रूप में उचित नहीं हो सकता था। दूसरा विकल्प ट्रावणकोर की राजधानी त्रिवेन्द्रम का था जहाँ सभी सुविधाएं

उपलब्ध थीं। परन्तु, यह नगर राज्य के सुदूर दक्षिणी भाग में स्थित था। इससे कोचीन के निवासियों को अनेक असुविधाओं का सामना करना पड़ता। तीसरा विकल्प नए संघ राज्य के मध्य में किसी नए स्थान को राजधानी के रूप में विकसित करने का हो सकता था। परन्तु, राज्य के राजस्व की कमी को देखते हुए यह सम्भव नहीं था। अन्ततः एक बीच का मार्ग निकाला गया। ट्रावणकोर और कोचीन के संयुक्त राज्य की राजधानी 'त्रिवेन्द्रम' में होगी तथा राज्य का उच्च न्यायालय तथा लॉ कॉलेज, एर्नाकुलम में स्थित होंगे। यह निर्णय दोनों राज्यों के मन्त्रिमण्डलों की सहमति से लिया गया था।

ट्रावणकोर–कोचीन संघ के उद्घाटन के लिए न तो पं. जवाहरलाल नेहरू और न ही सरदार वल्लभभाई पटेल समय निकाल सके। इसलिए सरदार पटेल ने रियासत मन्त्रालय के सचिव, वी.पी. मेनन को यह कार्य सौंपा। संघ का उद्घाटन 01 जुलाई, 1949 को किया गया। संघ का क्षेत्रफल 9155 वर्ग मील, जनसंख्या 75 लाख तथा राजस्व लगभग 13.5 करोड़ रुपये था। मेनन ने अपने उद्घाटन भाषण में कहा कि नए संघ राज्य के निर्माण से रियासत मन्त्रालय के कार्य का प्रथम चरण पूरा हुआ। अब दूसरे चरण का आरम्भ होगा। हमें उन सभी कार्यों को समेटना है जो पहले किए जा चुके हैं। अब दोनों राज्यों का एकीकरण हो गया है। जनता को अपने पुराने आग्रहों, दुराग्रहों और पूर्वाग्रहों को भूल जाना चाहिए। रियासत मन्त्रालय द्वारा निर्धारित किए गए राज्यों के एकीकरण की तालिका में यह अन्तिम संघ था जिसका निर्माण सफलतापूर्वक कर दिया गया था।

संदर्भ

1. *चन्द्र, बिपिन एवं अन्य : आजादी के बाद का भारत, हिन्दी माध्यम कार्यान्वयन निदेशालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली–110007, द्वितीय संस्करण, फरवरी, 2002 पृष्ठ सं. 94।*
2. *Menon, V.P. : Integration of the Indian States, Orient BlackSwan Private Limited, Himayatnagar, Hyderabad – 500029, Telangana, India, First Published 2014, Reprinted 2023, Page No. 250.*
3. *Menon, V.P. : Ibid, Page No. 253.*
4. *Menon, V.P. : Ibid, Page No. 254.*
5. *ट्रावणकोर–कोचीन राज्य में मन्दिरों से सम्बद्ध सम्पति को 'देवस्वोम' (Devaswom) कहा जाता था।*
6. *Menon, V.P. : Ibid, Page No. 260.*
7. *Menon, V.P. : Ibid, Page No. 262.*

Paper Received : 18 March, 2025 ***Paper Accepted : 25 Aug., 2025***

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 142-152

जीवन की चुनौतियों के बीच डॉ० रघुवंश का समीक्षा–कर्म

*डॉ० अभिषेक कुमार मिश्र **

सारांश

डॉ० रघुवंश हिन्दी आलोचना के उन आलोचकों में हैं,जिन्होंने अपने आलोचनात्मक चिंतन से हिन्दी की नई आलोचना को गति दिया। यद्यपि विधाता ने उन्हें जन्म से ही दोनों हाथों से अपंग बनाया था किन्तु वे विराट इच्छा शक्ति के धनी साहित्यकार थे। उन्होंने पैरों से लेखन का कार्य आरंभ किया तथा विचार और लेखन की दुनिया में महारत हासिल किया। यह वास्तव में विचारणीय है कि एक लेखक, जो जन्मजात अपंग है, उसका लेखन इतना विराट कैसे हो सकता है ? उन्होंने अपनी लेखनी से साहित्य की विभिन्न विधाओं को सम्पन्न किया। उनका आलोचनात्मक प्रशस्त कर्म अत्यंत श्लाघ्य है। उनका साहित्यिक चिंतन आलोचना की दुनिया में गंभीर हस्तक्षेप करता है। उन्होंने भारतीय और पाश्चात्य दोनों ही साहित्यों का अध्ययन–मनन किया तथा उस पर अपना मौलिक और नूतन विचार भी प्रस्तुत किया। डॉ० रघुवंश की विचारशीलता, विश्लेषणप्रवणता तथा सूक्ष्म भेदक आलोचना–दृष्टि एक नूतन सिरे से विचार की मांग करता है। यह शोध–पत्र उसी दिशा में एक लघु प्रयास है।

मूल शब्द *– आलोचना, आलोचक, रचना, रचनाकार, लेखन, विचारशीलता, विश्लेषणप्रवणता, सूक्ष्म भेदक आलोचना–दृष्टि, सर्जनात्मकता, मूल्य–प्रक्रिया, संस्कृति, साहित्य, सामयिक, सौन्दर्य–बोध, व्यापक, गहन, आंतरिक, विवेक आदि।*

प्रस्तावना

डॉ० रघुवंश दुर्द्धर्ष जिजीविषा के साहित्यकार थे। उनके दोनों हाथ जन्म से अपंग थे। सामान्य आदमी अपंगता को जीवन का अभिशाप मानकर हार मान लेता है किन्तु डॉ० रघुवंश सहाय वर्मा उन लोगों में नहीं थे। उन्होंने अपंगता को जीवन की कमजोरी नहीं बनने दिया। वे अपने पैरों से लिखने लगे। जीवन की प्रतिकूलताओं में भी वे आगे को बढ़ते रहे। पैर से लेखन कार्य करने में ही उन्होंने महारत हासिल कर लिया। जितनी तेजी से वे अपने पैरों से लिख लेते थे उतनीं तेजी से लोग हाथ से भी नहीं लिख पाते थे। उनका

* *सहायक आचार्य, हिन्दी, राजकीय डिग्री कॉलेज, कुशीनगर, दीन दयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर*

हाथ अपंग था, किन्तु मन में महान संकल्प था,जिससे उन्होंने सिद्ध कर दिया कि कोई व्यक्ति यदि मन में कुछ करना ठान तो कुछ भी कर सकता है। वे गंभीर अध्यवसाय तथा रचनाशीलता के उदाहरण हैं। जीवन की शुरुआत से ही दोनों हाथों से अपंग होने के बावजूद भी उन्होंने अपने रचना कर्म को कभी अवरुद्ध नहीं होने दिया। उनकी साहित्य साधना उत्कट जिजीविषा का उत्कृष्ट प्रमाण है। उनका समूचा जीवन पठन–पाठन और लेखन के लिए समर्पित रहा है। उनकी आलोचना–दृष्टि में अध्ययन की विशदता तथा विश्लेषणप्रवणता को महसूस किया जा सकता है। उनके भीतर सूक्ष्म–विश्लेषण क्षमता के साथ ही गंभीर भेदक–दृष्टि है,जो रचना के तह तक प्रवेश करती है। उनके संदर्भ में प्रतिष्ठित आलोचक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का यह कथन उद्धरणीय है–" डॉ० रघुवंश हिन्दी के विचारशील तरुण लेखक हैं। यद्यपि विधाता ने इनके हाथ की बनावट पूरी करने में बहुत कृपणता का परिचय दिया है– इनके हाथ इतने दुर्बल और निःशक्त हैं कि वे उनसे लिख भी नहीं सकते, पैरों की सहायता से हाथों को हिलाकर लेखनी चलातें हैं –परंतु फिर भी तीक्ष्ण बुद्धि और उदार मन देकर उन्होंने अपनी कृपणता का कलंक मिटा दिया है। इन्होंने संस्कृत, हिन्दी और अंग्रेजी साहित्य का खूब मनन किया है। किसी भी साहित्यिक प्रभाव का वे बड़ी बारीकी से विश्लेषण करते हैं, उसके तह में जाते हैं और उसका वास्तविक रूप समझने का प्रयत्न करते हैं।.... किसी वस्तु के यथार्थ तक पहुँचने के लिए वे उसका सूक्ष्म विश्लेषण करते है। वस्तुतः वह भेदक दृष्टि वाले आलोचक हैं। उनका अध्ययन विशाल है और दृष्टि विश्लेषणप्रवण।.... श्री रघुवंश जी अथक परिश्रम करने वाले लोगों में हैं। वे लिखने–पढ़ने में लगे रहते हैं।"[1] डॉ० रघुवंश समाजवादी विचारधारा के पोषक साहित्यकार थे। उन्होंने अपनी लेखनी से साहित्य की विविध विधाओं में श्रेष्ठ कृतियों की सर्जना की है। कहानी, उपन्यास, जीवनी, यात्रा–संस्मरण तथा आलोचना सभी क्षेत्रों में उनकी रचनात्मक श्रेष्ठता को देखा जा सकता है।

डॉ० रघुवंश सहाय वर्मा एक स्वतंत्र स्वच्छन्दतावादी आलोचक थे। संस्कृति और मानव–मूल्यों को आधार बनाकर आलोचना कर्म करने वाले डॉ रघुवंश हिन्दी में 'नई आलोचना' के उन्नायकों में एक रहे हैं। वे साहित्य में सर्जनात्मकता तथा मूल्य–प्रक्रिया को विशेष महत्त्व देते हैं। उनका मानना है कि – "साहित्य की सारी अभिव्यक्ति सर्जनात्मक होती है,अतः उसका अनुभव संस्कृति की.... मूल्य–प्रक्रिया से सम्बद्ध है।"[2] संस्कृति की मूल्य प्रक्रिया पर वे

बहुत ही विस्तार से विचार भी करते हैं तथा इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि– ”संस्कृति की सारी चर्चा में यह व्यंजित हुआ है कि मनुष्य सर्जनात्मक मूलयोपलब्धि के क्षेत्र में उच्चतर लक्ष्य की ओर उन्मुख रहा है। और इस यात्रा में वह जितना आगे बढ़ा है उसका चरम लक्ष्य अधिक व्यापक, गहन, आंतरिक, सूक्ष्म होता गया है।”[3] डॉ० रघुवंश की इस टिप्पणी से स्पष्ट होता है कि वे सर्जनशीलता तथा संस्कृति की मूल्य–प्रक्रिया के द्वारा साहित्य में उच्च आध्यात्मिक मूल्यों की प्रतिष्ठा के पक्षधर आलोचक हैं। एक आलोचक के रूप में डॉ० रघुवंश के समीक्षात्मक निबंधों का प्रतिनिधि ग्रंथ 'साहित्य का नया परिप्रेक्ष्य' है। उनकी यह कृति 1963 में प्रकाशित हुई। डॉ० रघुवंश सामयिक से ज्यादा चिरंतन अर्थात शाश्वत में विश्वास करते थे। इस चिरंतन को ही वे साहित्य के सौन्दर्य–बोध के रूप में रेखांकित करते हैं। उनका विचार है कि– ”पर साहित्य,विशेषतया उच्च साहित्य, जीवन को जिस समग्रता में ग्रहण करता है, अथवा पूर्णता में अभिव्यक्त करता है उसकी अपने–आप में देश–काल से निरपेक्ष स्थिति हो जाती है। युगीन जीवन की सीमाएं उसमें प्रत्यक्ष न हों ऐसी बात नहीं,पर वह जीवन के संतुलन का जो आधार ग्रहण करता है वह युग–युग के मानव में एक प्रकार से समान होता है और इसी संतुलन की पूर्णता को व्यापक अर्थों में सौन्दर्य–बोध भी कह सकते हैं, और यही नया सौन्दर्य–बोध समीक्षा का स्थायी किन्तु निरंतर विकासशील मानदंड बन सकता है,क्योंकि इसी में प्रयोजन और प्रेषणीयता का सूक्ष्म समन्वय सम्पन्न हो सकता है।”[4] डॉ० रघुवंश ने 'जनवादी साहित्य' से गंभीर असहमति प्रकट की है। वे जनवादी साहित्य को वर्ग–संघर्ष पर आधारित साहित्य बताते हैं और कहते हैं कि हिन्दी की पूर्व परंपरा जनवादी साहित्य नहीं है। इसी आधार पर उन्होंने मार्क्सवादी सौन्दर्य दृष्टि के संबंध में आपत्ति प्रकट की है। उनका विचार है कि – ”कठिनाई यह नहीं है कि मार्क्सवादी दृष्टि ने साहित्य की यथार्थवादी सामाजिक व्याख्या की है वरन यह कि वह अपनी पद्धति में ऐसा मान स्थापित करता है जिसके अनुसार 'साहित्यिक का श्रमिक जनता के जीवन के अनुसार सज्जित होना' अनिवार्य शर्त हो जाती है। फलतः साहित्य का समाजवादी निर्माण और सामाजिक दीक्षा का सेवक बनना भी निश्चित है।”[5] डॉ० रघुवंश की दृष्टि में जब कोई रचनाकार किसी विषय पर कोई रचना कर्म करता है तब उस रचना कर्म से पूर्व वह उस विषय की जो तैयारी करता है वही 'सामाजिक दीक्षा का सेवक' में परिवर्तित होना कहलाता है। डॉ० रघुवंश ने कभी किसी विचारधारा

विशेष के साथ जुड़कर आलोचना कर्म करने की बात नहीं स्वीकार की। वे विचारधारा विशेष से सम्बद्ध रहकर साहित्य मूल्यांकन को 'उपनिवेशवादी मानसिकता' का परिचायक मानते हैं। यही कारण है कि उन्होंने पूँजीवादी और समाजवादी दोनों ही व्यवस्थाओं के प्रति असंतोष प्रकट किया है। उन्होंने इन दोनों ही विचारधाराओं के राष्ट्रों को 'साम्राज्यवादी' तथा 'अराष्ट्रवादी' कहा है। उनका विचार है कि– ''यूरोप के पूँजीवादी प्रजातांत्रिक राष्ट्र तथा साम्यवादी राष्ट्र दोनों की सैद्धान्तिक प्रतिद्वन्द्विताओं के मूल में राष्ट्रीय शक्ति और प्रभाव की भावना अधिक प्रेरक रही है और दोनों ने भिन्न ऐतिहासिक क्रमों तथा भौगालिक क्षेत्रों में अपनी साम्राज्यवादी राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक प्रभावों के रूप में भी नीतियों से इस उद्देश्य की सिद्धि की है।''[6] इन दोनों ही व्यवस्थाओं के अस्वीकार के कारण उन्होंने 'प्रजातांत्रिक समाजवाद' की कामना की है। 'प्रजातांत्रिक समाजवाद' अंतर्राष्ट्रीय समाजवादियों के द्वारा स्वीकृत नैतिक आदर्श है। इसे मार्क्स और लेनिन के विचारों के विरूद्ध नैतिक आदर्श के रूप में अपनाया गया। इसमें मार्क्स की मूल स्थापनाओं, वर्ग–संघर्ष, सामाजिक क्रांति तथा सर्वहारा के अधिनायकवाद को अस्वीकार किया गया है और गाँधीवादी मूल्यों में एक प्रकार से आस्था प्रकट की गयी है। स्वयं 'डॉ०. रघुवंश' का विचार है कि– ''मूलतः मेरे चिंतन का आधार गाँधी–विचार रहा है, अतः मेरी सत्य, न्याय और अहिंसा पर पूरी आस्था रही है।''[7] यह समन्वयवादी दृष्टि है, जिसमें दो विरोधी दृष्टिकोणों का समन्वय है।

डॉ० रघुवंश ने व्यक्ति की वैयक्तिकता को उतनी ही स्वतंत्रता दी है, जिससे कि सामाजिक हित को कोई खतरा न हो। इस कारण उन्होंने व्यक्ति के व्यक्तिगत दायित्व का भी सवाल उठाया है। वे दायित्व और स्वातंत्र्य को एक ही प्रक्रिया की दो स्थितियाँ मानते हैं, जो परस्पर अविच्छिन्न हैं। स्वयं उन्हीं के शब्दों में– ''इस प्रकार दायित्व और स्वातंत्र्य एक ही प्रक्रिया की (या मूल्यों की) दो स्थितियाँ मात्र हैं और उनके साथ वैयक्तिक लगाना उतना ही निरर्थक है,जितना सामाजिक। वे एक–दूसरे से अविच्छिन्न मूल्य हैं।''[8] इसी नूतन प्रतिमान पर वे आधुनिकता को कसते हैं। उन्होंने देश में बौद्धिकों के दो वर्ग माने हैं। प्रथम वर्ग जो पश्चिमी आदर्श को ही अपनाकर आधुनिक बनता रहा है। इस वर्ग के प्रतिनिधि पं० नेहरू हैं। दूसरा वर्ग भारतीयता में ही आधुनिकता को देखता है। इस वर्ग के प्रतिनिधि महात्मा गाँधी हैं। डॉ० रघुवंश ने महात्मा गाँधी के आधुनिकता के आदर्श को स्वीकार कर आगे बढ़ने की बात

की है। उनका विचार है कि ''गाँधी का समस्त मानवतावाद, विश्वबंधुत्व, सत्याग्रह, अहिंसावाद और सर्वोदय न केवल देश की परम्पराओं से गृहीत और विकसित हुआ है, वरन् इनकी सारी परिकल्पना में देश के यथार्थ की गहरी पकड़ रही है। इस प्रकर गाँधी के व्यक्तित्व और चिंतन में वे सारी संभावनाएँ निहित रही हैं, जिनके आधार पर भारत की बौद्धिक परिस्थिति आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को गतिशील करने में सक्षम हो सकती थी।''[9] आधुनिकता की व्याख्या डॉ० रघुवंश ने अपने ढंग से की है। उनकी दृष्टि में कुछ विदेशी वस्तुओं, पद्धतियों और मूल्यों को उधार लेकर हम कभी आधुनिक नहीं बन सकते। जब तक हमारे भीतर मौलिकता, गतिशीलता तथा सर्जनशीलता नहीं होगी तब तक केवल बाह्य को अपनाकर हम आधुनिक नहीं हो सकते। इस संदर्भ में उनका विचार है– "हमारे लिए आधुनिकता का मतलब यह नहीं है कि हम कुछ वस्तुएँ चाहते हैं, कुछ पद्धतियाँ चाहते हैं या किन्हीं मूल्यों को उधार लेने के आकांक्षी हैं। हमारे लिए आधुनिक होने का मतलब है कि हम गतिशील, मौलिक और सर्जनशील हों।''[10] अतः स्पष्ट है कि आधुनिकता किसी मूल्य या विचारधारा में बंधना नहीं है, वरन् निरन्तर गतिशील रहकर मौलिक बने रहना है। इसी में सृजनशीलता है। किसी विचारधारा या मूल्य के प्रति सम्बद्धता आधुनिकता नहीं है। वस्तुतः आधुनिकता की प्रतिबद्धता किसी मूल्य दृष्टि की प्रतिबद्धता न होकर निरन्तर सृजन कर्म में प्रवृत्त रहने और मूल्यों की खोज में लगे रहने की है।

डॉ० रघुवंश ने 'आधुनिकता' के दो लक्षण बताये हैं– प्रथम–बौद्धिकता और दूसरा निज व्यक्तित्व की खोज। उनकी दृष्टि में आज मनुष्य भावों की अपेक्षा बुद्धि से ज्यादा संचालित हो रहा है। यथार्थ को भी बौद्धिक दृष्टि से ही पहचानने की कोशिश हो रही है। इसलिए हमारा अनुभव और अधिक जटिल होता जा रहा है। एक तरह से हम अनुभव के ऐसे क्षेत्र में प्रवेश करते जा रहे है, जहाँ एकमात्र बौद्धिक चेष्टा से ही यथार्थ परिस्थिति का सही बोध ग्रहण किया जा सकता है। हम 'यथार्थ को एक साथ कई पक्षों और आयामों से जोड़कर देखने में समर्थ हो सकते हैं तथा अनुभव को विस्तार के साथ अधिक जटिल रूप में ग्रहण कर सकते हैं। इसी कारण उन्होंने मार्क्सवाद के वैज्ञानिक मूल्यों का भी विरोध किया है, क्योंकि वे स्थिर और जड़ हैं, उनमें गतिशीलता या सर्जना नहीं। डॉ० रघुवंश का विचार है कि निज व्यक्तित्व की खोज व्यक्ति के व्यक्तित्व को व्यापक रचनात्मक स्तर पर जोड़ेगी तथा व्यक्ति और समाज

के बीच एक नूतन रिश्ता विकसित होगा। यह रिश्ता समाज से आबद्ध नहीं, वरन् संपृक्त होगा। चूँकि डॉ० रघुवंश की दृष्टि में सामाजिक हित ही सर्वोपरि है। इसलिए वे व्यक्ति की स्वतन्त्रता को इस रूप में प्रस्तुत करते हैं कि व्यक्ति स्वतंत्र होने के साथ सामाजिक दायित्व से भी युक्त हो। इसी को वे निज व्यक्तित्व कहते हैं, जो समाज से आबद्ध न होकर संपृक्त और सशक्त है। डॉ० रघुवंश एक भाववादी साहित्य–चिंतक हैं। उन्होंने किसी भी रचनात्मक तथा वैचारिक समस्या का एक भाववादी हल प्रस्तुत किया है। आदर्श साहित्यकार वे उसे ही मानते हैं, जो बुद्धि से नहीं, वरन् अंतः विवेक से चालित होता है। इसके लिए उन्होंने आदिकवि वाल्मीकि, गोस्वामी तुलसीदास, होमर, मिल्टन आदि कवियों के उदाहरण देकर यह बताया है कि वे इसलिए आदर्श हैं कि उन्होंने समाज को आंतरिक विवेक से देखा है और चित्रित किया है न कि बुद्धि से।

डॉ० रघुवंश ने साहित्य के मूल्यांकन में रचना की 'सृजन–प्रक्रिया' के साथ उसके 'सामाजिक दायित्व' को भी स्वीकार किया है। इसके लिए उन्होंने 'संरचनावादी आलोचना' का समर्थन किया है। उनका विचार है कि– ''इधर आधुनिक आलोचना के क्षेत्र में यूरोप के समान हिन्दी में भी साहित्येतर मूल्यों के आधार पर साहित्य पर विचार करने की पद्धतियों के प्रति विरोध देखा गया है.....। पहले इन आलोचकों की दृष्टि कृति की सर्जन–प्रक्रिया पर केन्द्रित थी, पर क्रमशः अब उनके सामने कृति का रचनात्मक संघटन प्रधान होता जा रहा है।......... उनके सामने कृति है और उसके रचनात्मक संघटन के विश्लेषण द्वारा वे उसमें निहित सर्जन या सौन्दर्य या आनन्दतत्त्व की व्याख्या करना चाहते हैं।''[11] अतः स्पष्ट है कि डॉ० रघुवंश ने 'संरचनावादी आलोचना' को महत्त्व देकर समाज या साहित्य की सृजन सामग्री को भी महत्त्व दिया है, क्योंकि 'संरचनावादी समीक्षा' में समाज या साहित्य की सृजन–सामग्री को गौण रूप में ही महत्त्व प्राप्त है। इस विषय में उनका विचार है कि– ''वातावरण, परिस्थिति, युग–जीवन, सांस्कृतिक मूल्य, रचना–प्रक्रिया, कवि की मनःस्थिति आदि वहीं तक महत्त्व रखते हैं, जहाँ तक वे कृति के संरचनात्मक संघटन के अंग या तत्त्व बन सके हैं।''[12] यहाँ भी रघुवंश ने कृति की संरचना पर ही विशेष बल दिया है, जिसके भीतर समस्त रचना–प्रक्रिया आ जाती है। डॉ० रघुवंश ने 'सांस्कृतिक नव्यालोचन' की भी बात की है। इस दृष्टि के उद्भव और विकास के कारणों के विषय में उनका विचार है कि रचना को व्यापक

मानवीय मूल्यों से जोड़ने की प्रवृत्ति ही इस 'नव्यालोचन' के विकास का कारण है। 'नव्यालोचना' में न तो कृति की संरचना पर विशेष बल दिया जाता है और न ही कृति के आंतरिक मूल्यों पर। वे कहते हैं कि– ''सांस्कृतिक नव्यालोचना' में न कृति की संरचना पर इतना बल है कि अनुभव वैशिष्ट्य के सारे मूल्य संदर्भों को छोड़कर केवल शिल्प–विधान के विभिन्न तत्त्वों के विश्लेषण–विवेचन को ही सब कुछ मान लिया जाये ओर न ही किन्हीं मूल्यों के प्रति किसी प्रकार की प्रतिबद्धता है, जिनके माध्यम से रचनात्मक अनुभव के समस्त वैशिष्ट्य की व्याख्या की जा सके।''[13] अतः स्पष्ट है कि डॉ० रघुवंश ने कृति की अंतः तथा बाह्य संरचना को समान महत्त्व देकर अपनी संतुलित दृष्टि का ही परिचय दिया है। डॉ० रघुवंश मुख्यतः छायावादोत्तर हिन्दी काव्य के आलोचक हैं। उन्होंने प्रगतिवादी स्थापनाओं के विरूद्ध प्रयोगवादी तथा नयी कविता की स्थापना का समर्थन किया है। उनका विचार है कि ''प्रयोगशील............. काव्य पिछले काव्य से यथार्थ के प्रति बदली हुई दृष्टि से प्रारम्भ होता है। अभी तक यथार्थ किसी लक्ष्य की ओर उन्मुख था, उसे उद्देश्यगत अर्थात् सत्य रूप में देखने की पद्धति रही थी।........ परन्तु युग जीवन के गहरे संसर्ग (कंसर्न) ने कवि को प्रेरित किया वह उद्देश्य के विभ्रम से अलग यथार्थ को ग्रहण करने का प्रयत्न करे।''[14] नयी कविता को डॉ० रघुवंश ने प्रयोगवाद का ही विकसित रूप माना है। नयी कविता में प्रयोगवाद की प्रवृत्तियाँ ही और विकसित रूप में सामने आती हैं। इसी कारण दोनों अत्यन्त घनिष्ठ रूप से सम्बद्ध हैं। स्वयं उन्हीं के शब्दों में ''नयी कविता अपनी अभिव्यक्ति, प्रेषणीयता तथा उपलब्धि की दृष्टि से प्रयोगशील कविता की आगे की स्थिति है। दोनों में घनिष्ठ सम्बन्ध है, पर ऐतिहासिक दृष्टि से एक दूसरे का विकास हैं।''[15] इसी बात को उन्होंने अपनी एक अन्य कृति में भी स्वीकार किया है– ''जिन मौलिक स्वीकृतियों के आधार पर सत्यान्वेषण के मार्ग पर प्रयोगशील कवि बढ़ा था, नयी कविता की अधिकांश अभिव्यक्ति तथा उपलब्धि उसी पर प्रतिष्ठित है।''[16] इससे प्रकट है कि नयी कविता का विकास प्रयोगवादी भावभूमि पर ही हुआ है। इसके साथ ही डॉ० रघुवंश का यह भी विचार है कि यथार्थ के समग्र चित्रण के कारण नयी कविता का कवि 'सिनिक' हो गया। उसे सुन्दर–असुन्दर, शिव–अशिव, कुत्सित–वर्जित कुछ भी का ध्यान नहीं रहा। उनका कथन है कि – "इस संक्रांति काल में मूल्यों और मर्यादाओं का ऐसा स्खलन और विघटन हुआ है कि कवि के स्वर में अनेक बार निराशा और अवसाद ध्वनित होता है।''[17] मूल्यों

और मर्यादाओं के विघटन को डॉ० रघुवंश युग मूल्यों के अन्वेषण हेतु नितान्त आवश्यक मानते हैं। उनका विचार है कि– ''ऐसा नहीं कि नयी कविता में 'सिनीसिज्म' नहीं है, पर विघटित मूल्यों और विस्थापित व्यक्तियों के युग में इस प्रकार की आस्थाहीनता और उसका आक्रोश आवश्यक है।''[18]

डॉ० रघुवंश 'नई कविता' के दौर में पैदा हुई अनास्थ और निराशा को अपने देश तक ही सीमित न मानकर पूरे विश्व की राजनीति और अर्थनीति की देन मानते हैं। आज का कवि इस विश्वव्यापी पीड़ा तथा वेदना को पहचानता है और उस पर अपने ढंग से प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। डॉ० रघुवंश ने इसे ही 'समग्र यथार्थपरक दृष्टिकोण' कहा है और आधुनिक वैज्ञानिक और बुद्धिवादी दृष्टि को इसके विकास का आधार बताया है। डॉ० रघुवंश ने प्रयोगवादी तथा नयी कविता को ही आधुनिक कविता के रूप मे स्वीकार किया है। उनका मानना है कि एक लम्बे समय से हिन्दी साहित्य में जिस आधुनिक दृष्टिकोण का विकास हो रहा है, उसके मूल में प्रयोगवादी कवियो की अपनी दृष्टि रही है। यह आधुनिक दृष्टिकोण प्रयोगकालीन कवियों की बौद्धिक जागरूकता, आत्मान्वेषण की प्रवृत्ति, वैज्ञानिक दृष्टि और युग के विघटित मूल्यों के प्रति अनास्था में देखी जा सकती है। इस आधुनिकता में डॉ० रघुवंश ने मानव के 'व्यक्ति स्वातन्त्र्य' की भी बात की है। वे इसे सामाजिक नियंत्रण से परे मानते हैं तथा इस पर वर्ग, दल या राष्ट्र की या शक्तिमान नेता के शासन तथा नियंत्रण को उचित नहीं मानते हैं। वे सहज व्यक्तित्व की स्थापना पर बल देते हैं। ऐसा सहज व्यक्तित्व अपनी स्वतन्त्रता के साथ दूसरों की स्वतंत्रता के लिए भी प्रयत्नशील रहेगा। इस समष्टि मानव के विषय में उनका विचार है कि– ''आज का कवि सहज मानव (लघु मानव) की स्थापना करना चाहता है, जो अपनी पूर्ण उपलब्धि में समष्टि को ही सार्थक करता है, वह स्वयं उसी प्रकार स्वतंत्र रहना चाहता है और दूसरों को मुक्त करने में अपनी स्वतंत्रता की सार्थकता मानता है।''[19] वर्ग, शासन तथा दल से स्वतंत्र होने पर व्यक्ति की स्वतंत्रता समाज या राष्ट्र के लिए अहितकर न हो जाये, इस हेतु उन्होंने व्यक्ति में विवेक को आवश्यक माना है। विवेकयुक्त मनुष्य सामाजिक दायित्व से स्वतः ही जुड़ जाता है। उनका विचार है कि– ''मुक्ति के साथ विवेक का प्रश्न भी सन्निहित है। मानव–नियति का निर्देशक युगों से मनुष्य के बाहर की अनेक आध्यात्मिक या सामाजिक शक्तियाँ रही हैं, पर आज का मानव अपनी नियति का दायित्व अपने विवेक पर लेना चाहता है।''[20] विवेक के साथ डॉ०

रघुवंश ने आस्था पर भी बल दिया है। उनका मानना है कि विश्वास के अभाव में मानव समाज तथा कवि दोनों ही मूल पथ से भटककर निराशावादी हो जायेंगे। मनुष्य तथा कवि के भीतर विश्वास ही वह ताकत है, जो उसे संकट में भी सोचने का साहस देती है। आज के समाज के भटकाव का कारण उसका निराशावादी हो जाना है। आशा के द्वारा ही उसमें सुन्दर भविष्य का निर्माण किया जा सकता है। स्वयं उन्हीं के शब्दों में– ''आज की संक्रान्ति में मनुष्य के हाथ से यही विश्वास, आस्था का संबल छूट गया है, इसी कारण वह भटक गया है। यदि मानव–भविष्य की पुनः स्थापना करना है, तो उसे उसके प्रति पुनः आशावान् करना होगा। कवि इस विश्वास को लेकर चलता है कि हमारा आज का मार्ग कितना ही धुंधला हो, पर विवेक साथ देगा और यदि हमारी आस्था न काँपे तो हमारा पथ प्रशस्त है।''[21]

डॉ० रघुवंश ने 'नयी कविता' के शिल्प पर भी विचार किया है। उन्होंने माना है कि कुत्सित तथा असुंदर के चित्रण में नयी कविता कभी–कभी निरर्थक तथा भावहीन भी लगने लगती है, किन्तु इस चित्रण से कवि की समग्र जीवन–दृष्टि का पता लगता है। इस माध्यम से कवि अपनी सामयिक परिस्थितियों से भी जुड़ता है। उनका विचार है कि– ''आधुनिकता के संदर्भ में यह सम्पूर्ण जीवन को आत्मसात करने का आग्रह है और इस प्रकार नया कवि समसामयिकता के दायित्व का निर्वाह सच्चे अर्थों में करता है, क्योंकि वह जीवन की वास्तविक गति के अन्दर से युग के व्यंग्य को अत्यधिक प्रखरता और गहराई के साथ व्यंजित करता है।''[22] विषय का यथातथ्य चित्रण करने के कारण नयी कविता में युग–जीवन का वैषम्य, मनःस्थिति की उलझन तथा वैयक्तिक अनुभूति की तीव्रता विद्यमान है। यही नयी कविता का वैचित्र्य है। डॉ० रघुवंश ने नयी कविता के कुछ कवियों अज्ञेय, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना तथा विपिन अग्रवाल आदि रचनाकारों पर भी विचार किया है। डॉ० रघुवंश ने अज्ञेय को प्रायोगवाद तथा नयी कविता के कवियों में सर्वाधिक सुशिक्षित, संयत, सुसंस्कृत तथा संवेदनशील माना है। उनका मानना है कि अज्ञेय के इसी व्यक्तित्व ने हिन्दी साहित्य को छायावादी शब्दजाल, प्रगतिवादी व्यक्तित्वहीनता तथा छायावादोत्तर भावावेश से मुक्त कर यथार्थ के धरातल पर खड़ा किया। उनका विचार है कि– ''अज्ञेय का सुशिक्षित और सुसंस्कृत मस्तिष्क और संवेदनशील और संयत विद्रोही व्यक्तित्व ही काव्य को छायावादी शब्दजाल,

प्रगतिवादी व्यक्तित्वहीनता तथा उत्तर छायावादी रोमेंटिकों के भावावेश से मुक्त कर युग के यथार्थ से संपृक्त और व्यक्ति की अद्वितीयता और विशिष्टता से सम्पन्न करने में समर्थ हुआ।''[23]

निष्कर्ष – सारतः कहा जा सकता है कि रघुवंश की दृष्टि में समन्वय की चेष्टा है। उन्होंने विभिन्न विरोधी प्रवृत्तियों के बीच निरन्तर समन्वय स्थापित करने की कोशिश की है। यद्यपि उनके जीवन की कठिनाइयाँ किसी भी मनुष्य को असहज करने वाली हैं किन्तु वे इन मुश्किलों से तनिक भी विचलित नहीं हुए और अपने साहित्यिक कर्म से इस बात को सिद्ध भी कर दिया। उनकी आलोचना दृष्टि में अध्ययन की विशालता तथा चिंतन की मौलिकता विद्यमान है। उनकी सूक्ष्म और गहन विश्लेषण क्षमता किसी भी विचार अथवा कृति का सटीक मूल्यांकन मे कारगर साबित हुई है। उनका आलोचना कर्म हिन्दी साहित्य का श्रेष्ठ आलोचना कर्म कहा जा सकता है।

संदर्भ

1. *hi.m.wikipedia.org रघुवंश–(साहित्यकार), अगस्त 16, 2025*
2. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास,राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–314*
3. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास,राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–314*
4. *मधुरेश, हिन्दी आलोचना का विकास, सुमित प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम और द्वितीय संस्करण:2004, पृष्ठ–208*
5. *मधुरेश, हिन्दी आलोचना का विकास, सुमित प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम और द्वितीय संस्करण:2004, पृष्ठ–208*
6. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–308*
7. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–308*
8. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–309*
9. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–309*
10. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–309*

11. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ 317*
12. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ 317*
13. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ 317–318*
14. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ 318*
15. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ 320*
16. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ 320*
17. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–320*
18. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–320*
19. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–323*
20. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–323*
21. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–323*
22. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ–324*
23. *नवल नन्द किशोर, हिन्दी आलोचना का विकास, राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, पहला संस्करण–1981, दूसरी आवृत्ति:2003, पृष्ठ 325*

Paper Received : 07 June, 2025 ***Paper Accepted : 18 June, 2025***

मङ्गलम् - वर्ष 16(02) भाग-XXXI अगस्त 2025
ISSN-0976-8149 पृ. 153-160

परशुरामविक्रमम् महाकाव्य में मानवीय चेतना एवं दार्शनिक चिन्तन

मोहन लाल *

सारांश

परशुरामविक्रमम महाकाव्य में मानवीय संस्कारों की प्रधानता स्पष्ट रूप से स्वीकार की गयी है। प्रत्येक स्थिति में मानवीय संस्कारों का परिपालन अपेक्षित है। संस्कारों का परित्याग करने वालों को हेय कहा गया है। हमारे भारतीय समाज में संस्कारों का विशेष महत्व है। यहाँ पर बच्चे के जन्म से ही उसको संस्कार दिये जाते हैं। जिससे कि वह बड़ा होकर अपना और अपने परिवार एवं देश समाज का नाम रोशन कर सके। परशुराम के चरित्र मे हमें वे सब संस्कार देखने को मिलते हैं। जो कि उनको महान एवं एक आदर्श पुरूष बनाते हैं। डॉ० सुधीकान्त भारद्वाज द्वारा रचित परशुरामविक्रमम् महाकाव्य आधुनिक समय का एक उच्च कोटि का महाकाव्य है। जिसके नायक परशुराम है। यह महाकाव्य मानवीय चेतना और दार्शनिक चिंतन को प्रभावित करता है। जो कि मानव जीवन ओर समाज के लिए उपयोगी है।

***मूल शब्द** :– परशुरामविक्रमम् महाकाव्य, मानवीय चेतना, दार्शनिक चिंतन, राष्ट्रीय चेतना, आश्रम व्यवस्था, संस्कार, आदर्श पुरूष, परित्याग।*

विश्व वाङ्मय में संस्कृत साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इसमें भारतीय संस्कृति और सभ्यता के गुण साक्षात् दिखाई पड़ते हैं।[1] जो मानव जीवन के लिए अमूल्य है। भारतीय संस्कृति की विशेषता अपने आप में महत्वपूर्ण है।[2] उसका संवर्धन संस्कृत साहित्य के अमूल्य योगदान से हुआ है। आचार्य डॉ० सुधीकान्त भारद्वाज द्वारा लिखित **"परशुरामविक्रमम्"** महाकव्य 21वीं सदीं का संस्कृत जैसी देववाणी में विभिन्न सुन्दर गेय छन्दों में निबद्ध गौरवशाली महाकव्य है।[3] साहित्य समाज का दर्पण होता है आधुनिक महाकाव्यों में परशुरामविक्रमम् महाकाव्य भारतीय समाज का दर्पण है। महाकाव्य में भारतीय समाज का अत्यन्त सजीव चित्र प्रस्तुत किया गया है। महाकाव्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि परशुराम के समय में दो प्रमुख जातियाँ थी। आर्य और अनार्य इन दोनों जातियों के कुछ प्रमुख प्रभेद भी थे। इनकी सामाजिक व्यवस्था में काफी अंतर था।[4] आर्यो का समाज वर्णाश्रम पर आधारित था। जबकि अनार्यो

* *शोध छात्र, संस्कृत विभाग, आर्य कन्या पी०जी० कॉलेज, हापुड़, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ*

के समाज में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं थी। आर्य जाति का निवास गंगा सिन्धु का मैदान था। अनार्य दक्षिण के वन प्रदेश में रहते थे। आर्य जाति के प्रभुत्व के अनार्य जाति ने स्वीकार कर लिया था। भारत के दक्षिण भाग में लंकाद्वीप में राक्षस जाति निवास करती थी। जिसकी रीति नीति आर्यों के आचार विचार से सर्वथा भिन्न थी। उस समय मनुष्य का जीवन चार आश्रमों में विभक्त था। 1. ब्रह्मचर्य आश्रम, 2. गृहस्थाश्रम, 3. वानप्रस्थाश्रम, 4. सन्यासाश्रम। जीवन के प्रारम्भिक काल में विद्याभ्यास के लिए ब्रह्मचर्याश्रम की व्यवस्था की गई थी।[5] गृहस्थाश्रम में व्यक्ति विवाह करके संतानोत्पत्ति द्वारा वंशवृद्धि करके मानव जाति के क्रम को अक्षुण्ण बनाता था। उस समय गृहस्थ आश्रम को चारों आश्रमों में सर्वश्रेष्ठ माना जाता था। परशुराम की शिक्षा–दीक्षा एवं तपस्या पूर्ण हो जाने के पश्चात पिता जमदग्नि परशुराम को गृहस्थाश्रम की महत्ता बताते हुए। विवाह के लिए कहते हैं।

"पूर्णस्तवाध्ययनकालविभाग आद्यःकालोऽधुना नियमतो गृहवासयोग्यः।
प्रारब्ध एष एकलाश्रममूलरूपः शिष्टै प्रशंसित इहास्ति सदा गृहस्थः।।[6]

तुम्हारा पहला अध्ययन काल सम्बन्धी विभाग पूरा हो गया है। अब तुम्हारा गृहस्थ, जो सभी आश्रमों का मूल है, में प्रवेश करने का काल प्रारम्भ हो गया है। गृहस्थाश्रम की शिष्टजनों ने सदा प्रशंसा की है। उस समय के समाज में 6 प्रकार के विवाहो का उल्लेख मिलता है। प्रथम प्रकार में कन्या का पिता वर को आमंत्रित करके बिना द्रव्य लिए ही अपनी कन्या का विवाह कर देता था। गांधर्व विवाह का प्रचलन आर्येत्तर जातियों में अधिक था।[7]

परशुराम के समय में स्त्रियों की स्थिति अत्यन्त उदात्त थी। स्त्रियों को पढ़ने, लिखने अपना मत व्यक्त करने युद्ध भूमि में रण कौशल दिखलाने तथा स्वयंमेव अपना पति वरण करने का अधिकार था। फिर भी प्रायः तत्कालीन समाज पति प्रधान ही था। यद्यपि स्त्रियाँ गृहस्वामिनी एवं लक्ष्मी कही जाती थी। तथापि स्त्री के लिए पति की आज्ञा एवं पति सेवा वैदिक आदेश के समान था। इसके बाद भी स्त्रियों की स्वतन्त्रता तथा उनके अधिकारों का पर्याप्त ध्यान रखा जाता था।[8]

परशुरामविक्रमम् महाकाव्य में राजनीतिक व्यवस्था का वर्णन कवि ने भली प्रकार से किया है। उस समय प्रजा राजा को ईश्वर का प्रतिरूप समझती थी और राजा भी प्रजा को अपनी संतान समझता था। इसी काल में राजा ही

सम्पूर्ण राष्ट्र का केन्द्र बिन्दु माना जाता था क्योंकि राजा का मुख्य कार्य प्रजानुरंजन एवं राष्ट्रोन्नयन था। इतना ही नहीं, राजा राष्ट्र के धर्म तथा सत्य का उद्‌भव स्थल था। उस समय के समाज में यह मान्यता थी कि राजा रहित राज्य में किसी भी प्रकार के मंगल या कल्याण की कल्पना नहीं की जाती थी। प्रतिज्ञा पालन को सच्चरित्रता का अभिन्न अंग समझा जाता था सत्यप्रियता तथा प्रतिज्ञा पालन लोगों का महनीय वृत्त समझा जाता था। जो लोग सत्यनिष्ठा एवं प्रतिज्ञा निर्वाह के महानीय व्रत के पालन में सफल होते थे। वही महिमा सम्पन्न समझे जाते थे।

"मान्यं सदा यन्महतां विधानं ह्युक्तं तथैवाप्तजनस्य नित्यम्।
लोके तथापि व्यवहारहेतोः स्पष्टं समेषां पुरतो भवेत तत्।।"[9]

जो महान पुरूषों का विधान होता है वह सदैव मान्य होता है। उसी प्रकार शिष्ट पुरूषों का कथन भी मान्य होता है। परन्तु लोक में व्यवहार के लिए वह सब कुछ सभी के सामने स्पष्ट हो जाना चाहिए। विधान सब के लिए एक होता है। इसलिए जमदग्नि ने परशुराम की परीक्षा भी अन्य शिष्यों का भाँति कराने का निर्णय लिया। जमदग्नि गुरूकुल के कुलपति है। उन्होंने गुरूकुल की परम्परा का निर्वाह करते हुए। सर्वप्रथम विधान के नियमों अनुसार परशुराम की लिखित परीक्षा कराई। तत्पश्चात सबके सामने उसकी प्रयोगात्मक परीक्षा भी हुई। क्योंकि विद्या के सदा प्रयोग की अपेक्षा होती है।[10] महाकाव्य के सप्तदश सर्ग में परशुराम ने सभा में नीतिपूर्वक कहा कि अर्जुन राष्ट्र का रक्षक होने के लिए पूर्णतया योग्य है। सभी राज्यों के राजाओं की सहमति से अर्जुन का तिलक कर दिया जाए ताकि सम्पूर्ण आर्य भारत एक छत्र शासन के अन्तर्गत आ जाए।

"तिलकं क्रियतां मत्या सर्वेषां राज्यभूभृताम्।
एकच्छत्रे समागच्छेत् सम्पूर्णमार्यभारतम्।।"[11]

इससे सभी लोगों के द्वारा क्षेत्रीय भेद से मुक्त होकर राष्ट्रीय एकता की भावना धारण की जाएगी। इसके आगे परशुराम कहते है कि विधान का निर्माण लोक का उपकार करने वाले धर्म के ज्ञाता महामुनि कश्यप की अध्यक्षता में होना चाहिए। परन्तु मेरे मन बहुत बड़ी शंका है कि कही सम्राट निरंकुश होकर प्रजा को दुख देने वाला न हो जाए। कार्तवीर्य की जो कथा

प्रसिद्ध है। उनमें सदैव प्रजाजन को पीड़ा पहुँचाने की बात सुनी जाती है। उसके अपने लोग तथा उस पर आश्रित दुष्ट राजा सम्राट का भय दिखाकर अत्याचार करते हैं।

राजा का पहला धर्म है। प्रजा पालन करना उसके अधार्मिक हो जाने पर राष्ट्र की जठ की समाप्त हो जाती है। पहले वह दात्तत्रेय की शिक्षा से निश्चित रूप से धार्मिक था परन्तु अब बल की अधिकता के कारण अहंकारी हो गया है। इस लिए भारत के अधिपति के पद पर अभिषेक से पहले सम्राट प्रजा के कष्ट हरने का आश्वासन दे। तपस्वी राजा अर्जुन ने उठकर और दत्तात्रेय गुरू से आज्ञा लेकर प्रजा को प्रसन्न करने वाले यह वचन बोले—मैं यह मानता हूँ कि प्रजा का पालन ही राजा का परम धर्म है। धर्म की वृद्धि के लिए प्रयत्न करता हुआ मैं अपने धर्म का पालन करूँगा यदि मेरा कोई सम्बन्धी पाप का आचरण करता है। तो में उसे निश्चित रूप से बिना किसी पक्षपात के धर्म के अनुसार दण्ड दूँगा।

"सम्बन्धी यदि कश्चिन्में पापाचारं करोति वे।
दण्डं दास्यामि नूनं तं यथाधर्मम भेदतः।।[12]

ऐसा आश्वासन देकर राजा विनीत की तरह चुपचाप बैठ गया। तालियों की ध्वनि के समूह से पूरा सदन गूंज उठा। महाकाव्य में भारतीय राजनीति व्यवस्था का सजीव चित्रण किया गया है। सम्पूर्ण राष्ट्र को एक धागे में बांधने का अथक प्रयास परशुराम ने किया है एवं सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए विधान का निर्माण किया गया है।[13]

संस्कृत भाषा और साहित्य हमारे आर्य देश की वह सम्पदा है। जिसके बल पर हम संसार की समस्त सभ्य जातियों के समक्ष उन्नत मस्तक होकर खड़े हो सकते है। जिस संस्कृत शाश्वत ग्रन्थ रत्न वेद आर्य जाति के इतिहास में प्राप्त प्राचीनतम लेख है।[14] आधुनिक संस्कृत साहित्य में डॉ० सुधीकान्त भारद्वाज द्वारा रचित परशुरामविक्रमम् महाकाव्यम् एक उत्तम कोटि के महाकाव्य है। जिसमें मानवीय संस्कारों का गुरू भक्ति, पितृ भक्ति एवं राष्ट्र प्रेम का वर्णन किया गया है। महाकाव्य में नायक वीर पराक्रमी पराशुराम के चरित्र से मानवीय संस्कारों की शिक्षा मिलती है। परशुराम ने धर्म का पालन करते हुए

मानवता की रक्षा की और सम्पूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बांधा है। धर्म के बिना नैतिक आदर्शों की रक्षा नहीं हो सकती। अतः स्वधर्म का परिपालन अत्यावश्यक है। महाभारत में भी कहा गया है।

"प्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।।[15]

महाकाव्य के द्वितीय सर्ग में गुरूकुल में पिता जमदग्नि द्वारा परशुराम का लालन–पालन सभी वैदिक संस्कारों से किया जाता हैं और साथ ही उन्हें शिक्षा प्रधान की गयी। परशुराम के चरित्र विकास में पिता जमदग्नि द्वारा दिये गये। संस्कारों की निरन्तर साधना एवं संरक्षण देखने को मिलते हैं। परशुराम को अपने माता–पिता की ओर से जो संस्कार प्राप्त हुए हैं। वे परशुराम के चरित्र को उदात्त बनाते हैं। परशुराम के पिता जमदग्नि ने यह देखा कि उसका पुत्र पढ़ना चाहता है। तो उन्होंने विधि पूर्वक गुरूकुल के आचार और नियम के अनुसार उसका **"उपनयन"** संस्कार किया और उसे अध्ययन के लिए प्रवेश दे दिया।

"दृष्ट्वा शिशिक्षां कुलपः सुतस्य प्रावेश्यत् तं विधिना गुणज्ञः।
कृत्वोपनीतं नियमेन पुत्रं ह्याचाररीत्याध्ययनाय तत्र।।"[16]

पिता जमदग्नि ने गुरूकुल के कुलपति होते हुए भी अपने वात्सल्य को त्यागकर व्यवहार में कठोर बनकर अपने पुत्र को शास्त्र एवं संस्कारों और मानवीय धर्म की शिक्षा दी। परशुराम को गुरू के मुख से उच्चारण होते ही स्वतः प्रेरणा से प्रकट हुए हृदय में विद्यमान वेद स्मरण हो गये। गुरूजनों के नियम बड़े कठोर थे तथा गुरूकुल की दिनचर्या निश्चित और दृढ़ थी। फिर भी अवकाशश के समय में भी समय निकालकर वह अभ्यास करता था। परशुराम को वेद वेदाङों एवं शास्त्र को ज्ञान गुरू द्वारा दिया गया।

"वेदान् स साङ्गानधिगम्य शीघ्रं चान्वीक्षिकी राजनयं समग्रम्।
सर्वाः स्मृतीश्चापि पुराणराशिं जग्राह साक्षादिव दैवत्यागात्।"[17]

उसने वेदों का अंगों सहित शीघ्र अध्ययन कर लिया तर्क शास्त्र राजनीति शास्त्र, स्मृति ग्रंथों तथा पुराणों का ज्ञान प्राप्त कर लिया।

परशुराम अपने संस्कारों एवं कर्त्तव्यां से एक महान राष्ट्रनायक के रूप में हमारे समक्ष है। परशुराम की राष्ट्र भक्ति देखकर और राष्ट्र के लिए समर्पित अपना पूरा आजीवन ब्रह्मचर्य में व्यतीत कर देना एक आदर्श है। प्राचीन समय से ही ऋषि मुनियों की तपस्या एवं ज्ञान के कारण संस्कारों के द्वारा एक व्यवस्था बनाई गयी है। जिसको अपनाकर व्यक्ति अपने जीवन सरल एवं खुद को महान बना लेता है। परशुरामविक्रमम् महाकाव्य में हमें देखने को मिलता है कि परशुराम एक राष्ट्रभक्त महान योद्धा है। जो कि आज की युवा पीढ़ी के लिए आदर्श है।[18] वैदिक वाङ्मय में कहा गया है कि राजा की शक्ति प्रजा में निहित है। प्रजा को राजा को अनुकूल बनाने की प्रक्रिया यज्ञ द्वारा सम्पन्न की जाती थी।[19]

राष्ट्रीय भावना सदा ही जनता के धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक राजनैतिक सभी दृष्टिकोणों को प्रभावित करती है। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में जब सर्वत्र ईर्ष्या द्वेष, कलह वैमनस्य वैमत्य, असहिष्णुता, अराजकता व्याप्त है। इसलिए राष्ट्रीय भावना की प्रासंगिकता और भी अधिक हो जाती है। डॉ० सुधीकान्त भारद्वाज द्वारा रचित परशुरामविक्रमम् महाकाव्य में राष्ट्रीय भावना की अभिव्यक्ति की गयी है। महाकाव्य का नायक परशुराम राष्ट्र की समृद्धि एवं सुख शान्ति के लिए अपना सबकुछ समर्पित कर देता है। राष्ट्र की रक्षा करना राजा का परम कर्त्तव्य माना गया है। राजा से प्रार्थना की गई है कि वह मातृभूमि की रक्षा करे देश द्रोहियों को पनपने न दे अपने अस्त्र शस्त्रों की धार पैनी रखे अपने बाहुबल को बढ़ाता रहे, अपनी सेना में वीर सैनिक की नियुक्ति करे। महाकाव्य के सप्तदश सर्ग परशुराम के द्वारा सभा का आयोजन किया जाता है और सम्पूर्ण राष्ट्र को एक सूत्र में बांधने के लिए एक सुयोग्य राजा का चुनाव किया जाता है और सम्पूर्ण राष्ट्र के लिए एक समान विधान बनाया जाता है।[20] परशुराम भी सम्पूर्ण राष्ट्र को एक छत्र करने के लिए दुष्ट राजाओं का वध कर देते हैं और सम्पूर्ण पृथ्वी को 21 बार क्षत्रिय विहीन कर देता है। परशुराम के अन्दर जो राष्ट्र प्रेम का भावना है। उसके बीच वह किसी को भी नहीं आने देता है। माता–पिता के आग्रह करने पर भी वह विवाह से इंकार कर देते है। महाकाव्य की नायिका पद्मेश्वरी जो कि मन ही मन परशुराम को चाहती है। सुन्दर एवं बहादुर राजकुमारी है। जिसको पाने के

लिए अनेक राजा प्रयत्न करते हैं लेकिन परशुराम पद्मेश्वरी से भी विवाह के लिए मना कर देता है और निष्कपट भाव से राष्ट्र की सेवा करने के लिए विश्वभ्रमण यात्रा पर निकल जाता है। महाकाव्य में कवि ने राष्ट्रीय भावना के प्रति संवेदनशीलता दिखाई है। उस समय प्रजारंजन ही राजा के जीवन का मुख्य उद्देश्य था। अपनी संस्कृति की रक्षा करना भी राष्ट्रीय भावना ही है। राष्ट्र भक्ति से ओतप्रोत यह महाकाव्य आज भी युवा पीढ़ी के लिए एक प्रेरणादायक महाकाव्य है। जिससे जनता में राष्ट्रीय चेतना का विकास होगा।

संदर्भ

1. *संस्कृत साहित्य का इतिहास – आचार्य बलदेव उपाध्याय शारदा संस्थान वाराणसी दशम संस्करण 1978, पृ० सं० 17*
2. *संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास – डॉ० राधावल्लभ त्रिपाठी – चौखम्बा सुभारती प्रकाशन वाराणसी, 1974, पृ० सं० 85*
3. *परशुरामविक्रमम् महाकाव्यम् – डॉ० सुधीकान्त भारद्वाज कल्पः भारद्वाज पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली वर्ष 2011 ISBN - 978.9384741.31.0 पृ० सं० 5*
4. *परशुरामोदयम् महाकाव्यम् – डॉ० सुधीकान्त भारद्वाज कल्पः देववाणी परिषद् दिल्ली 2009 ISBN - 978.81.90946.322 पृ० सं० 8*
5. *संस्कृत वाङ्मय विमर्श – डॉ० भगवती लाल राजपुरोहित बांके बिहारी प्रकाशन आगरा, 1976, पृ० सं० 85*
6. *परशुरामविक्रमम् महाकाव्य 5/7*
7. *संस्कृत काव्यशास्त्र का इतिहास – पी०वी० काणे मोतीलाल बनारसीदास, 1966, पृ० सं० 118*
8. *रामायण – श्री चिन्न स्वामी शास्त्री – मद्रास 1985, पृ० सं० 278*
9. *परशुरामविक्रमम् महाकाव्य 2/44*
10. *संस्कृत महाकाव्य की परम्परा – डॉ० केशवराव मुसल गाँवकर चौखम्बा संस्कृत सीरीज ऑफिस, वाराणसी, 1995, पृ० सं० 62*
11. *परशुरामविक्रमम् महाकाव्य 17/63*
12. *परशुरामविक्रमम् महाकाव्य 17/76*
13. *परशुरामविक्रमम् महाकाव्य पृ० सं० 55*
14. *संस्कृत साहित्य का इतिहास – डॉ० बलदेव उपाध्याय शारदा प्रकाशन संस्थान, रवीन्द्रपुरी दुर्गा कुण्ड वाराणसी, 1998, पृ० सं० 117*
15. *श्रीमद्भगवदगीता 3/35*

16. परशुरामविक्रमम् महाकाव्य 4/35

17. परशुरामविक्रमम् महाकाव्य 2/15

18. भारतीय काव्यशास्त्र की भूमिका– डॉ० नगेन्द्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली, 1963, पृ०सं० 55

19. भारतीय राजनीति विज्ञान, शोध पत्रिका, अंक द्वितीय, जुलाई–दिसम्बर 2021, पृ०सं० 179

20. परशुरामविक्रमम् महाकाव्य प्रस्तावना पृ०सं० 5

Paper Received : 10 July., 2025 ***Paper Accepted : 29 July, 2025***

Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences

Application for Membership

website:www.mangalamallahabad.com

PHOTO

Membership ID. No.- ....

(For Official Use)

1. Name (with title, e.g. Dr/Prof./Mr./Ms.) 2. Male/Female

2. Designation and Address-(If retired, Last address)

3. Mailing/Permanent Address-

4. Telephone (With STD code)-

Office:................................ Residence:.............................

Mobile No.:........................ E-Mail :..................................

Fax No. :.............................

5. Type Of Membership

One Year :- Rs. 2000/- Three Year :- Rs. 5000/- Life Membership* :- Year:- Rs. 10,000/-

(*For Ten Year's)

New you may deposit the Membership fee directly in Maglam International Journal of Humanities & Social Scial Sciences (ISSN : 0976-8149) Account as per Following details :-

Name of Bank : State Bank of India Prayagraj Branch : Civil Lines Prayagraj
Account Holder : Manglam Sewa Samiti, Prayagraj A/c No. : 65024854963
IFC Code : SBIN 0018245 MICR Code : 211007003

Please return this form to

Dr. Dinkar Tripathi

Editor : Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences

463/359G-2 Shivam Apartment, New Mumfordganj, Prayagraj(U.P.)- India, 211002

website:www.mangalamallahabad.com

e-mail : drdinkartripathi@gmail.com

Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences
Subscription Order Form
website:www.mangalamallahabad.com

1. Name :..
2. Address : ....
   ....
   Tel./ Mabile No. .... e-mail ....
3. Life Membership of Manglam Sewa Samiti- Yes/No (If Yes then I.D. No.....................)
4. Tpe of Subscription : Individual / Institon
5. Period of Subscription : Annual / Three year's / Life time*
6. Number of Copies Subscription : ....

Dear Editor,

Kindly acknowledge the receipt of my Subscription and staet sending the issue (s) of Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences (ISSN-0976-8149) at follwing Aeddres.

....
....
....

The Subscription rates ars sa Follow : w.e.f. 31.08.21\012

India (Rs.)	Members of Manglam Sewa Samiti	Individuals	Institutions
Single Copy	Rs. 300/-	Rs. 600/-	Rs. 750/-
Anaual Copy	Rs. 500/-	Rs. 1100/-	Rs. 1500/-
Three Copy	Rs. 1500/-	Rs. 8000/-	Rs. 4500/-
Life time*	Rs. 500/-	Rs. 1100/-	Rs. 10,000/-
OTHER COUNTRIES	**Members of Sewa Samiti**	**Individuals**	**Institutions**
Single Copy	$ 65	$ 80	$ 120
Anaual Copy	$ 120	$ 150	$ 240
Three Copy	$ 360	$ 430	$ 720
Life time*	$ 3000	$ 5000	$ 10,000

(*For Ten Year's)

New you may deposit the Membership fee directly in Maglam International Journal of Humanities & Social Scial Sciences (ISSN : 0976-8149) Account as per Following details :-

Name of Bank : State Bank of India Prayagraj Branch : Civil Lines Prayagraj
Account Holder : Manglam Sewa Samiti, Prayagraj A/c No. : 65024854963
IFC Code : SBIN 0018245 MICR Code : 211007003

Please return this form to

Dr. Dinkar Tripathi

Editor : Manglam International Journal of Humanities & Social Sciences
463/359G-2 Shivam Apartment, New Mumfordganj, Prayagraj (U.P.)- India, 211002
website:www.mangalamallahabad.com
e-mail : drdinkartripathi@gmail.com

Instruction for Research Paper's

- Reserach Papers are Invited Only in Hindi, Sanskrit and English with a Declaration of being Original and unpublished ,work.
- The Paper Must be Neaty Typed in 14 Point Size of KrutiDav-010/ Times New Roman on A4 Size Paper having 1.25 inch margin of evey side with full Residential & Offical Address Mobile No. and email.
- The Research Paper Should have the Maximum Limit of 2000 Words. It can be returned if no Summary (Maximum in 150 Words) and referenace are attached.
- Research Paper will be Published after the approval of Editorial board.
- Author Should give the References in this manner
  for Articles- Dr. Gopal Prasad, Economic Development and Panchayatiraj, Manglam Journal, Allahabad. ISSN-097-8149 Year 02 No-01 February 2011 P.17-18.
  for book- Yogendra Yadav, Electroal Politics in the time of Change:India's third Electoral Sytem 1989-99" Economic & Political Weekly Vol.34 No.34 21-28Aug.1999. P-2330-2399.
- All Right of Published Papers will be Preserved under the Name of Editor.
- Authors may sent two copies of their Books (Under one year of its Publication) for Review in the Journal.
- The Journal will be Sent to all Personal and Institutional Members. Through general post, if some one required post be will have to pay Additional Charge for it.
- Please sent your Research Paper, C.D. and Subscription form/ Membership Form at the address given below.

Editor

Dr. DINKAR TRIPATHI

•

Manglam -Half Yearly Journal
463/359G-2 Shivam Apartment,
New Mumfordganj, Allahabad (U.P.) India
Mobile- +91-7398180008, +91-9044666672
Email- drdinkartripathi@gmail.com

•

Manglam- Half Yearly Journal
1249/1A, Civil Lines-2
(Behind-Raj Hotel) Sultanpur, (U.P.)
Mobile- +91-9532006658